पाक्षिक
सारिका
वर्ष:२१, अंक:२८५
ईरानी
क्रांति-कथा-विशेषांक

रंग चढ़ाना, रंग जमाना: बॉम्बे पेन्ट्स
घर का चेहरा चमकानेवाले ५00 सजीले रंग!
बॉम्बे
पेन्ट्स
एंड एलाइड प्रॉडक्ट्स लिमिटेड
कंगारू पेन्ट्स-
खूब चलें. खूबसूरत लगें
Pentolite
SUPER SYNTHETIC ENAMEL
ARMS-BP-1-140-HN

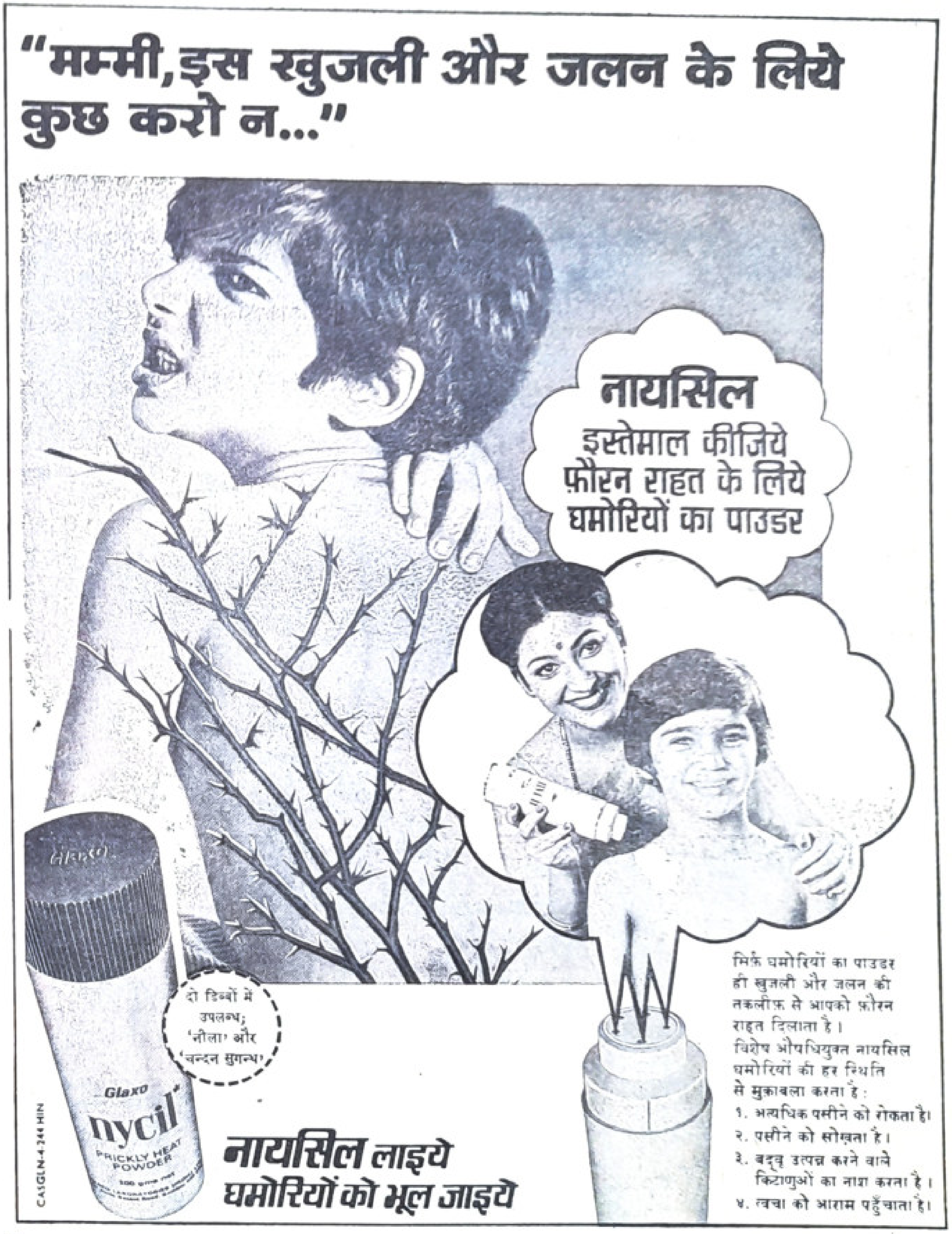
"मम्मी, इस खुजली और जलन के लिये कुछ करो न..."
नायसिल
इस्तेमाल कीजिये
फ़ौरन राहत के लिये
घमोरियों का पाउडर
दो डिब्बों में उपलब्ध; 'नीला' और 'चन्दन सुगन्ध'
Glaxo
nycil
PRICKLY HEAT POWDER
नायसिल लाइये
घमोरियों को भूल जाइये
सिर्फ़ घमोरियों का पाउडर ही खुजली और जलन की तकलीफ़ से आपको फ़ौरन राहत दिलाता है।
विशेष औषधियुक्त नायसिल घमोरियों की हर स्थिति से मुक़ाबला करता है:
१. अत्यधिक पसीने को रोकता है।
२. पसीने को सोखता है।
३. बदबू उत्पन्न करने वाले किटाणुओं का नाश करता है।
४. त्वचा को आराम पहुँचाता है।
CA1GLN-4.244 HIN

साॅय-बैन* लोशन

सुरक्षित, प्रभावकारी, चिपचिपाहट रहित और खुशबूदार जूं नाशक

सॉय-बैन तेजी से असर करता है. रात को सिर की त्वचा पर धीरे-धीरे सॉय-बैन मल दीजिये. सुबह बालों में कंघी कीजिये और मरी हुई जूं और लीख निकाल बाहर कीजिये. अब, बालों को अच्छी तरह धो डालिये. बस हो गया आपकी परेशानी का रातोंरात खात्मा!

सॉय-बैन चिपचिपाहट रहित और खुशबूदार है :
सॉय-बैन में तेल न होने के कारण ये चिपचिपा नहीं है. इसलिये आपके तकिये पर धब्बे भी नहीं छोड़ता. तेजी से बालों में फैलकर आपकी परेशानी जड़ से उखाड़ फेंकता है. इस पर मजे की बात ये कि इसकी लवेन्डर से रची खुशबू सारी रात महकती रहती है.

सॉय बैन पूर्ण रूप से सुरक्षित है :
सॉय-बैन आपके बालों और आपकी सिर की त्वचा को हानि नहीं पहुंचाता यानें इसके इस्तेमाल से न तो बालों के रंग पर असर होता है और न ही बाल झड़ते हैं. और ऐसा क्यों न हो... सॉय-बैन को बनाने वाले भी तो आपके जाने पहचाने 'लेडरली' ही हैं। जो बरसों के अनुसंधान और जांच के बाद ये साबित कर चुके हैं कि सॉय-बैन शतप्रतिशत सुरक्षित और तेज असरकारक दवा है.

Lederle उत्पादन

*अमेरिकन सायनामिड कंपनी का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क

साॅय-बैन* रातों रात जुंओं और लीखों से छुटकारा

Sista's-CYB-964/80 Hin

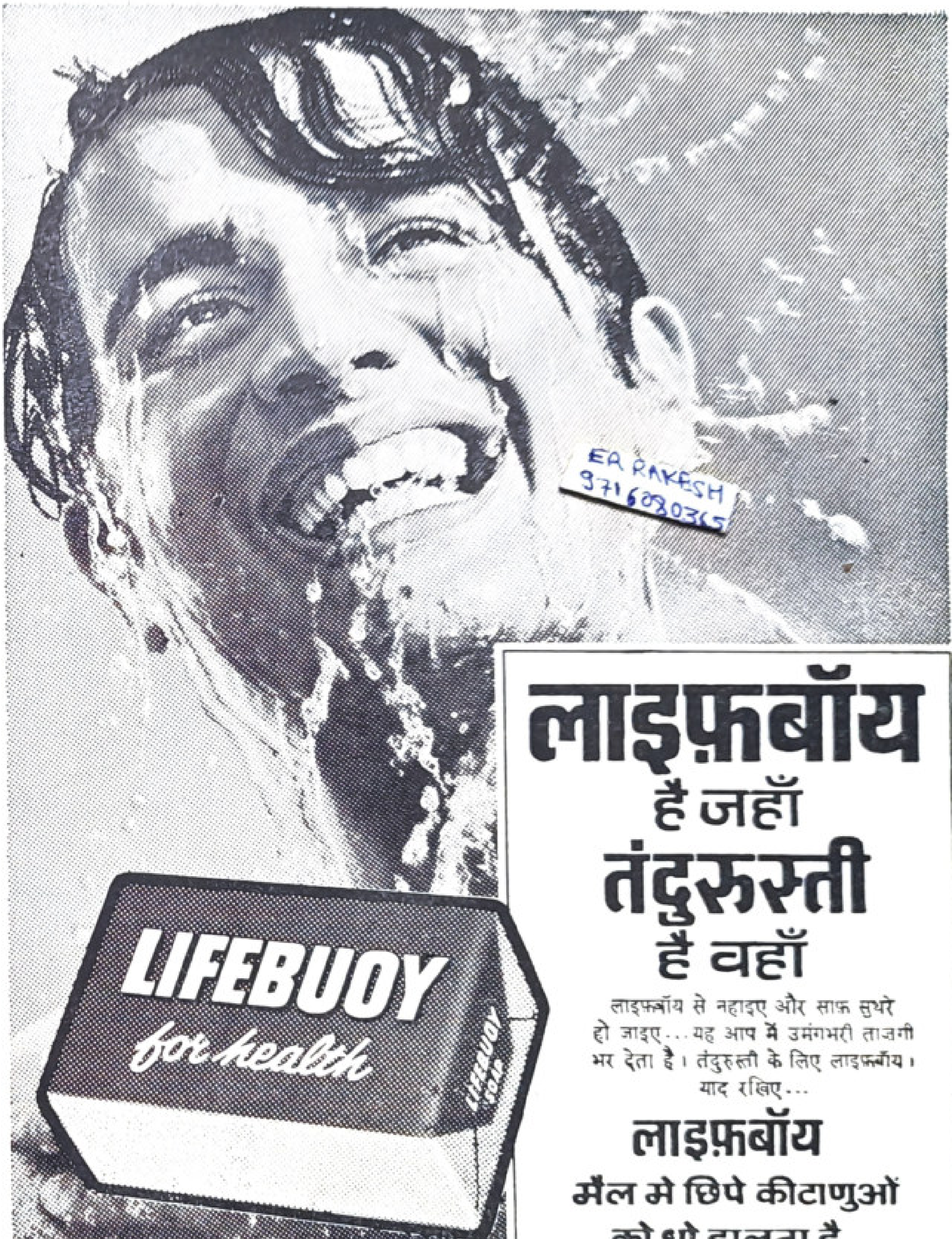

लिंटास-L.75-140 HI

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

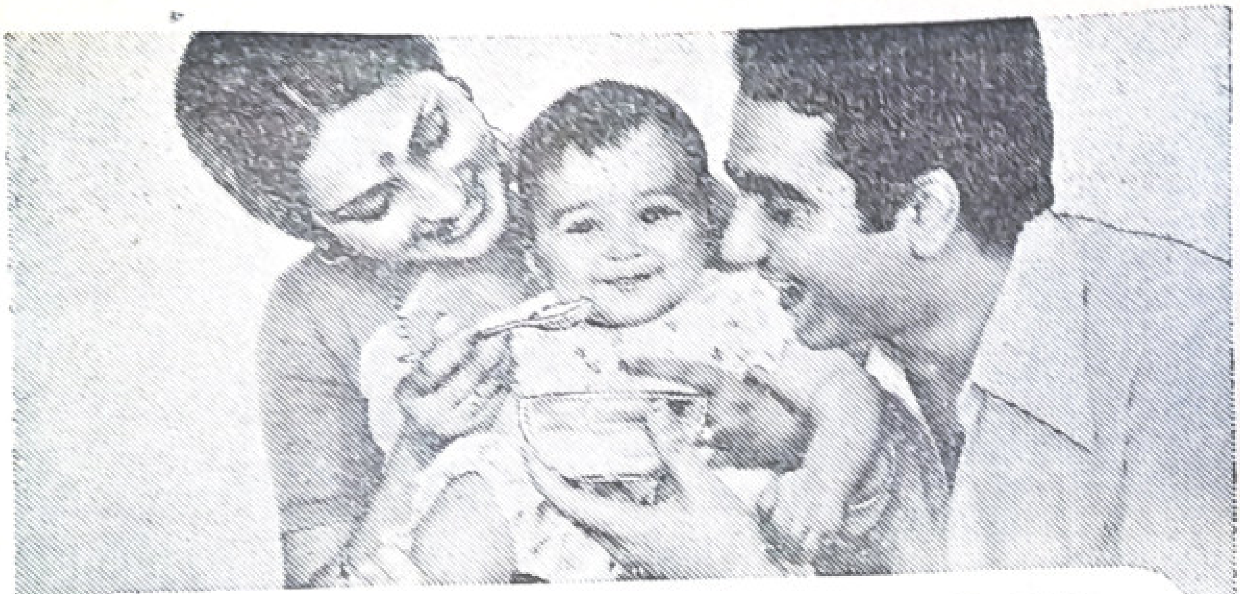

जब मुन्ना ३ महीनेका हो जाए, तो उसे सिर्फ़ दूध ही काफ़ी नहीं है

आपके मुन्ने को चाहिए फ़ैरेक्स

मुन्ने का आदर्श ठोस आहार

३ महीने की उम्र— ठोस आहार का समय

३ महीने का होनेपर, मुन्ने की बढ़ती माँगों के लिए केवल दूध काफ़ी नहीं है। दिन-ब-दिन बढ़ते उसके शरीर को अब दूध से मिलने वाली कॅलोरीज से कहीं अधिक की जरूरत रहती है। साथ ही अब मुन्ने को ठोस आहार की भी जरूरत है जो उसके तरल आहार की मात्रा कम करके थोड़ेमें उसे अधिक कॅलोरीज दे सके और उसको चबाना सिखा सके।

३ महीने की उम्र— अधिक आयरन की आवश्यकता

"बच्चे को ठोस आहार देना शुरू करने का सबसे अच्छा समय है— जब वह २-४ महीने का हो जाए। हालाँकि दूध एक अच्छा आहार है फिर भी आयरन की कमी के कारण अपने आप में पूर्ण आहार नहीं है। इसीलिये बच्चे को आयरनवाले ठोस आहार की जरूरत होती है।"

—डॉ. सुभाष सी. आर्य : "इन्फ़ेंट एण्ड चाइल्ड केअर फ़ॉर दि इण्डियन मदर"

डॉक्टर फ़ैरेक्स की सिफ़ारिश क्यों करते हैं?

फ़ैरेक्स विशेष रीति से बना सुपाच्य आहार है। इसमें कार्बोहाइड्रेटस, फैटस, कॅल्शियम, फ़ॉस्फ़ोरस और विटामिनस हैं और पर्याप्त मात्रा में आयरन भी है। इस प्रकार मुन्ने के सर्वांगीण विकास के लिये फ़ैरेक्स एक आदर्श ठोस आहार है।

मुफ़्त! मुन्ने की प्रथमवर्ष पुस्तिका— नयी माताओं के लिए बच्चे की देखभाल सम्बन्धी सुलभ मार्गदर्शन। ५० पैसे का टिकट भेजकर मंगवाइये।

पो. ऑ. बॉक्स नं. 19119, (FAR 34 T)
बम्बई 400 025

डॉक्टरों की सिफ़ारिश है-फ़ैरेक्स
मुन्ने का आदर्श ठोस आहार-जल्द और सर्वांगीण विकास के लिए

CASGLF-10-203 Hin

ویژہ نامۂ

انقلاب اسلامی

ایران

ईरानी क्रांति-कथा विशेषांक

ईरानी क्रांति इतिहास, साहित्य, संस्कृति, राजनीति, तथा जन- जीवन की लोमहर्षक संघर्ष गाथा, जिसे ईरान की जनता ने यह कहकर ...ाया कि... 'यह भी, यह ... भी और यह भी... ...निवासियों को सुनाना...'

ER RAKESH
9716080365

संपादक :
कन्हैयालाल नंदन
मुख्य उप-संपादक :
अवधनारायण मुद्‌गल
उप-संपादक :
रमेश बत्तरा, सुरेश उनियाल, बलराम, अरुण वर्द्धन
सज्जा : रवि शर्मा

आईना-ए-ईरान

'सारिका' के 'ईरानी क्रांति-कथा विशेषांक' की योजना बनाने के पीछे कोई संयोग नहीं था, बल्कि आपकी तरह हमारे मन में भी बार-बार यह सवाल उठता था कि वहां जिस पहलवी वंश का सितारा कोहेनूर हीरे की चमक से भी ज्यादा तेज लगता था, उसे ईरान की जनता ने अचानक अपने सिर से उतार कैसे फेंका...? आंख झपकते यह हो गया और हम इसे देखते रह गये. इन्कलाब के बाद शाह ने जाते हुए कहा था : "मैं जा रहा हूं, मगर तीन चीजें मेरे साथ जा रही हैं—शांति, मुस्कान और दौलत."

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवीय मूल्यों की बेहतरी के सपने देखने वाला कोई भी इंसान किसी देश के लिए इन तीनों चीजों की अहमियत को अच्छी तरह जानता है. हम सब यह जानने को उत्सुक और चिंतित थे कि क्या सचमुच ईरान से ये तीनों चीजें शाह के साथ चली गयीं. इस सवाल का उत्तर जानना दहकते हुए ज्वालामुखी के मुहाने पर बैठने जैसा जोखिम था. उस जोखिम को उठाने के लिए हमारी एक लेखिका श्रीमती नसिरा शर्मा तैयार थीं और हम उनका उत्तर जानने को बेताब. वे हमारे लिए अपना यह पैगाम छोड़कर अचानक हिंदुस्तान से ईरान चली गयीं कि "अगर 'सारिका' के पाठकों के लिए आपके इन सवालों का जवाब ढूंढ़ पायी तो अपने को खुशकिस्मत मानूंगी. खुदा हाफिज!"

ईरान पर नासिरा जी का लिखा एक रिपोर्ताज हमने 1979 के नववर्ष अंक में 'ज्वालामुखी का निहत्या उद्गार' शीर्षक से छापा था. उस रिपोर्ताज पर हमें अनेक पाठकों ने लिखा था कि "हिंदी में ईरान पर इतने गहरे उतरकर लायी गयी सामग्री कभी कहीं और पढ़ी हो, याद नहीं पड़ रहा".

हमने अपने उस दायित्व को इस बार और गहरे ध्यान रखा है और भरसक यह कोशिश की है कि आज के ईरान की रूह को पहचानने के लिए हमारा यह विशेषांक किसी भी पाठक के लिए एक दोस्त देश का मार्गदर्शक आईना साबित हो सके.

ईरान और भारत की दोस्ती सिर्फ वक्ती सियासत की पेचीदगियों का आदान-प्रदान नहीं, दोनों देशों की रूहों में टंकी हुई आत्मीयता का बरसों पुराना सिलसिला है. फारसी के एक विद्वान ने भारत घूमने के बाद बड़े जज्बाती लहजे में कहा था, "मैं ईरान में अपना देश खोजता रहा और उसके पद-चिन्ह मुझे भारत में मिले. मैं अपने देश का दर्शन, विचार, संस्कृति सब कुछ भारत में पा रहा हूं". उस विद्वान की आंखों में उस

● श्रीमती नासिरा शर्मा

समय पर्सिपोलिस के खंडहर और नालंदा के अवशेष एक साथ झांक रहे थे. वहां की मिनिएचर कलमकारी के रंगों में राजस्थानी और बसोहली शैली के चित्र के रंग तैर रहे थे. ईरान के 'शाहनामा' में भारत से शतरंज जैसे खेल की आमद की दिलचस्प कहानी झांक रही थी. वह विद्वान पंचतंत्र के देश में आया था, जिसके फारसी अनुवाद आज तक उसके देश को पाठ्य पुस्तकों में अपने देश की कहानियों की जगह पढ़ाये जाते हैं. दो संस्कृतियों का यह समानांतर सफर उस दिन और परवान चढ़ा था जब ईरान में अरबों के बढ़ते प्रभाव से घबराकर वहां का भागा हुआ एक जन-समूह गुजरात की धरती पर उतरा था. गुजरात का शासक चिंतित हुआ, जिसे उस समूह के अगुआ ने भांप लिया. उसके मांगने पर भरे दरबार एक गिलास दूध हाजिर किया गया. उनका एक बुजुर्ग शक्कर को घोलते हुए बोला, "महाराज! हम 'जरदुश्ती' हिंदुस्तानियों के साथ दूध में शक्कर की तरह घुलमिलकर रहेंगे." और आज भी भारतवर्ष का पारसी समाज हमारी संस्कृति में घुली हुई उस शक्कर का जीवंत उदाहरण है. ईरान के कुछ सम्मानित घरों में आज भी गांधी और

छपते-छपते—

हम चाहते थे कि ईरान के मौजूदा साहित्य में बहुत अहम मुकाम रखने वाले साहित्यकार जनाब गौहर मुराद और नसीम खाकसार से भी आपका परिचय कराते, लेकिन उनकी सामग्री हमें तब मिली जब बहुत देर हो चुकी थी. लेकिन उसके साथ जो खबर मिली उसका हल्का-सा जिक्र हम लेखक संघ के ताजा हादसे में कर चुके हैं. उस हमले में सईद सुल्तानपुर को पकड़कर जेल में डाल दिया गया है. यानी 10 साल शाह की जेल में काटने के बाद अब फिर जेल में. कुछ लेखकों ने ईरान से हमें लिखा है : "सारिका' **पत्रिका के संपादक को हमारा सलाम! हमारा सबसे प्यारा क्रांतिकारी शायर-लेखक, मित्र फिर जेल में है. इसे यदि आप सब अहमियत दें, तो शायद हमारी यह सरकार उन्हें छोड़ने की सोचे, यही हमारी विनती है आप लोगों से."** यह हम बता दें कि सईद को ईरान में इस्लामी और मार्क्सवादी दोनों तबकों के लोग प्यार करते हैं और हम अपने पाठक-परिवार की ओर से उनकी शीघ्र मुक्ति की कामना करते हैं. **—सं.**

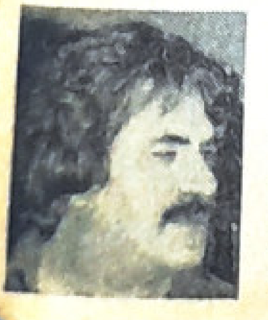

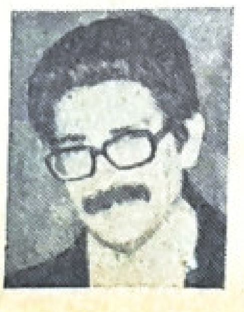

बायें से दायें—
- गौहर मुराद
- नसीम खाकसार
- सईद सुल्तानपुर

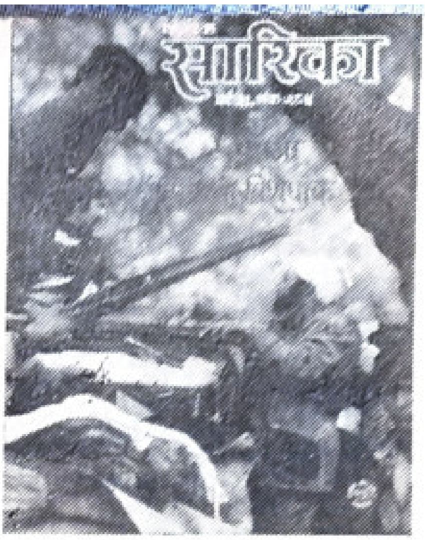

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की जीवंत पाक्षिकी

वर्ष : २१, अंक : २८५

१६ से ३१ मई, १९८१

ईरानी क्रांति-कथा विशेषांक

ER RAKESH
9716080365

नेहरू नाम के बच्चे देखने को मिल जाते हैं. यह सिर्फ जज्बात की रस्म अदायगी नहीं, एक रूह के दोबारा एकसार होकर जीने की ललक का नाम होता है.

हम नासिरा जी के बहुत-बहुत आभारी हैं कि उन्होंने इस अंक के लिए समूची सामग्री जुटाने में लगभग अपना महीनों का श्रम हमें थमाया. उनके साहस, सूझ-बूझ और लगन के हम कायल हैं. हिंदी ही नहीं शायद समूची भारतीय पत्रकारिता के लिए ईरान पर इस तरह की सामग्री जुटा सकना गर्व का विषय है. 'सारिका' उस सारी सामग्री को अपने पाठकों के हाथों में सौंपते हुए खुशी का अनुभव कर रही है.

ईरान में आज सियासत का क्या रंग है, उसकी कोई सूरत देखनी हो, तो वहां के पत्र 'केहान' की 1 मई की एक खबर ही काफी कुछ सोचने को विवश कर देती है कि वहां के (प्रगतिशील) लेखक संघ पर कुछ अनजान लोगों ने छापा मारकर तमाम बरबादी कर दी. कौन हैं ये अनजान छापामार? कहां से आ जाते हैं और क्यों? लेकिन सियासत के रंग पूरे ईरान के रंगों का एक पहलू हैं और हमने ईरानी जनता को हर रंग में देखने की कोशिश की है, जिसमें अल्फाज की दुनिया सबसे अहम मकाम रखती है.

अगर यह अंक आपकी जिज्ञासाओं को शांत करने और ईरान की जनता को नजदीक से समझने में आपकी कुछ भी मदद कर सका, तो हम अपने भी श्रम को सार्थक समझेंगे.

■ संपादक

कहानियां

20. घेराव : सईद हुसैन मीर कासमी
22. सितार : जलाल आल अहमद
24. काली छोटी मछली: समद बहरंगी
35. सुलगता खून : नादिर इब्राहिमी
47. खूनी ताने-बाने : इब्राहिम मोतामद नेजाद
52. दर्द बे-अंदाज : शहरजाद
60. लाल ताल : दाखिश कारगर
63. कातिल : जमाल मीर सादकी

लघुकथाएं

21. कुंजी : अब्बास मोहन दूस्त
27. जमाने की मांग : म. द. जोहरा
34. इन्कलाब के दुश्मन: मेहरी चहलतन
36. वतन : क. खुसरू
65. चचा ने कहा था : अब्बास हकीम

कविताएं

54. गुनाह : फरोग फर्रुख जाद
65. लहर : मर्जियेह अहमदी ओस्कोई
68. तीन कविताएं : अहमद शामलू

साक्षात्कार

55. ये जो बड़े-बड़े हैं, क्या सोचते खड़े हैं?: ईरान के प्रधान मंत्री मुहम्मद अली रजई, संसदअध्यक्ष हाशमी रफतसनजानी, इस्लामी दल के अध्यक्ष आयतउल्लाह तथा इस्लामी अदालत के जज मौसवी तवरीजो से मुलाकात.
66. क्रांति आखिर कहां से शुरू होगी? —स्वयं सिद्ध क्रांतिकारी लेखक अहमद शामलू से लंबी बातचीत.

रिपोर्ताज

12. रिपोर्ताज : ऐसे जियो याद रहे आसमां तले
19. क्या दीवारों के मुंह भी होते हैं?
31. परिचर्चा : जनता, तुम क्या सोचती हो?
40. 444 जख्मों के टांके और एक डायरी के चंद पन्ने.
44. हम पर क्या-क्या गुजरी है?
51. कानूने पिजिश्की : जहां मुर्दे खिलखिलाते हैं!
59. समझेगा कौन यहां?, हम थके तो नहीं मगर. . .

अन्य आकर्षण

8. आईना-ए-ईरान
10. पाठकों का पन्ना
39. सुर्खियां

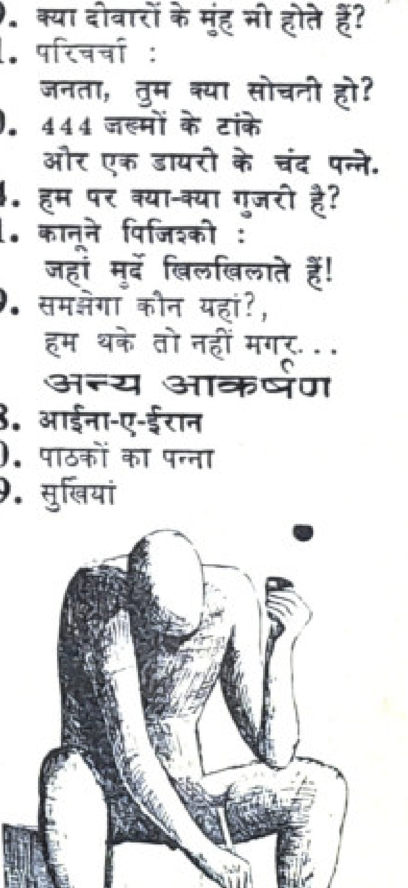

चारित्रिक सुगंध की फुलवारी

'सारिका' का संस्मरण विशेषांक—अपने ढंग का अद्वितीय बन पड़ा है. यह चारित्रिक सुगंध की फुलवारी से सबका मन मोह लेने की अद्भुत क्षमता रखता है. इतना रोचक कि एक भी रचना छोड़ नहीं पाया. **सुमनजी, नरेश मेहता, अमरकांत, भीष्म साहनी**, और **गंगाधर गाडगील** के संस्मरण मन को भिगो जाते हैं. मेरी बधाइयां स्वीकारो.

▣ **रामनारायण उपाध्याय, ब्राह्मणपुरी खंडवा (म. प्र.)**

पाठकों का महाभोज

मैंने न 'हंस' का 'आत्मकथा विशेषांक' देखा है और न 'ज्ञानोदय' का 'संस्मरण विशेषांक' ही.

'सारिका' का 'संस्मरण विशेषांक-1' देखकर बड़ी खुशी हुई, जिसके लिए बधाइयां स्वीकार करें. सभी सामग्रियां बहुत ही लाजवाब हैं. कथा-कहानियों से बढ़कर संस्मरणों और आपबीतियों में जो सच्चाई और यथार्थ की गहराई होती है, वह पूरे अंक को महका गयी है. कितने ही जाने-अनजाने व्यक्तित्व, कितनी ही जानी-अनजानी घटनाएं, कितनी ही हकीकतें—बहुत ही अनूठा आयोजन किया है आपने. साहित्य की तथाकथित कृत्रिमता से दूर आपने 'सारिका' के पाठकों को जो 'महाभोज' दिया है उसके लिए हम आपके प्रति बड़े कृतज्ञ रहेंगे.

पर हां, आपने कई ईमानदार रचनाकारों व व्यक्तित्वों को जाने या अनजाने में अवश्य ही छोड़ दिया है, जो अपने बढ़िया संस्मरण दे सकते थे. संस्मरण विशेषांक-2 के विज्ञापन में भी वे नाम नहीं दिखे, जिनकी प्रतीक्षा थी.

▣ **जीवन मलाबारी, कालिकट (केरल)**

पाठकों का पन्ना

मधुबन हलवाई, जो निराला जी के मुष्टि-प्रहार के बावजूद आज भी जिंदा है!

संस्मरणों के संस्मरणों का संस्मरण

'सारिका' का संस्मरण विशेषांक आदि से अंत तक एक ही बैठक में सांस रोक पढ़ गया. आदरणीय 'सुमन' जी के निराला संस्मरण, डा. बरसाने लाल चतुर्वेदी, अमरकांत, नरेश मेहता, डगलस कोलियर, कैलाश बाजपेयी, हरिशंकर परसाई, रवींद्रनाथ त्यागी, भारती जी, माखनलाल चतुर्वेदी, योगराज थानी, कर्ण सिंह, स्टीफन ज्वाइग तथा हिल्दा दोब्रोवल्सका के संस्मरण कई बार पढ़ने को विवश करते हैं. सभी को कोटिशः बधाई.

डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' उन्नाव की माटी में जन्मे हैं. 'सुमन' जी के उन्नाव प्रवास पर हुई अनेक साहित्यिक गोष्ठियों में देश के प्रमुख साहित्यकारों, विशेषकर महाप्राण निराला जी के अनेक दुर्लभ एवं अविस्मरणीय संस्मरण उनसे सुनने को मिले हैं.

विगत वर्ष उन्नाव के कुछ साहित्य प्रेमी मित्रों ने मेरे सहयोग से उन्नाव निवासी ज्ञात-अज्ञात साहित्यकारों की प्रकाशित व अप्रकाशित रचनाओं की एक त्रिदिवसीय प्रदर्शनी आयोजित की थी. उस अभियान में गांव-गांव की खाक छानकर मैंने महत्त्वपूर्ण पांडुलिपियों की खोज भी की थी. उसी बीच 'निराला गली' स्थित एक हलवाई ने निराला जी पर क्रोध प्रकट करते हुए एक संस्मरण सुनाया था—जिसे अविकल रूप से उद्धृत कर रहा हूं.

बात उन दिनों की है जब उन्नाव में 'युगमंदिर' प्रकाशन की स्थापना हुई थी. महाप्राण निराला श्रीमती सुमित्राकुमारी सिन्हा के आवास में रहते थे. निराला जी अपनी फाकेमस्ती एवं औघड़ दान के लिए प्रख्यात थे. वे मिठाई खाने के विशेष शौकीन थे. घूम-घामकर आवास जगन्नाथगंज में वापस आते समय कचौड़ी गली की प्रसिद्ध मिठाई की दुकान पर मिठाई अवश्य खाते थे. प्रायः रुपये अग्रिम दे दिया करते थे, और हिसाब-किताब चलता रहता था.

एक बार की बात है कि निराला जी ने हलवाई को सौ रुपये अग्रिम दे दिये और मिठाई खाते रहे. एक दिन हलवाई ने मिठाई देने के बाद निराला जी को टोका, 'पंडित जी! आज से डेढ़ रुपया हमार आप पर चढ़िगा है'. बस फिर क्या था—निराला जी को क्रोध आ गया. क्षण भर में ही निराला जी उसकी छाती पर घुटना रखे नजर आये. गंभीर गर्जन स्वर में बोले—'मेरे सौ रुपये एडवांस जमा रहे, तब कोई बात नहीं थी. . .और तूने सिर्फ डेढ़ रुपये पर मुझे टोक दिया.' और उस पर मुष्टि प्रहार चालू कर दिया. तभी पास-पड़ोस के लोग एकत्र हो गये और निराला जी को किसी प्रकार मनाया.

कालांतर में निराला जी के निधन के बाद जब भी कोई उस हलवाई से निराला की प्रशंसा या चर्चा करता है, तो वह क्रोध की मुद्रा में कहता है—'तुम सब जने मानो महापरान निराला, हमरी निगाह मां तो वो गुंडा रहे.डेढ़ रुपया के पाछे हमको गिराय कै मारेसि'.

निराला जी के मुष्टि प्रहार के बावजूद वह हलवाई आज भी जिंदा है.

▣ **राजेंद्र मिश्र, उन्नाव**

निराला जी की तंद्रा और भारती जी

यह अंक मेरे मानस में आनंद भर गया. 'शिमला का स्मरणीय साहित्य सम्मेलन (1938) और निराला' इतिहास की एक अप्रतिम रचना साबित होगी. सुमनजी को हार्दिक धन्यवाद. तथा भारती जी ने पूछा—'निबंध का शीर्षक क्या है?' ये दोनों रचनाएं संयोग से 1954-55 के प्रयाग परिवेश की याद दिला गयीं. इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पढ़ा करते थे. कृष्णकांत और मैं 'पनघट' पत्रिका निकालते थे. भारती जी के पास अतरसुइया से हम लोग स्पेनिश कविता का अनुवाद लाये और पनघट में प्रथम स्थान पर छापा. पत्रिका लगभग तैयार हुई तो दारागंज निरालाजी के पास भागे गये. वह लेटे हुए थे. उन्हें पत्रिका दी, आशीष के हेतु प्रार्थना की. पत्रिका उन्होंने देखी और भारती जी की कविता निरालाजी ने पूरी पढ़ी, फिर बोले "भारती... हिंदी का ग्रेट जीनियस..." वे कुछ और बुदबुदाते रहे अंग्रेजी में और फिर शांत होकर तंद्रा में चले गये थे. हम लोग उत्फुल्ल होकर वहां से चले गये थे. सोचा भारती जी से चर्चा की जाये. लेकिन नमस्ते... नमस्कार के अलावा कभी हिम्मत न पड़ी. इस विशेषांक ने मुझे शुभ अवसर दिया, अवचेतन में दबी पड़ी पीड़ा को मुखरित करने का.

'एक थी श्यामली' और 'लेखक का कमरा', 'दान', 'जैसा दिखो, वैसा लिखो', 'मेरी पहली नौकरी' आदि रचनाएं हृदय को छू गयी हैं. 'यादें हैं यादों का क्या' किस कदर समय-सत्य और अंतस् के ऋत को उद्घाटित करती है. शेष संस्मरण भी हृदय को बांधे रखते हैं. कुछ दुर्लभ चित्र देकर आपने हम लोगों का बड़ा उपकार किया है.

■ **श्री बिहारी लाल बबेले, ललितपुर**

ER RAKESH
9716080365

बधाई तो हल्की चीज है

दोनों संस्मरण विशेषांक वास्तव में धरोहर हैं. खूब जुटाया है तथा एक से अनेक प्रसंग हिलाने, डुलाने, रिझाने और मोहने के लिए गुलदस्ते के समान सजाये गये हैं. बधाई तो बड़ी हल्की चीज है, क्या कहूं समझ नहीं पाता.

■ **शंकर दयाल सिंह, पटना**

राजक्षमा बनाम पाठकक्षमा

पाब्लो नेरूदा (सारिका, 1-15 अप्रैल, पृ.23) क्षम्य है क्योंकि वे भारतीय नहीं हैं. परंतु आपने यह गलत तथ्य कैसे छपने दिया कि नेताजी पर मुकदमा चला व मृत्युदंड की सजा दी गयी. और नेहरूजी ने उन्हें राजक्षमा दिलवायी. यदि राजक्षमा प्राप्त कर नेताजी लोकप्रिय नेता बने होते, तो भारतीय स्वतंत्रता युद्ध की सारी कहानी ही झूठी है. भारतीय पत्रिका में ऐसा छपे तो राजक्षमा भले मिल जाये, पाठकक्षमा नहीं मिल सकती.

■ **सत्येंद्रनाथ सरकार, दिल्ली**

मानवीय राग का सेतुबंध

मनुष्य दुनिया का एक अद्भुत प्राणी सिर्फ इस माने में है (और-और बातें छोड़ भी दें तो) कि वह स्मृतियों में जीता है. आपने संस्मरण विशेषांक निकालकर बड़ा प्रशंसाई प्रयास किया है. मुंशी, मॉम, निराला, दिनकर, माखनलाल, नरेश मेहता, अमृतराय, अमरकांत, परसाई, गाडगील, शिवानी, अब्बास, सुरती, प्रोफेसर देव, खुशवंत सिंह, आदि-आदि कला-साधकों, साहित्य-सेवियों से संबद्ध संस्मरणों को पढ़कर मनश्चित्त का ऐसा भावन-प्रक्षालन हुआ कि उसे शब्दित कर पाना शक्य नहीं लगता. इन संस्मरण-वातायनों से तत्तत् रचनाकारों, कलाकारों के अंतरीण व्यक्तित्व की ऐसी सुरभित बातास बही है कि उससे अनाख्येय आनंद-पुलक जग-उग रहा है. कहीं करुणा, कहीं विषाद, कहीं निष्ठा, कहीं ईमानदारी, कहीं मैत्री, कहीं त्याग, कहीं ओज, कहीं धर्म-निरतता, कहीं प्रेम, कहीं स्नेह, कहीं रोमांस, कहीं हास, कहीं स्मित, कहीं मोहताजी-फटेहाली ...वगैरह-वगैरह, मगर एक बात सर्वत्र और वह है मानवीय राग का अपूर्व सेतुबंध या कि मानवीय अस्मिता की अप्रतिहत, अपराजेय संवेदनीयता.

आपको कोटिशः साधुवाद ऐसे मर्म-संवेदी विशेषांक के लिए.

■ **डॉ. रामशंकर त्रिपाठी, फैजाबाद**

कटिंग, सेटिंग एंड फिटिंग

सारिका के संस्मरण विशेषांक का सराहनीय प्रयास देखा. योगराज थानी के **'किसी का शोधग्रंथ, किसी को डाक्टरेट'** संस्मरण से उनकी दानशीलता के चर्चे भले ही किसी मुगल-कालीन महजबीना की आकटि वेणी से बढ़ जायें. पर सोचने की बात तो यह है कि क्या उस संस्मरण के प्रकाशन के बगैर थानीजी से रहा न जा रहा था? कम से कम उन्हें तो इस 'दान' को प्रच्छन्न ही रखना चाहिए था. कितना बेहतर होता कि यह संस्मरण उसने लिखा होता, जिसने डाक्टरेट प्राप्त की है. यह उसका जोखिमभरा कृतज्ञता ज्ञापन भी होता. और फिर आज ऐसे कितने किस्से नहीं घटते कि विश्वविद्यालयों में कितनी ही थीसिसें लिखता कोई और है और कुंजी गाइडों, परीक्षकों तथा विभागों की उदारतास्वरूप जहां एक आदमी हींग लगे न फिटकरी, डाक्टर बन जाता है, वहां उसके असल लेखक को कुछ द्रव्य की प्राप्ति हो जाती है.

■ **बृहस्पति शर्मा, हैदराबाद**

विशेष सूचना

सारिका, अंक: 284 (1 से 15 मई, 81) में गिरीश कर्नाड के बहुचर्चित नाटक 'तुगलक' का कथात्मक सार-संक्षेप प्रकाशित किया गया है. उस पर पाठकों की गहरी दिलचस्पी देखकर हमें प्रसन्नता है. हमारे बहुत से पाठकों ने उस कृति को समूचे रूप में पढ़ने की इच्छा जाहिर की है और प्रकाशक का पता पूछा है. इसके प्रकाशक हैं— राधाकृष्ण प्रकाशन, 2, अंसारी रोड, नयी दिल्ली-2

—सं.

ऐसे जियो...

ईरान: जहां इतिहास करवटें बदल रहा है

• नासिरा शर्मा

● "कोउ नृप होय हमैं का हानी!"... यह मंथरा जैसी चेरियों के सोच में कभी रहा होगा या तमाम आम लोग ऐसा सोचते होंगे तो सोचते होंगे, लेकिन अब नहीं. आज की जनता सबसे पहले यही सोचती है कि राजा कौन, क्यों और किस तरह का हो?....ईरान के इतिहास ने इन सुलगते सवालों की बिनाह पर करवट बदली. फलस्वरूप वहां क्रांति हुई. मगर इस क्रांति से जनता को क्या हासिल हुआ? वहां की जनता क्रांति से पहले कैसे दिन काट रही थी और उसके बाद कैसे जी रही है—प्रस्तुत है, ज्वालामुखी की दहकन से निकलकर आये एक देश की सचित्र गाथा, जिसे लेखिका ने स्वयं ईरान का चप्पा-चप्पा छानकर लिखा.

क्रांति के बाद ईरान कितना बदल गया है, एक, सादगी, एक ठहराव, एक उदासी की परत पूरे वातावरण पर हावी नजर आती है. जहां फ्रांसीसी सेंट और मेकअप से सजे-महके चेहरे नजर आते थे, वहां चादरों में छिपे औरतों के सरापा और सादे कपड़ों में लोग. हवाई अड्डे से शहर तक लगा कि एक नया ईरान मेरी आंखों के सामने उभर रहा है. दीवारें रंग-बिरंगे नारों से भरी थीं और मजे की बात यह कि हर नारा पहले नारे की काट था. शहयाद की ऊंची इमारत हवाई जहाज से देखने पर उजाले के समुद्र में राजहंस-सी गर्दन उठाये नजर आती थी. कभी इसका रंग ही निराला था. लाखों रुपये लगाकर यह स्मारक (चित्र ऊपर) शाह ने 'पहलवी साम्राज्य' की पचासवीं वर्षगांठ पर बनवाया था. इस समय वहां न फूल थे, न पत्ते. घास सूखी हुई, फव्वारे खुश्क और संगमरमर की दीवारों पर काले रंग से जाने क्या-क्या लिखा था. पार्क फरहा, जहां जिंदगी का मेला लगता था, वहां सब कुछ झाड़-झंखाड़ में बदल चुका था. लगा शाह ने ईरान छोड़ते हुए जो बात कही थी क्या वास्तव में सही थी कि.... 'मैं ईरान से जा रहा हूं. मगर मेरे साथ तीन चीजें भी जा रही हैं—खुशी धन और शांति!' क्या वह चहल-पहल, वह गहमागहमी सब कुछ शाह के ही दम से था?

मगर शाम घिरते ही एक दूसरा नजारा देखने को मिला. तेहरान के मोहल्लों में, फुटपाथ के किनारे, लोग जमा होने लगे. सामने सड़क पर चौड़े फुटपाथ पर मैंने देखा, कुछ लोग पोस्टर लगाने तथा किताबें सजाने में व्यस्त हैं. इस भीड़ में हर उम्र के लोग थे. पूछने पर पता चला कि यह लोग स्वतंत्र वार्तालाप के लिए जमा हो रहे हैं. खुद को रोक न पायी और नीचे पहुंच उस भीड़ में शामिल होकर लोगों की बातें सुनने लगी. मार्क्सवादी तर्क-वितर्क अपनी चरम सीमा पर था. समझ नहीं पायी कि यह वही ईरान है, जहां मार्क्सवादी, आक्रमणकारी माना जाता था और लेनिन को वार्तालाप का विषय बनाना कानूनी जुर्म था. मगर यहां तो सरकार पर टिप्पणियां, युद्ध की खबरें, सब कुछ चार्ट पेपर पर लिखकर टंगा हुआ था.

याद रहे आसमाँ तले

● ईरान की सरजमीं, जनता पर हुए जुल्म की मूक गवाह है.

चंद दिनों बाद जब नये ईरान से जान-पहचान हो गयी तो महसूस हुआ कि भले ही शाह कुछ समय के लिए ऊपरी टीमटाम, हंसी, शांति व धन ले गया हो किंतु बदले में जो मिला है, वह बहुत ठोस है. ऊपर से देखने में भले ही लोग ईरान को दस वर्ष पिछड़ा समझें, मगर सामाजिक चेतना, जागृति और विचारों में ईरानी आज बीस वर्ष आगे बढ़ गये हैं.

▣

दो वर्ष पहले का यह निहत्था उद्गार (सारिका:जनवरी-79, अंक-1) पचास वर्ष से लगातार धरती के अंदर खौलता-दहकता हुआ बह रहा था. एकाएक दो वर्ष पहले पूरा ईरान उद्गार में ढल गया था. मगर आज वहां का हर नागरिक ज्वालामुखी में ढला धधकता-सा जान पड़ता है. हर आदमी को देश के प्रति, क्रांति के प्रति, विचारों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का इतना जबरदस्त एहसास है.

उस दिन पेट्रोलपंप से गुजरते हुए तीन सौ मोटरसाइकिलों की बल खायी रंगीन पंक्ति देखकर मन हुआ कि तस्वीर खींच लूं, मगर कैमरा अभी ठीक कर ही रही थी कि पीछे से आवाज उभरी, "अभी आपका कैमरा छीनकर यहीं पटकता हूं. जब चूर-चूर हो जायेगा तब आयेगा तस्वीर खींचने का मजा! कहां की शराफत है... हमारा मुल्क सद्दाम जैसे दो टके के गुलाम के हाथों जंग झेल रहा है, पेट्रोल कम हो गया तो कौन-सा पहाड़ टूट पड़ा?"

मैंने अचकचाकर पीछे देखा, मजदूर किस्म का एक आदमी भाषण दे रहा था. घबरा गयी कि इसको कैसे समझाऊंगी. यह कैमरा तोड़े बगैर मुझे जाने नहीं देगा. बड़ी सहिष्णुता से मैंने कहा, "किसने आप पर ये सब इल्जाम लगाये हैं? ईरानी कौम कहां से थकी और परेशान है? मैं तो तस्वीर इसलिए खींच रही हूं कि लोग जो सुबह पांच बजे से इस कदर शांति से यहां खड़े हैं, दरअसल ईरानियों के धैर्य, साहस और विश्वास की कहानी कह रहे हैं. यह कहानी मैं भारतवासियों को सुनाना चाहती हूं. उन्हें पसंद आयेगी क्योंकि चौंतीस वर्ष पूर्व उन्होंने भी यही लड़ाई लड़ी थी." मेरी हाजिरजवाबी से वह नर्म पड़ गया और मुस्कराकर बोला, "खुदा तुम्हें हमेशा कामयाब करे!"

▣

वहां से 'बहिश्ते जहरा' गयी. बहिश्ते जहरा ईरान का बेहद हसीन कब्रिस्तान है. कभी वह वीरान चटियल घास का मैदान था, मगर अब तीन कोने कब्रों से भर चुके हैं. एक तरफ तो आम मौत के लोगों की कब्रें पहले से थीं, दूसरी तरफ क्रांति के आरंभ में मरने वाले शहीदों की सोलह-सत्रह वर्ष वाली नस्ल की असंख्य कब्रें थीं, जिनके सिरहाने उनकी तस्वीरें लगी थीं—खूबसूरत चेहरे, कमसिन उम्रें, मासूम! आंखें चारों तरफ मुस्कराती आपस में बातें करती नजर आ रही थीं! कब्रों पर एकेक शाख लाल फूल की रखी थी.

तीसरी तरफ इराक की जंग में शहीद लोगों की कब्रें थीं. चूंकि कब्रें ताजा थीं, सो मिट्टी इधर-उधर आधी खुदी बिखरी पड़ी थी. गर्द का गुब्बार चारों तरफ फैलता] उन कब्रों से आसमान की तरफ उठ रहा था. एक लड़का बुरी तरह बिलखता, पागलों की तरह कब्रों के बीच में बड़बड़ाता चक्कर लगा रहा था. मुझे अपनी ओर घूरता पाकर वह पंद्रह-सोलह वर्ष का लड़का पेड़ के तने की आड़ में बुरी तरह रो रहा था.

मन हुआ कि वहां बैठी औरतों से बातें करूं. रेडियो, टी. वी. पर इस कौम की बहादुरी की बड़ी चर्चाएं सुन ली हैं. इनके तो अपने मरे हैं. बहुत कुछ

होगा इनके पास कहने को. . .जो कहेंगी वह यकीनन सच के करीब होगा.

"आपका कौन शहीद हुआ है?"

"बेटा!"

"क्या पूछती हो?" दूसरी औरत ने उबलते हुए कहा, "किसका शहीद नहीं हुआ है, अपनी आंखों से देखो अमरीका का तोहफा. . .कब्रें ही कब्रें हैं, ईरान कब्रिस्तान बन गया है!"

"ईरान वीरान भी हो जाये तो भी हम थके नहीं हैं, नाउम्मीद नहीं हैं. वियतनामी तीस वर्ष लड़े थे, हम साठ वर्ष लड़ने का दम भरते हैं. सद्दाम हुसैन तो बड़ा नादान निकला, अमरीका के हाथों की कठपुतली बना हुआ है."

"तुम लिखना. . .यह संसार की किस लड़ाई में हुआ है कि बम बजाय फौजियों के. . .मस्जिद, हस्पताल और ऐंबुलेंस पर गिराते हैं. सद्दम बाजारी यही करा रहा है. अमरीका रूस दोनों से पैसा खा रहा है. हमें डराने के लिए आम जनता को तबाह कर रहा है."

"हमें किसी चीज का दुख नहीं है. शौहर दिया, बेटा दिया, बेटी लाम पर गयी हुई है. हम चैन से न रहें, न सही. आने वाली नस्ल तो सुख से रहेगी."

उधर से चक्कर काटकर मैं हमामखाने की ओर जाने लगी—मीलों लंबा कब्रिस्तान, महसूस हुआ कि शाह कितना दूरंदेश था, चालीस हजार लोगों के मरने के बाद भी अभी कब्रिस्तानों में कितनी जगह बाकी है.

कब्रिस्तान के बीचों-बीच हरे रंग का सादा-सा चबूतरा था, जिसके चारों तरफ बैठी जनता उसे स्पर्श करके अजीब अनुभूति में डूबी हुई थी. पूछने पर पता चला कि यह आयतुल्लाह तालगानी की कब्र थी. बदन कांप उठा. उस शूरवीर की कब्र है, जो वास्तव में ईरानी जनता का प्रतिनिधि था, इस्लाम और क्रांति का सच्चा पारखि! इतनी सादा! न फूल, न पत्तियां, न मकबरा न रौशनी. . .सारे तामझाम से बेजार! मुझे हैरान पाकर एक सज्जन ने उदास होकर कहा, "सच्चों का यही हश्र होता है. झूठे को लोग सोना कहते हैं. इनकी तो वसीयत भी यही थी कि . . . मेरी कब्र सादा ही रहे!"

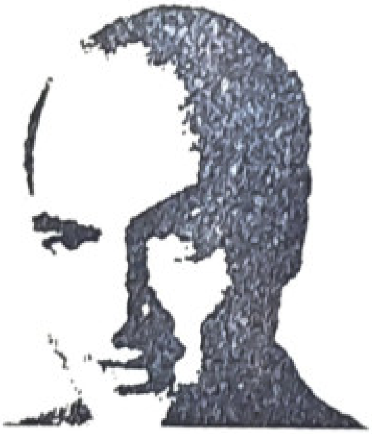

● ऊपर : डा. मुस्दिक: अगर कम्युनिस्टों ने साथ दिया होता.

● नीचे: डा. शरयती, जिन्हें जन्मभूमि पर मरना भी नसीब न हुआ.

दूसरे ने कहा, "इन्होंने तो बहुत कुछ कहा था मगर सुना किसने? सब अपना भला चाहते हैं."

मेरे दिमाग में क्रांति के बाद मशहद विश्वविद्यालय पर लगा आयतउल्लाह खुमैनी का एक पोस्टर कौंध गया कि . . . .आयतउल्लाह खुमैनी ने गंदगी कर दी है और तालगानी साहब उसे साफ कर रहे हैं!

यही तालगानी साहब थे—जो बरसों जेल में रहे थे, जिनका सीना, जिनकी पीठ जख्मों से भरी हुई थी, दिल में बेटी के बलात्कार का दाग था. आजम तालगानी संसद की सदस्या हैं. पिता के साथ ही जेल में थीं. उनके दोनों भाई भी वहीं थे, पूरे खानदान से जब सावाक

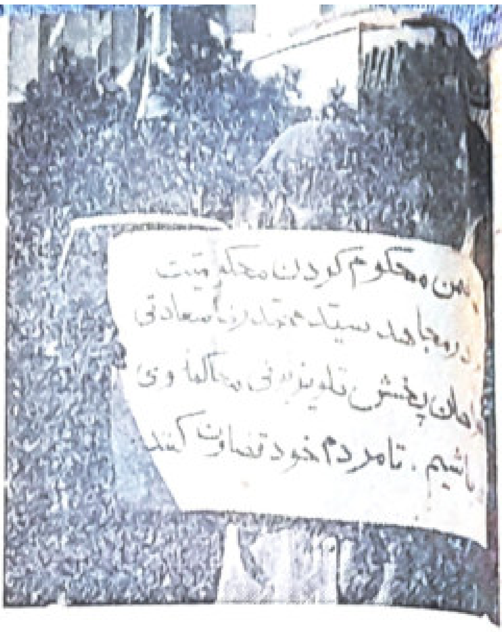

● रजा सआदती पर मुकद्दमे के दौरान मुजाहिदी समुदाय की जनता से अपील कि खुली अदालत लगायी जाये!

पुलिस हार गयी तो तंग आकर उसने बाप की आंखों के सामने बेटी के साथ बलात्कार किया था. यही तालगानी साहब थे जो स्वयं मौलवी होकर कह रहे थे कि मौलवियों की जगह मस्जिद है न कि राजनीति का अखाड़ा. यह वही हमदर्द ईरानी कौम के पिता थे, जो बेटे के जेल से छूटने पर प्रसन्न हुए थे. मगर जब उन्हें मालूम हुआ कि जेल में अभी बहुत सारे क्रांतिकारी सड़ रहे हैं और नयी सरकार उनके बारे में लापरवाह है, तो उन्होंने प्रतिरोध में कहा, "मैं इस शहर में नहीं रह सकता. मैं जा रहा हूं. जो मेरे साथ आना चाहे आये." इनके मुंह में जबरदस्ती पेशाब तक किया गया. तभी तो जनता उन्हें 'आज का गांधी' कहती है. (ईरानी गांधी जी के लिए एक विचित्र सम्मान व प्रेम रखते हैं.)

ईरान का दुर्भाग्य रहा है कि पिछले पचास वर्ष में उसने बुद्धिजीवियों व देशभक्तों को बहुत खोया है. आज भी जब उसे एक अच्छे रहबर की जरूरत थी, तालगानी उससे छीन लिये गये. इसीलिए आज ईरान में विचारात्मक धरातल पर बिखराव नजर आता है. स्वयं तालगानी साहब ने खुमैनी साहब को 'कौम का रहबर' कहा था. मगर लोगों के बीच जो रुतबा तालगानी साहब का है, वह किसी अन्य नेता का नहीं है.

● **बहिश्ते जेहरा का कब्रिस्तान, जहां क्रांति से पहले मरने वाले शहीद भी सो रहे हैं और इराक की जंग में शहीद जवान भी.**

शहर में एक खूबसूरत पार्क!

किसी ने उस तरफ इशारा करते हुए कहा, "क्रांति के बाद जैसा कि इस्लामी गणतंत्र वाले कहते हैं——12 फरवरी. . . आप गलत न समझें. मैं इस्लाम को मानता हूं. . .मगर असली इस्लाम और 12 फरवरी को वास्तव में स्वतंत्रता दिवस नहीं, बल्कि क्रांति की राह पर पहला कदम ही मानता हूं. अभी तो क्रांति आरंभ हुई है. खैर, उस समय इस पार्क का नाम 'गोल-सोर्खी' रखा गया. सेंसरशिप से हम आजाद थे, मगर थोड़े वकफे में इसका नाम बदल दिया गया. . .भला क्यों? क्या गोलसोर्खी ने जनता के लिए जान नहीं दी थी? क्या उसने जीते जी खुद को संग्राम की आग में नहीं झोंका था? अगर वह मार्क्सवादी था, तो बुराई क्या है? अगर वह मार्क्सवादी था तो नवाब सफ्फाव्वी कौन थे? रजमआरा का क्या चक्कर था? इस्लामी गुरिल्ला, इस्लामी क्रांतिकारी, कहां है उनका नाम? जो आज इस पल है वही सच है, हम इस तुर्क को कैसे निगलें? हमारे पास हमारा अतीत भी है, इतिहास भी है. आज जरा-जरा-सी बात पर काट-छांट हो रही है! . . . वह सामने देखिए, वह लड़की अखबार बेच रही है. . . हाथ में धार्मिक अखबार है, मगर कोट के अंदर गुरिल्लाओं का 'कार्ड'. कैसे इस नस्ल को आप रोकेंगे? खुल के जीने दो हमें जैसा हम चाहते हैं!"

▣

पहला हवाई हमला हो न हो, इस्पात के कारखाने को उड़ाने की नीयत से किया गया था. बम गिरने के बाद नीचे से चलायी गयी गोलियों से घंटों आसमान पर अनार छूटते रहे थे. किसी ने मुझसे कहा, "अब आपकी किताब जल्द ही समाप्त हो जायेगी, क्योंकि स्कूल खुलने के पहले दिन शाह पूर बख्तियार स्वयं आ रहे हैं. . .सही क्रांति तो तब होगी." उनके इस खयाली पुलाव से मैं चकराकर रह गयी.

दूसरे साहब बोले, "शाह के अलावा हम किसी को भी बर्दाश्त कर सकते हैं, शाह ने एक ही गलती की थी जिसका खमियाजा आज ईरान भुगत रहा है कि खुमनी को मरवाया क्यों नहीं, बल्कि उसे इराक, बगदाद, पेरिस की यात्रा पर भेज दिया". वे अध्यापक थे.

"आपने शरयतमादारी का नाम सुना है? क्या मौलवी है, पढ़ा-लिखा खुले विचारों वाला, उसे नजरबंद कर दिया गया है. चार लाख तुर्क हैं, जब चाहे हंगामा कर दें. मगर जब खुमैनी खुद उनके घर गये और उनसे याचना की तो वह खामोशी से अलग हो गये. इसी तरह बजरगान भी चालीस किताबों के लेखक हैं. मगर बेकार. लाख वह चिल्ला-चिल्लाकर कहें कि . . .'दो साल हो गये हैं, आदमी कब तक सब्र करे' मगर सुनता कौन है!"

"आधा तीतर आधा बटेर, मैं तो यह जानता हूं, यह सरकार ललितकला की दुश्मन है. कोई भी खूबसूरत चीज सहन नहीं कर सकती, रजा शाह के पिता के मकबरे के पत्थर को फ्रांस मिल्यन डालर्स में खरीदना चाहता था, नहीं बेचा, मगर तोड़-फोड़कर तबाह कर डाला! शाह के नाम से जैसे सबको एलर्जी हो गयी है, जानते ही नहीं कि ईरान था क्या? उसने इन पच्चीस वर्षों में इसे दुनिया में चमकाया. आज जहां जाओ लोग नाक सिकोड़ते हैं, जबकि शाह के वक्त विदेशी सिर आंखों पर बैठाते थे हमें."

▣

किसी ने मुझसे पूछा, "आपने यहां के स्लम देखे हैं?"

मेरे मन में जिज्ञासा उभरी कि तेहरान जैसा शहर और झोंपड़पट्टी? रास्ता पूछने पर अजीब उत्तर सुनने को मिले——"ईरान में और स्लम? ईरान में इतनी गरीबी नहीं है, यह जबरदस्ती का प्रचार है. . . उसी तरह जैसे बिना सर्वहारा के मार्क्सवादी कम्युनिज्म लाना चाहते हैं!". .. "यह गांव से काम की तलाश में आये लोग हैं. ईंट जोड़कर रहने लगे. घर जाइए तो यह मुर्गा और शराब उड़ाते मिलेंगे."

"ठीक कह रहे हैं यह, इनका खर्च क्या है? कमाना और उड़ाना, यहां तो कमर टूट रही है कालीन बिछाओ, मसनद लगाओ, कार खरीदो, घर बनवाओ, बीवी के लिए गहने-कपड़े खरीदो, अतिथि सत्कार करो. . . यह सब न करो तो समाज में नाक कटती है-इसीलिए मैं खुश हूं क्रांति से. . . इन घुटन भरे आडंबरों से अब हम मुक्त हैं. सादा पहनना, सादा रहना."

वैसे, यह सच है कि फैशन में ईरान अमरीका से केवल अस्सी घंटे पीछे था, और ये 80 घंटे जहाज को ईरान तक सामान पहुंचाने में लगते थे. ऐसी थी चमक से चुंधियायी नवकुबेरों की जिंदगी! शाह के दौर में तेहरान, मशहद, इस्फाहान इत्यादि बड़े शहरों में रात

होगा इनके पास कहने को...जो कहेंगी वह यकीनन सच के करीब होगा.

"आपका कौन शहीद हुआ है?"

"बेटा!"

"क्या पूछती हो?" दूसरी औरत ने उबलते हुए कहा, "किसका शहीद नहीं हुआ है, अपनी आंखों से देखो अमरीका का तोहफा...कब्रें ही कब्रें हैं, ईरान कब्रिस्तान बन गया है!"

"ईरान वीरान भी हो जाये तो भी हम थके नहीं हैं, नाउम्मीद नहीं हैं. वियतनामी तीस वर्ष लड़े थे, हम साठ वर्ष लड़ने का दम भरते हैं. सद्दाम हुसैन तो बड़ा नादान निकला, अमरीका के हाथों की कठपुतली बना हुआ है."

"तुम लिखना...यह संसार की किस लड़ाई में हुआ है कि बम बजाय फौजियों के...मस्जिद, हस्पताल और ऐंबुलेंस पर गिराते हैं. सद्दम बाजारी यही करा रहा है. अमरीका रूस दोनों से पैसा खा रहा है. हमें डराने के लिए आम जनता को तबाह कर रहा है."

"हमें किसी चीज का दुख नहीं है. शौहर दिया, बेटा दिया, बेटी लाम पर गयी हुई है. हम चैन से न रहें, न सही. आने वाली नस्ल तो सुख से रहेगी."

उधर से चक्कर काटकर मैं हमामखाने की ओर जाने लगी—मीलों लंबा कब्रिस्तान, महसूस हुआ कि शाह कितना दूरंदेश था, चालीस हजार लोगों के मरने के बाद भी अभी कब्रिस्तानों में कितनी जगह बाकी है.

कब्रिस्तान के बीचों-बीच हरे रंग का सादा-सा चबूतरा था, जिसके चारों तरफ बैठी जनता उसे स्पर्श करके अजीब अनुभूति में डूबी हुई थी. पूछने पर पता चला कि यह आयतुल्लाह तालगानी की कब्र थी. बदन कांप उठा. उस शूरवीर की कब्र है, जो वास्तव में ईरानी जनता का प्रतिनिधि था, इस्लाम और क्रांति का सच्चा पारिख! इतनी सादा! न फूल, न पत्तियां, न मकबरा न रौशनी...सारे तामझाम से बेजार! मुझे हैरान पाकर एक सज्जन ने उदास होकर कहा, "सच्चों का यही हश्र होता है. झूठे को लोग सोना कहते हैं. इनकी तो वसीयत भी यही थी कि ... मेरी कब्र सादा ही रहे!"

● ऊपर : डा. मुस्दिक: अगर कम्युनिस्टों ने साथ दिया होता.
● नीचे: डा. शरयती, जिन्हें जन्मभूमि पर मरना भी नसीब न हुआ.

दूसरे ने कहा, "इन्होंने तो बहुत कुछ कहा था मगर सुना किसने? सब अपना भला चाहते हैं."

मेरे दिमाग में क्रांति के बाद मशहद विश्वविद्यालय पर लगा आयतउल्लाह खुमैनी का एक पोस्टर कौंध गया कि ....आयतउल्लाह खुमैनी ने गंदगी कर दी है और तालगानी साहब उसे साफ कर रहे हैं!

यही तालगानी साहब थे—जो बरसों जेल में रहे थे, जिनका सीना, जिनकी पीठ जख्मों से भरी हुई थी, दिल में बेटी के बलात्कार का दाग था. आजम तालगानी संसद की सदस्या हैं. पिता के साथ ही जेल में थीं. उनके दोनों भाई भी वहीं थे, पूरे खानदान से जब सावाक

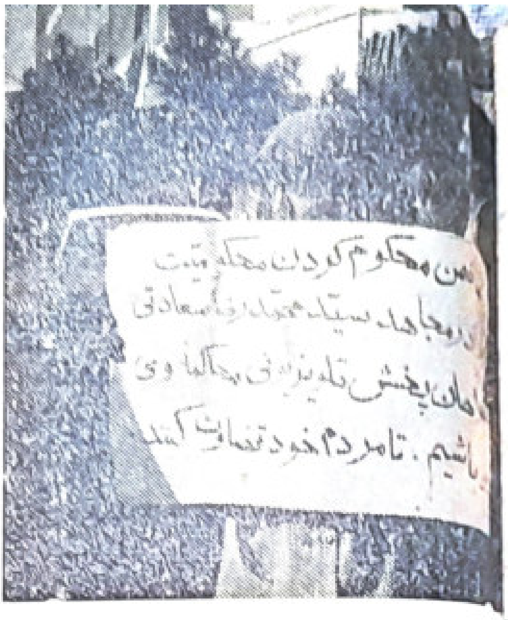

● रजा सआदती पर मुकद्दमे के दौरान मुजाहिदी समुदाय की जनता से अपील कि खुली अदालत लगायी जाये!

पुलिस हार गयी तो तंग आकर उसने बाप की आंखों के सामने बेटी के साथ बलात्कार किया था. यही तालगानी साहब थे जो स्वयं मौलवी होकर कह रहे थे कि मौलवियों की जगह मस्जिद है न कि राजनीति का अखाड़ा. यह वही हमदर्द ईरानी कौम के पिता थे, जो बेटे के जेल से छूटने पर प्रसन्न हुए थे. मगर जब उन्हें मालूम हुआ कि जेल में अभी बहुत सारे क्रांतिकारी सड़ रहे हैं और नयी सरकार उनके बारे में लापरवाह है, तो उन्होंने प्रतिरोध में कहा, "मैं इस शहर में नहीं रह सकता. मैं जा रहा हूं. जो मेरे साथ आना चाहे आये." इनके मुंह में जबरदस्ती पेशाब तक किया गया. तभी तो जनता उन्हें 'आज का गांधी' कहती है. (ईरानी गांधी जी के लिए एक विचित्र सम्मान व प्रेम रखते हैं.)

ईरान का दुर्भाग्य रहा है कि पिछले पचास वर्ष में उसने बुद्धिजीवियों व देशभक्तों को बहुत खोया है. आज भी जब उसे एक अच्छे रहबर की जरूरत थी, तालगानी उससे छीन लिये गये. इसीलिए आज ईरान में विचारात्मक धरातल पर बिखराव नजर आता है. स्वयं तालगानी साहब ने खुमैनी साहब को 'कौम का रहबर' कहा था. मगर लोगों के बीच जो रुतबा तालगानी साहब का है, वह किसी अन्य नेता का नहीं है.

● **बहिश्ते जेहरा का कब्रिस्तान, जहां क्रांति से पहले मरने वाले शहीद भी सो रहे हैं और इराक की जंग में शहीद जवान भी.**

शहर में एक खूबसूरत पार्क!

किसी ने उस तरफ इशारा करते हुए कहा, "क्रांति के बाद जैसा कि इस्लामी गणतंत्र वाले कहते हैं—12 फरवरी... आप गलत न समझें. मैं इस्लाम को मानता हूं...मगर असली इस्लाम और 12 फरवरी को वास्तव में स्वतंत्रता दिवस नहीं, बल्कि क्रांति की राह पर पहला कदम ही मानता हूं. अभी तो क्रांति आरंभ हुई है. खैर, उस समय इस पार्क का नाम 'गोल-सोर्खी' रखा गया. सेंसरशिप से हम आजाद थे, मगर थोड़े वकफे में इसका नाम बदल दिया गया...भला क्यों? क्या गोलसोर्खी ने जनता के लिए जान नहीं दी थी? क्या उसने जीते जी खुद को संग्राम की आग में नहीं झोंका था? अगर वह मार्क्सवादी था, तो बुराई क्या है? अगर वह मार्क्सवादी था तो नवाब सफ्फाव्वी कौन थे? रजमआरा का क्या चक्कर था? इस्लामी गुरिल्ला, इस्लामी क्रांतिकारी, कहां है उनका नाम? जो आज इस पल है वही सच है, हम इस तर्क को कैसे निगलें? हमारे पास हमारा अतीत भी है, इतिहास भी है. आज जरा-जरा-सी बात पर काट-छांट हो रही है!... वह सामने देखिए, वह लड़की अखबार बेच रही है... हाथ में धार्मिक अखबार है, मगर कोट के अंदर गुरिल्लाओं का 'कार्ड'. कैसे इस नस्ल को आप रोकेंगे? खुल के जीने दो हमें जैसा हम चाहते हैं!"

▣

पहला हवाई हमला हो न हो, इस्पात के कारखाने को उड़ाने की नीयत से किया गया था. बम गिरने के बाद नीचे से चलायी गयी गोलियों से घंटों आसमान पर अनार छूटते रहे थे. किसी ने मुझसे कहा, "अब आपकी किताब जल्द ही समाप्त हो जायेगी, क्योंकि स्कूल खुलने के पहले दिन शाहपूर बख्तियार स्वयं आ रहे हैं...सही क्रांति तो तब होगी." उनके इस खयाली पुलाव से मैं चकराकर रह गयी.

दूसरे साहब बोले, "शाह के अलावा हम किसी को भी बर्दाश्त कर सकते हैं, शाह ने एक ही गलती की थी जिसका खमियाजा आज ईरान भुगत रहा है कि खुमनी को मरवाया क्यों नहीं, बल्कि उसे इराक, बगदाद, पेरिस की यात्रा पर भेज दिया". वे अध्यापक थे.

"आपने शरयतमादारी का नाम सुना है? क्या मौलवी है, पढ़ा-लिखा खुले विचारों वाला, उसे नजरबंद कर दिया गया है. चार लाख तुर्क हैं, जब चाहे हंगामा कर दें. मगर जब खुमैनी खुद उनके घर गये और उनसे याचना की तो वह खामोशी से अलग हो गये. इसी तरह बजरगान भी चालीस किताबों के लेखक हैं. मगर बेकार. लाख वह चिल्ला-चिल्लाकर कहें कि ...'दो साल हो गये हैं, आदमी कब तक सब्र करे' मगर सुनता कौन है!"

"आधा तीतर आधा बटेर, मैं तो यह जानता हूं, यह सरकार ललितकला की दुश्मन है. कोई भी खूबसूरत चीज सहन नहीं कर सकती, रेजा शाह के पिता के मकबरे के पत्थर को फ्रांस मिल्यन डालर्स में खरीदना चाहता था, नहीं बेचा, मगर तोड़-फोड़कर तबाह कर डाला! शाह के नाम से जैसे सबको एलर्जी हो गयी है, जानते ही नहीं कि ईरान था क्या? उसने इन पच्चीस वर्षों में इसे दुनिया में चमकाया. आज जहां जाओ लोग नाक सिकोड़ते हैं, जबकि शाह के वक्त विदेशी सिर आंखों पर बैठाते थे हमें."

▣

किसी ने मुझसे पूछा, "आपने यहां के स्लम देखे हैं?"

मेरे मन में जिज्ञासा उभरी कि तेहरान जैसा शहर और झोंपड़पट्टी? रास्ता पूछने पर अजीब उत्तर सुनने को मिले—"ईरान में और स्लम? ईरान में इतनी गरीबी नहीं है. यह जबरदस्ती का प्रचार है... उसी तरह जैसे बिना सर्वहारा के मार्क्सवादी कम्युनिज्म लाना चाहते हैं!"... "यह गांव से काम की तलाश में आये लोग हैं. ईंट जोड़कर रहने लगे. घर जाइए तो यह मुर्गा और शराब उड़ाते मिलेंगे."

"ठीक कह रहे हैं यह, इनका खर्च क्या है? कमाना और उड़ाना, यहां तो कमर टूट रही है कालीन बिछाओ, मसनद लगाओ, कार खरीदो, घर बनवाओ, बीवी के लिए गहने-कपड़े खरीदो, अतिथि सत्कार करो... यह सब न करो तो समाज में नाक कटती है. इसीलिए मैं खुश हूं क्रांति से... इन घुटन भरे आडंबरों से अब हम मुक्त हैं. सादा पहनना, सादा रहना."

वैसे, यह सच है कि फैशन में ईरान अमरीका से केवल अस्सी घंटे पीछे था, और ये 80 घंटे जहाज को ईरान तक सामान पहुंचाने में लगते थे. ऐसी थी चमक से चुंधियायी नवकुबेरों की जिंदगी! शाह के दौर में तेहरान, मशहद, इस्फाहान इत्यादि बड़े शहरों में रात

होती ही नहीं थी. इनके कुछ हिस्से दिन के उजाले से अधिक प्रकाशित होते थे.

उसी दिन सुबह साढ़े पांच बजे तेहरान हवाई अड्डे पर हवाई हमला हुआ. बिना सायरन, बिना किसी संकेत के यह दुर्घटना हुई तो हुई कैसे!... सबको ताज्जुब था. उसी रात टी. वी. पर तीन इराकी हवाबाजों का कार्यक्रम देखा, बड़ा दिलचस्प था. वे बम गिराने आये थे, नीचे से ईरानी लोगों ने हाथ दिखाया तो उन्हें समझ नहीं आया कि वह खुश हो रहे हैं या कुछ फेंक रहे हैं. उन्हें देखने के चक्कर में गलत हैंडिल दब गया और सेकेंड भर बाद बम की जगह वे स्वयं हवाई जहाज से पैराशूट के साथ नीचे उतर आये. लोगों ने उन्हें 'स्वागतम' कहा और हेड-क्वार्टर ले आये. उन्होंने बयान दिया कि वे दुखी हैं, जबरदस्ती लड़ रहे हैं आदि.

▣

तेहरान विश्वविद्यालय के आसपास बुद्धिजीवियों का प्रभाव अधिक है. मार्क्सवादी विचारधारा सड़कों के चारों तरफ फैली नजर आती है! अच्छा कवि, लेखक, अध्यापक, अधिकारी, समाज सुधारक जो भी शिक्षित है, मार्क्सवादी है. मार्क्सवादी नहीं भी है तो धर्म से एक प्रकार से उदासीन है. विश्वविद्यालय बंद पड़ा है, पता नहीं कब खुलेगा. लड़के क्रांति की खुशी में घर लौटे और घर के ही होकर रह गये, लौटने की इजाजत नहीं मिली. सड़क के किनारे फुटपाथ पर खूबसूरत स्मार्ट लड़के जो इंजीनियरिंग या डाक्टरी पढ़ रहे थे, अब फल, किताबों, कैसिट, कपड़ों की दूकानें लगाये हुए हैं. जिनकी अंग्रेजी अच्छी है, उन्होंने विदेशी पत्रकारों के साथ काम करना शुरू कर दिया है. यह भी विचित्र-सा लगा कि दो जापानी, एक जर्मन और दो स्पेनिश पत्रकार आराम से बैठे रहते. उनका सहायक जो लिखकर देता उसे टैलेक्स के जरिये वह अपने देश भेज देते. शायद इसीलिए ईरान के बारे में विभिन्न खबरें संसार भर में फैली हुई हैं और बेचारा ईरान अफवाहों की सलीब पर चढ़ा क्रांति में संघर्षरत है.

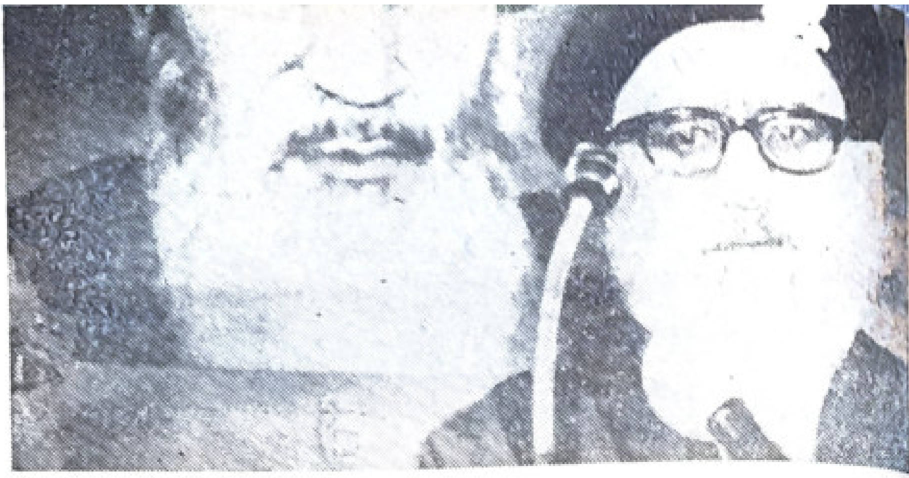

● अयातुल्लाह खुमैनी के पोस्टर के नीचे भाषण देते हुए अयातुल्लाह तालगानी. खुमैनी से असहमति की सजा थी मौत. सामने के पृष्ठ पर तालगानी की कब्र.

जंग के कारण अधिकतर युवक युद्ध में चले गये थे. केवल 15 दिनों में 4000 लोगों ने युद्ध में जाने के लिए नाम लिखवाया. हर रोज एक भीड़ इमारत के सामने जमा रहती कि हमारा नाम लिख लीजिए. लड़कियां जो हाई हील या पेंसिल हील पहने पर्स थामे खटखट इधर-उधर जाती नजर आती थीं, अब बंदूकें चलाना सीख रही हैं. कुछ दिन ईंधन की कमी रही. मशीनों को गर्म करना था. तब लोगों ने खुद को झोंक दिया! सुनकर सिर से पीठ तक सनसनाहट-सी दौड़ गयी! या खुदा, क्या होने वाला है ईरान में! शाह के वक्त बाजार में रिश्वत, चोर बाजारी, तस्करी का बोलबाला था. शिकायत करने जाओ तो पहले उपहार स्वरूप उन्हें कुछ भेंट दो, फिर बार-बार उन्हें दांत दिखाओ. मध्यवर्गीय दूकानदारों, व्यापारियों का बुरा हाल था. लड़कियों का चलना दूभर था. सुंदर लड़की शाह से लेकर छोटे-मोटे सावाकी अधिकारी तक सबकी कमजोरी थी.

पहली मेहर (सितंबर 20–25) को शाहपूर बख्तियार और अमरीका के खिलाफ लंबा जलूस बच्चों व लड़के-लड़कियों का निकला. आज छुट्टियों के बाद पहला दिन था स्कूल खुलने का. मन हुआ कि उस अध्यापक से लिखकर पूछूं कि शाह के बेटे की ताजगुजारी कब होने वाली है. कुछ दिन बाद फ्रांस सरकार ने उनसे 'रेडियो आजाद' का अधिकार और राजनीतिक कार्यक्रमों की आजादी छीन ली. शाह के प्रेमियों को इससे दिली सदमा पहुंचा और उनकी आशाएं बिखरने लगीं. धीरे-धीरे ईरानियों के लिए शाहपूर बख्तियार का नाम एक भूली दास्तान बन गया और शाह के बेटे का लौटना एक चुटकला!

▣

मोहर्रम का पहली तारीख का चांद दिखा था. चारों तरफ से 'अल्लाहो अकबर' की आवाजें बुलंद हो रही थीं. कितना अद्‌भुत था सब कुछ. अंधेरा, उस पर से विभिन्न आवाजों के उतार-चढ़ाव, विभिन्न उम्रों के रंगों का मिश्रण. अजीब समा था. दस मिनट तक 'अल्लाहो अकबर' का सुर गूंजता रहा. आशूरे अर्थात दसवीं मोहर्रम की मैदाने आजादी (पहले शहयाद की इमारत, अब उसका नाम 'शहीद स्मारक' हो गया है) में बनीसद्र का भाषण था. कुछ दिन पहले कुतुबजादे के पकड़े जाने और फिर छोड़ दिये जाने से कुछ लोग क्षुब्ध थे. ऊपर से आये दिन की बढ़ती समस्याओं से घबराकर शहरों में मौलवियों के खिलाफ प्रदर्शन हुए. उससे इमाम खुमैनी को बहुत दुख पहुंचा. उनकी तस्वीरें फाड़ी गयीं. उनकी आंखें फोड़ी गयीं. इस घटना का असर खुमैनी साहब पर बहुत अधिक पड़ा. टी. वी. पर मजलिस पढ़ी जा रही थी, खुमैनी साहब के बहते आंसू देखकर उस-को इस घटना से जोड़ा गया. बहरहाल,

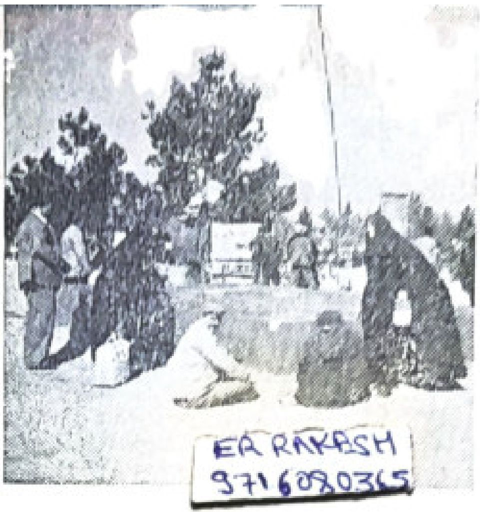

मैदाने आजादी में चार लाख लोग थे. . .कफन पहने लोगों की भीड़! उस पर से बनीसद्र राष्ट्रपति ईरान का यह कहना कि. . ."मैं पूछता हूं उन लोगों से जो धर्म को मानते हैं, कि इस्लामी गणतंत्र में छह प्रकार की जेलों से क्या अभिप्राय है?" इस तरह के प्रश्न, वह भी ईरान के राष्ट्रपति द्वारा किये जाने पर दुखी जनता व्याकुल हो उठी. खलखाली साहब जो इस्लामी कोर्ट में हैं, क्रोधित मुद्रा में मंच से उठे और चले गये. बेहिश्ती साहब व उनके समूह के लोग बनीसद्र से रुष्ट हो गये. इमाम ने अपना घटता प्रभाव देखा तो वह बनीसद्र की बातों को उचित समझने लगे, क्योंकि जमाने का तकाजा यही था. लोग इस घुटन से ऊब चुके थे. बनीसद्र तो पहले से ही जनता द्वारा पसंद किये जाते थे. अब इस भाषण के बाद से लोक नेता बन गये. दूसरे दिन खुमैनी साहब की तस्वीरों की जगह बनीसद्र की तस्वीरें थीं.

किसी ने ईरान के ये बदले तेवर देखकर कहा, "हम ईरानी बड़े तोता-चश्म हैं. जब डा. मुस्दिक ने शाह को ईरान से निकालने पर मजबूर किया था तो हर तरफ डा. मुस्दिक. . .डा. मुस्दिक था, फिर जाने कैसे सुबह दस बजे ट्रकों पर भरे लोग नारा लगाते हुए गुजरे 'शाह जिंदाबाद!' इससे पहले कि लोग संभलें, शाह ईरान में पहुंच चुका था और डा. मुस्दिक जेल में. अभी देखते जाइए आगे क्या-क्या होता है. कुछ पता नहीं, यह कौम कब किस-की जय-जयकार कर दे!"

वास्तविकता यह है कि क्रांति तो ईरान में अब आरंभ हुई है. 50 वर्ष पूर्व काजार काल में रेजाशाह कबीर ने भी हंगामा किया था, मगर अंग्रेजों के हस्तक्षेप से क्रांति होने से पहले ही वह खुद शाह बन बैठे. उस समय का दबा लावा जो अब फूटा, वह भी खुमैनी साहब के आने व शाह के जाने से हुआ है. ईरानी कौम इतनी भावुक हो उठी कि उसने क्रांति का अंत इसी को समझ लिया था, जबकि यह तो एक सुखद घटना थी. मगर अब जिस तरह लोग अपने अधिकारों के प्रति सजग हो रहे हैं, अपने देश और अपने कर्तव्य को पहचान रहे हैं, उसमें परिवर्तन लाने की चेष्टा कर रहे हैं, उससे लगता है कि अब ईरान में क्रांति की जड़ें मजबूत हो रही हैं और वह शीघ्र ही अपनी मंजिल पर पहुंचेगा.

▣

आज ईरान का जिंदा सवाल यह है कि क्या वास्तव में ईरान कम्युनिस्ट देश बन जायेगा? सौ वर्ष से अधिक ईरान पर कम्युनिस्ट प्रभाव रहा है. संघर्ष की वैभवपूर्ण दास्तान भी है, बलिदानों का एक लंबा सिलसिला. शाह की समय में लोग कुचले गये और आज भी उन्हें वह स्थान नहीं मिला है जो उन्हें मिलना चाहिए. इसकी वजह उनकी अपनी कमजोरियां हैं. एक देश में विभिन्न समुदायों का होना ही इस बात का द्योतक है कि उनमें एकता नहीं है. मगर जिस तरह से वे लड़ रहे हैं, उसे देखकर लगता है कि ईरान कम्युनिस्ट हो जायेगा. उसके कई कारण हैं, पहला वहां 'जाति' का कोई महत्व नहीं है. लोगों का सपना 'रूस' है कि वहां पर कारखाने हैं, पढ़ाई का उचित प्रबंध है, आम आदमी की आवश्यक-ताओं का पूरा खयाल रखा जाता है. वर्तमान ईरान सरकार की तुलना लोग रूस से करते हैं. मगर दूसरी ओर 80 प्रतिशत जनता अनपढ़ है. वह रूस से घबराती है. भले ही उनके लड़के-लड़कियां कम्युनिस्ट विचारधारा की ओर झुकाव महसूस करते हों किंतु इस्लाम के रेशे बहरहाल ईरान में कम्युनिस्ट दर्शन से बहुत पुराने व गहरे हैं. शियाओं को अली से अलग करना कठिन ही नहीं, गैरमुमकिन-सी बात नजर आती है.

विचारात्मक धरातल पर ईरान का वातावरण इतना तनावपूर्ण है कि लगता है, बस, गृहयुद्ध होकर रहेगा.

हुआ भी वही. थोड़ा बहुत तो हिजब-उल्लाही (कट्टर धर्मपंथी) स्वतंत्र-वार्तालाप वालों पर आक्रमण करते थे, मगर जिस तरह से दिसंबर में मुजा-हिदीनों के कई लोगों को मारा गया और फिर 11 फरवरी को गुरिल्ला समुदायों पर चाकू, पत्थर, गोलियों की जो बारिश हुई, उससे स्वयं आयतउल्लाह के बेटे हाज महोम्मद को कहना पड़ा, "जब तक हम लोग संभलें, कहीं बहुत देर न हो चुकी हो!" उनका कहना वास्तव में गहरा अर्थ रखता है. यह समय देश के निर्माण का है, न कि 14 सौ वर्ष पुरानी विचारधारा को फिर से नये रूप से लागू करने का. फिर यह लागू भी हुई है तो केवल कोड़े, फांसी के रूप में ही संसार में पहचानी जा रही है, इससे स्वयं ईरानी बड़े दुखी हैं.

▣

किसी ने मुझसे पूछा, "आप किस-किस समुदाय के लोगों से मिली हैं?" मैंने बताया तो सुनकर बोला, "केवल एक ही समुदाय का बहुमत है. . .डा. शरयतमदारी का, और वह है मुजाहिदीन समुदाय."

किसी ने कहा, "मुजाहिदीन, मुनाफाखोर हैं, मार्क्सवादी हैं, मगर अपने को इस्लामी कहते हैं."

इस तरह की छींटाकशी, इस तरह के कटुबाण, कटाक्ष वहां परस्पर चलते रहते हैं. मगर जब देश और आजादी की बात आती है तो वे एक होकर एक ही बात दोहराते हैं. तब वह केवल अपने शत्रु को रौंदना ही अपना उद्देश्य मानते हैं.

ईरान में इस समय शाह के समय की तरह ही एक पार्टी सिस्टम है. इस समय इस्लामी गणतंत्र पार्टी और दूसरी पार्टी जो पुरानी है, वह है —तोदे (कम्युनिस्ट) पार्टी. इसके बारे में लोगों में काफी वाद-विवाद है.

'रूदकी' हाल के सामने बड़े-बड़े पोस्टर लगे थे. मैं खड़ी होकर देखने लगी. तभी कुछ लोग कहते गुजरे, "तोदे पार्टी का नया षड्यंत्र, अब इसके धोखे में कोई नहीं आयेगा." दूसरे ने कहा, "कहते अपने को मार्क्सवादी हैं, मगर सरकार की हर बात पर दुम हिलाते हैं." तीसरा बोला, "इनका इतिहास यही है. मुस्दिक को ऐन समय पर कैसा धोखा दिया था. अगर ये साथ देते तो आज की क्रांति 20–25 वर्ष पहले ही हो जाती . . . और ईरान को इतना कुछ न झेलना पड़ता."

"भाई, तुम गलत समझते हो. बिना इस्लामी विचारधारा वालों से दोस्ती के ईरान में कम्युनिज्म नहीं आ सकता. तोदे पार्टी के अध्यक्ष कियानूरी का यही कहना है."

मेरी समझ में कुछ नहीं आया. बाद में पता चला कि कियानूरी के नर्म व दोस्ताना स्वभाव के कारण बाजार में कम्युनिस्ट किताबें दिखती हैं. उन्हीं के समाचार पत्र स्वतंत्र रूप से छपते हैं, क्योंकि सरकार पर आलोचना तो दूर, कटाक्ष तक नहीं होता, बल्कि तारीफ अलग होती है. जबकि गुरिल्ला समुदाय वाले अधिक दुखी हैं. उन्हें किसी बात की स्वतंत्रता नहीं है. माली और जानी, दोनों ही तरह से वह टूटे हुए हैं और तभी वे कहते हैं कि यह तोदे पार्टी वाले ईरान में साम्यवाद लाने में अपने इस साजिशाना व्यवहार से कितनी हानि पहुंचा रहे हैं. बाद में समझेंगे, अभी तो हजारों रुपये भेजकर बच्चों को अमरीका में पढ़ा रहे हैं. ऐसे लोग क्या क्रांति लायेंगे!"

▣

गली-कूचे, घर-बाहर, दफ्तर, कालेज, दूकान, सिनेमा . . . कभी इन जगहों पर शेर पढ़े जाते थे. अच्छे कवियों के संग्रह 20 हजार तक बिके हैं, मगर आज वह शायराना माहौल समाप्त हो चुका है.

एक अध्यापिका के घर जाने का अवसर मिला. उनके पति फ्रांस में छिपे हुए हैं. शाह की तारीफ करने में उन्होंने जमीन-आसमान के कुलाबे मिला दिये थे.

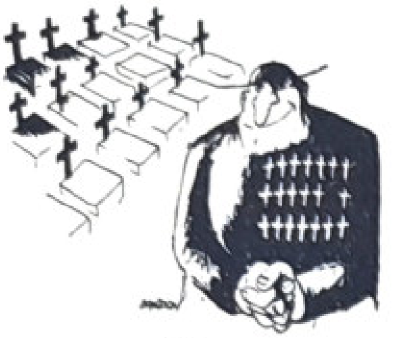

● हत्याओं के शाही पदक

अपना पुस्तकालय मुझे दिखाने ले गयीं. एक पुस्तक खोलते हुए बोलीं, "यह देखो! और तब सोचो हम क्या थे. और इन लोगों के हाथों कहां पहुंच गये. अपने को पहचानते न थे यह अरब विदेशी!" कहकर उन्होंने शाहनामा (फिरदौसी का महाकाव्य, ईरान का इतिहास) खोला. आंखों को एक अजीब सुकून मिला. . . क्या आर्ट है, कितनी बारीकी, कितनी नजाकत है! मैं अभी प्यासी निगाहों से उसे पी ही रही थी कि वह बोली,"यह सारा सुनहरा काम जो आप देख रही हैं, सोने के पानी का है. यह तो हम जैसे छोटे लोगों के लिए है, जिन्हें शाह ने स्वंय शाहनामा भेंट किया था वह खालिस सोने का काम था!" मन घृणा से भर उठा. लगा कि ऐसी कला से क्या फायदा जिसमें किसी एक का अंहमात्र तुष्ट होता हो.

▣

ईरान में बुद्धिजीवी वर्ग ने बड़ी कुर्बानी दी है. जहां पैसा बह रहा हो और एय्याशी के लिए हर कोना आपको वहां आने की दावत दे रहा हो, उस वातावरण में जान हथेली पर रख हर चीज से अपने को काटकर केवल अपने सिद्धांतों और देश के भविष्य के लिए लड़ते-लड़ते जीना खेल नहीं है.

उनकी इतनी गंभीरता देखकर मुझे महसूस हुआ कि उन लोगों से भी इस तनावपूर्ण वातावरण में मिलना चाहिए. देखें, वे क्या कहते हैं.

बहुत कोशिशों के बाद भी लेखकों का पता न चला कि वह हैं कहां. पुराने घर, फोन नंबर सब बदल गये थे. पता चला कि लेखकों व कवियों में सबसे पहले पिटने वाले नेमत मिर्जाजादे और हुमानातिक (लेखिका) थे, जिन पर लेखक संघ से निकलते हुए विश्वविद्यालय के सामने लोगों ने आक्रमण कर दिया. तब से बुद्धि-जीवी वर्ग अपने ही खोल में छिपकर रेशम बनाने में जुटा हुआ है.

जितने महत्वपूर्ण रचनाकारों से मुलाकात हुई बेरोजगार थे, कर्जदार थे. स्वंय संघ चलाने व जिंदा रहने के लिए हर रोज चंदा मांगा जाता. कुछ दे देते, कुछ जेबें टटोलते रह जाते. मगर चेहरे पर जरा भी शिकन न होती!

▣

"ईरान में कभी हर चीज या तो पहले नंबर पर थी या दूसरे पर. शाह को तीसरी-चौथी किस्म की चीजें एकदम नापसंद थीं. बड़े-बड़े अस्पताल थे, कारखाने थे, मगर चलते नहीं थे" एक ने मुझे बताया.

"मगर वह दिन दूर नहीं, जब हमारा ईरान कारखानों के धुएं से भर उठेगा. तब हम आलोचनाओं का उत्तर देंगे."

"आप बुरा मान गये, मगर यह हकीकत है कि आप जब बाजार जायेंगे, विशेषकर मिठाई या मेकअप की दूकानों पर. . .तो लगता ही नहीं कि क्रांति हो रही है."

"एक वर्ग है, जिसके लिए ये बाजार ये दूकानें खुली हैं क्योंकि उनके पास पैसा है और उन्हीं पूंजीपतियों से हम लड़ना चाह रहे हैं, लड़ रहे हैं."

"मगर हालत सुधरी नहीं, खराब हो गयी है. आर्थिक व्यवस्था तो . . ."

"आपका खयाल ही है . . . हमारे खनिज स्रोत वैसे ही हैं! जब हम क्रांति के माध्यम से अपनी मंजिल पर पहुंचेंगे, इन्हीं खजानों को फिर से खोलेंगे, फिर वही धन की बारिश होगी. यहां मसला अर्थ का नहीं, विचार का है, व्यवस्था का है कि कौन-सी प्रणाली आये जो ईरान को सुचार रूप से चलाये."

देश का इश्क बहुत विचित्र इश्क होता है. . . फना हुए बिना चैन ही नहीं आता! और यह बेचैनी आज पूरे ईरान को व्याकुल किये हुए है! □

क्या दीवारों के मुंह भी होते हैं?

दीवारों के भी कान होते हैं, यह तो आपने सुना होगा, लेकिन अगर यह कहा जाये कि 'दीवारों के मुंह भी होते हैं' तो यह शायद आपको अविश्वसनीय लगे, मगर सोचिए... तब क्या होता है, जब जनता के मुंह संगीनों से चौंस दिये जाते हैं... और आकाश से बरस रहा होता है बारूद?—ईरानी नागरिकों के दिलों में उठती टीसों का ज्वलंत प्रमाण—

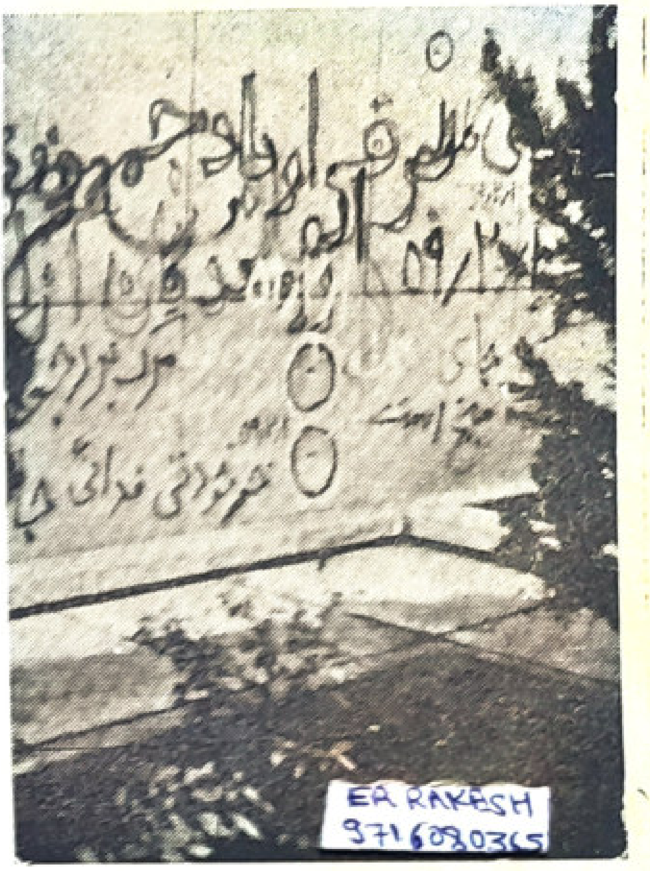

● दीवार: जब जनता की आवाज बनती है!

सड़क पर भीड़. जुमे का दिन. मीलों लंबा जुलूस, देहातियों का, आम आदमियों का, बंदूक पकड़े, मार्च करता नये-पुराने कपड़े पहने चला जा रहा था. रणक्षेत्र में शहीद हो जाने का इरादा लिये, फटेहाल, देश प्रेम का मारा. नमाज से लौटती औरतों-मर्दों की भीड़ सड़क के दोनों तरफ खड़ी गीली आंखों से उसे देख रही थी. ऐसे समय का फायदा उठाते हुए कुछ समुदायों के लड़के-लड़कियां लोगों में पर्चे बांटने लगे. सड़क की दीवारों पर लिखा था—कम्युनिस्ट चूजों पर लानत, कम्युनिस्ट इन्कलाब के दुश्मन हैं.

भीड़ घरों को लौटने लगी. रास्ते में फिर किसी ने पर्चा थमाया, मगर उसने इनकार कर दिया. साथ वाली औरत बोली, "ले लेतीं, दिल ही रखने को. मेहनत करते हैं बेचारे."

"दिल कैसा रखना भई! तरस कैसा बेचारों पर, बिना कारण आंख फोड़ते हैं, इन्हें कौन समझाये कि यहां वर्गों की लड़ाई नहीं है. यहां धर्म की लड़ाई है. अच्छाई और बुराई की लड़ाई है. समय गंवाना हो तो गंवायें. मैं तो नहीं पढ़ती."

कोई बोला, "दो वर्ष से मेरा दिल भरा हुआ है. बहुत कुछ है कहने को, मगर मैं मामूली आदमी हूं. कौन सुनेगा मेरा भाषण? बहुत सारे प्रश्न हैं. मुझे बार-बार लगता है कि यदि यही सब होना था तो शाह क्या बुरा था? फिर सिर झटक देता हूं कि क्या सोच रहा हूं, किसके बारे में सोच रहा हूं. स्वयं कांप जाता हूं!"

दीवार पर लिखा था—इस्लाम एक राजनैतिक धर्म है. सामने पंडाल में लोगों की भीड़ है. माइक पर किसी ने कहा, "मुसलमान भाइयों से अनुरोध है कि नमाज का वक्त है, नमाज के लिए पंक्तिबद्ध हों."

पीछे से कोई दोस्त के कान में फुसफुसाया, "अभी देखना, मुसलमान भाई, दोस्तों और भाइयों से अलग हो जायेंगे."

पोस्टर चिपका था—शर्म औरत का जेवर है. अपने को ढांककर रखना औरत का सौंदर्य है.

सामने ऑफिस से लिपटी लिपटाई लड़कियां निकल रही थीं. टैक्सी के लिए खड़ी एक लड़की ने चादर से होंठ निकालकर पूछा, "बिरादर! नारमक जाना है." टैक्सी वाले ने इंकार में गर्दन हिलायी और बड़बड़ाया, "बहन, भाई से पर्दा कैसा?" पीछे बैठी सवारी बोली, "इस्लामी गणतंत्र में सब एक दूसरे के बहन-भाई हैं, मगर उतना ही अपने को छिपाते-ढांकते हैं. अजीब बेगानगी का माहौल है."

अखबार की सुर्खियां थीं—कम्युनिस्टों पर हमला! बाजार में मौलवियों के खिलाफ नारे! सिर न ढांकने पर कुछ औरतों को नौकरी से निकाला गया. मस्जिद में राशन कार्ड मिलने आरंभ हो गये हैं.

इराकी हमलों से खराब रिफाइनरी. तेल, पेट्रोल मिलना बंद. सब बस से सफर करते हैं. बस अड्डे पर भीड़. भीड़ में भीख मांगता फकीर. खामोश बेगाने चेहरे फैले हाथ के सामने से गुजर रहे थे. एक जवान जोड़े के सामने एकदम से वह हाथ रुक गया. वह जवान बोला, "हमसे क्या मांगते हो. हम दोनों बेकार हैं. इमाम से जाकर मांगो."

सब के चेहरे पर कटाक्षभरी मुस्कान थी, "गरीबों का इन्कलाब यानी गरीब लाओ आंदोलन."

चारों तरफ धर्म, धर्म, धर्म. चारों तरफ जंग, जंग, जंग. चारों तरफ क्रोध, क्रोध, क्रोध. चारों तरफ घृणा, घृणा, घृणा. चारों तरफ एक ही आवाज, "हमें अपने में एकता का संचार करना है." दीवारें लाल-काले रंगों से रंगी थीं और लोगों के सिर तथा बदन लाल-नीले हो रहे थे. □

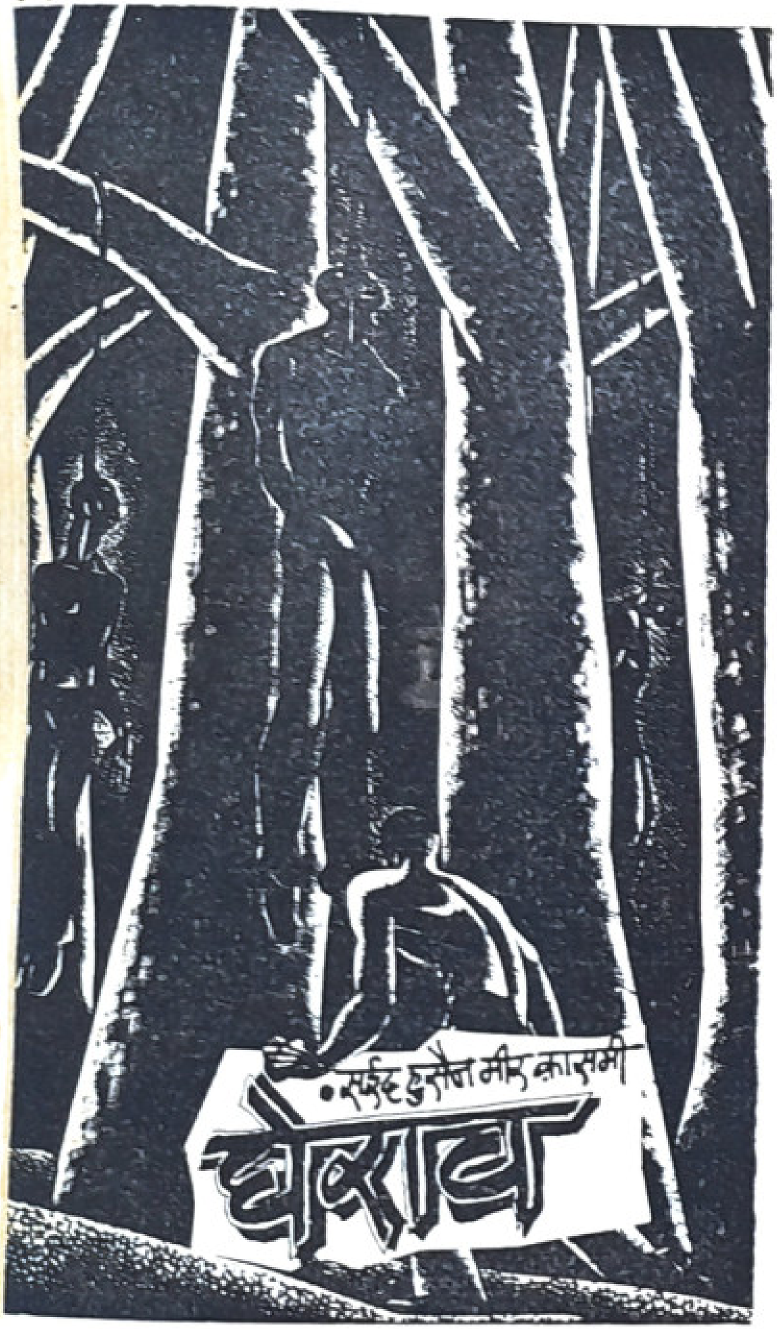

उस वक्त वे कैसे दिन रहे होंगे, जब फिरंगियों के खिलाफ 'वंदेमातरम्' गाते हुए हिंदुस्तानी, जान हथेली पर रखकर निकल पड़ते थे?... गांधी, नेहरू, सुभाष सब बेचैन थे?...आजाद, भगत सिंह की रातों की नींद उड़ गयी थी?—
लगभग वैसी ही स्थितियों में मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते ईरानी नागरिकों द्वारा रेगिस्तान में किये जा रहे विद्रोह की जीवंत कहानी—

घोड़े के पैर कच्चे रास्ते की भुरभुरी मिट्टी में धंस रहे थे और हर टाप पर मुट्ठी भर-भर गर्म मिट्टी पीछे फेंकने से धूल के बादलों का गुबार उसका पीछा कर रहा था. घोड़े पर बैठा तुर्कमान सवार 'कतूक' गांव की तरफ घोड़ा दौड़ा रहा था. धूप की तेजी में झुलसा उसका चेहरा और उस पर उसके विद्रोह का भाव धूल की सात पर्तों में भी झलक रहा था.

गांव पहुंचकर सवार सीधा पीखीखान के खैर के समाने रुका और घोड़े से नीचे कूदा.

"खुशआमदी! दमान, भले-चंगे तो हो?"

"गनीमत है पीखीखान!"

"शुक्र है! खेती में बरकत तो है इस साल?"

दमान ने बड़ी कठिनता से थूक निगला. दुख का रंग मुख पर आ गया, "जानते तो हो तुम...तीन साल से एक विलायती मेम हमारा खेत जुतवा रही है."

"मुझे मालूम न था दमान. क्या जमीन ने उस से वफा की है?"

"दो साल से नुकसान ही नुकसान है."

"इस साल?"

"जौ और गेहूं की फसल झुलस गयी. कपास की कोई भी उम्मीद नहीं..."

"आखिरी जो साल ठहरा उसका ... अब इस मरुभूमि से उसे निकाल दिया जायेगा."

"नहीं नहीं, पीखीखान! साहब बड़े पैसे वाली, बड़े प्रभाव वाली औरत है. बड़े-बड़े विलायती बैंकों, बड़े-बड़े विलायती लोगों से उसकी जान-पहचान है. फिर वह पानी का कुआं खुदवा रही है, उसके पानी से खेत सींचेगी, और जानते हो, बाद में यही जमीन उस से वफा करेगी."

"अल्लाह की मर्जी! मगर तुम करना क्या चाहते हो?"

"इसीलिए तो तुम्हारे पास आया हूं. साहब यानी उसी विलायती औरत पर हमला!"

पीखीखान चौंका. उसकी छोटी-छोटी आंखें फट गयीं. विचलित होकर बोला, "हमला! धावा! नहीं दमान, नहीं, अब यह वक्त इन चीजों का नहीं रह गया है."

"मदद करो पीखीखान, तुम तुर्कमान पठान हो. आक कबीले की शान और उसकी उम्मीद तुम हो. मेरा हाथ खाली है. मैं निहत्था हूं खान!"

पीखीखान ने लंबी ठंडी सांस खींची और बोला, "धैर्य से काम लो दमान, धैर्य से."

"नहीं खान, उत्तजना और दुख के मारे मेरी रातों की नींद उड़ गयी है, पागल-सा हो गया हूं. जब तक धावा नहीं बोलूंगा, मुझे चैन नहीं पड़ेगा. मदद करो पीखीखान! अपनी जगह से उठो. देखो, मेरा घोड़ा हिनहिना रहा है. उठो खान!"

रेगिस्तान आधे चांद की तरह क्षितिज तक फैला हुआ था. सूरज डूबने वाला था मगर फिजा में चमक और गर्मी अब भी बनी हुई थी. साहब एक ऊंचे कद की सेहतमंद खूबसूरत औरत थी. उसका पति शाही फौज में कर्नल था. बड़े-से छाते के नीचे जिसे नौकर पकड़े था, वह खड़ी थी और गिद्ध की तरह

पैनी आंखों से दूर तक फैली मरुभूमि का निरीक्षण कर रही थी. बोली, "रुस्तम जाबुली, हमें खेतों को दूर तक फैलाना है."

"कर्नल मेमसाहब, यह जमीन खद्दर है. इस बंजर धरती से कुछ पैदा होने वाला नहीं है."

"रुस्तम जाबुली, ऐसा कहकर मेरा मन छोटा मत करो. मेहनत करो. लगता है, दूसरा कुआं खुदवाना पड़ेगा."

"कर्नल मेमसाहब, इस साल को मिलाकर तीन साल हो गये हैं, आप पैसा पानी की तरह बहा चुकी हैं, मगर फूटी कौड़ी का अनाज नहीं निकला. अब आपकी उम्मीद कपास पर है और कपास. . . उसका कुछ पता नहीं."

साहब व्याकुलता से दूर तक फैली उबड़-खाबड़ बंजर पड़ी जमीन को देखने लगी. फिर वहां से निगाहें हटाकर अपने नये बोये खेत को परखने लगी. कपास की झाड़ियों को जैसे पीलिया हो गया था. बोली, "चुप रहो रुस्तम जाबली! मैं फिर पैसा पानी की तरह बहाऊंगी. . ."

दूर से आती जीप की आवाज में उनके स्वर दब गये. उन्होंने बड़े चाव से चेहरा घुमाया. आंखों में गर्मी छा गयी, बदन में जिंदगी उभरी, होठों पर उसका नाम दोहराया. कुत्ते भौंकते हुए जीप की तरफ लपके.

▣

काली घटाटोप रात थी. आक्रमण के लिए बेहतरीन रात. सवार आसपास के गांवों में आकर दमान के खेत के समीप जमा हो रहे थे. वे तैयार-बर-तैयार थे. जंग लगी तलवारें म्यान में कमर से लटक रही थीं. चेहरे रौद्र भयानक हो उठे थे. सारे सवार दस्ते के रूप में दमान की जमीन पर जमा हो गये. कुछ देर खड़े रहे. दमान घोड़े से कूदा. आवेश और क्रोध से उसका सारा वजूद बल खा रहा था, जैसे तड़प रहा हो. उन्होंने उस अंधेरे में अपनी धरती; अपने खेत को देखा. तब धरती भी मानो उसी भाव से आंखें फाड़कर उन्हें ही देख रही थी. बरसों बाद आज वे दोनों मिले थे, जैसे एक-दूसरे को दोबारा पा गये हों. दमान झुका, मुट्ठी भर खाक उठायी, उसे सूंघा. और सामने इमारत को, जिसके एक कमरे से रोशनी फूट रही थी, जलती आंखों देखा. उचक कर घोड़े पर सवार हो पीखीखान से आज्ञा ली और ललकारा, "हमला! हमला!"

सारे सवारों ने इस ललकार के साथ ही दमान के खेत को चारों तरफ से घेर लिया. सामने बंधे कुत्तों के बदन के बाल खड़े हो गये थे. वे भौंक रहे थे, घबरा-घबराकर जंजीर से बंधे इधर-उधर उछल रहे थे. शायद वे सारा माजरा समझ चुके थे. रुस्तम जाबुली के सारे मजदूर घबराकर अपनी झोंपड़ी से निकल आये थे. बच्चे डरकर रो रहे थे. औरतें भयभीत -सी वैन कर रही थीं. इस शोर-शराबे में सभी चकराये खड़े थे कि क्या करें! केवल रुस्तम जाबुली ही तेजी से दरवाजा पीटता हुआ कह रहा था, "कर्नल मेमसाहब! तुर्कमान चढ़ आये हैं, तुर्कमानों ने हम पर हमला बोल दिया है." दमान ने अपनी तलवार की नोक उसके मुंह पर कोंची. . .उधर सवारों ने दमान के खेत को जमकर घेर लिया.

दरवाजा खुला. पीखीखान, दमान और तुर्कमान सवार,

ER RAKESH
9716080365

कुंजी

चारों तरफ शोर था, भीड़ थी. अफवाह थी कि लड़ाई पर जाने वालों को इमाम साहब की ओर से एक-एक कुंजी मिल रही है. वह कुंजी लेकर भीड़ की भीड़ इराक युद्ध में शहीद होने को तैयार थी.

मशहद के कब्रिस्तान में एक बूढ़ी औरत बिलख रही थी. . . "इमाम खुमैनी, तुम्हारे ऊपर यह आखिरी बेटा भी कुर्बान कर दिया!"

शहीदों के जनाज़े हर नगर में रणक्षेत्र से भेजे जा रहे थे. किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि स्वयं इमाम, इराक में सद्दाम के ही समय में 15 वर्ष रहकर आये हैं, फिर सद्दाम अचानक काफिर कैसे हो गये?

मगर यह प्रश्नोत्तर का समय न था. दुश्मन बढ़ता ही चला आ रहा है. कुंजी पहने लोग सारे प्रश्नों के साथ मातृभूमि की रक्षा के लिए शहीद हो रहे हैं.

जन्नत के ताले की कुंजी तो उन्हें दे ही दी गयी है, फिर परेशानी क्या है?. . .मगर आजादी के ताले की कुंजी का क्या हुआ? □

▣ अब्बास मोहन दूस्त

साहब और उस लंबे-चौड़े आदमी के सामने फुंफकारते खड़े थे.

उन दोनों के अधनंगे बदन क्रोध और घृणा से कांप रहे थे. पीखीखान आक्रोश से चीखा, "कुत्तिया!"

सुनते ही कर्नल साहब तैश में आकर दहाड़े, "वहशियो! ज़लीलो! चलो, भागो यहां से."

दमान, जिसकी आंखों से आक्रोश की चिंगारियां निकल रही थीं, चिंघाड़ा, "विलायती मेम! कहां जायें हम?. . . यह मरुभूमि हमारी है. हमारी मातृभूमि है. हम यहां पैदा हुए हैं और इसी पर मरेंगे!"

साहब के चेहरे का रंग उड़ा, फिर मुंह बिगड़ गया. कड़कते हुए बोली, "भागो यहां से. . .वरना अभी शहाबखान से कहती हूं कि अपनी बंदूक से तुम्हें छलनी कर दे."

अपना नाम साहब की जबान से सुनते ही शहाबखान ने चीते जैसी छलांग मारी, "लानत है तुम्हारे इस रेगिस्तान पर." और बंदूक उठाने लपका. खचाखच–खचाखच. . . दर्ददनाक चीखें, शमशीरों और तलवारों की झंकारों से एकाएक बुलंद हुईं. . .और इमारत से उठती लपटों की जर्द रोशनी मरुभूमि की कालिमा में दूर-दूर तक फैलने लगीं.

दूसरे दिन दोपहर का समय था. . .और आक (एक कबीला) पूरी तरह शाही सीमा पुलिस के घेराव में था. □

सितार

• जलाल आल अहमद

धर्म के नाम पर आप अपने-आपको हिंदू-सिख-ईसाई-मुस्लिम कुछ भी कह सकते हैं, लेकिन क्या हमारे धर्मस्थल गीत-संगीत और साज का बंटवारा भी कर सकते हैं?—मस्जिद में सितार बजाकर दुखभरा राग छेड़कर इन्सान के मन के तार हिला देने की इच्छा रखने वाले संगीतकार की दर्दभरी कहानी

वह हाथों में बिना गिलाफ का नया सितार पकड़े था. उसकी कमीज के बटन खुले थे. अपने में खोया वह मस्जिदे शाह की सीढ़ियां चढ़ रहा था. नीचे छोटी-मोटी चीजों की तमाम सारी दूकानें बिखरी थीं, जिनके चारों तरफ लोगों का मेला लगा हुआ था. सामानों को उलटते-पलटते क्या ढूंढ़ रहे हैं, शायद उन ग्राहकों को भी पता न था. वह इस भीड़ से बचता-बचाता सितार को पेट से चिपकाये और तारों को दोनों हाथों से दबाये बड़ी सावधानी से इस भीड़ को चीरता हुआ निकल रहा था. उसे भय था कि कहीं सितार के तार किसी के बटन या किसी मजदूर द्वारा उठाये गये सामान में उलझकर टूट न जायें.

अपनी इच्छा की पूर्ति में आज वह कामयाब हो गया था. अब न उसे किसी के आगे हाथ फैलाने की जरूरत थी, न उधार मांगने की. अब उसके पास स्वयं उसका साज है, जब चाहे समारोहों में जा सकता है. उसे अब इसका न तो किराया देना पड़ेगा और न ही किसी के नखरे सहने पड़ेंगे.

वह सोच रहा था कि अब जब वह संगीत समारोह में जायेगा तो उसका मन इस भय से मुक्त होगा कि उसके रस में डूबे मिजराबों से कहीं तार टूट न जायें और सितार का मालिक उसकी जिंदगी के सारे तारों को कस न दे. इस चिंता से पूर्णतया मुक्त हो वह सोचने लगा कि अब इस सितार को तन्मय होकर बजायेगा. यश और कीर्ति दोनों हाथों से लूटेगा और इन तारों से ऐसा दुखभरा संगीत छेड़ेगा, जिसे बर्दाश्त करने की ताकत उसमें नहीं होगी और वह रो पड़ेगा! उसके हृदय में बरसों से इच्छा थी कि एक दिन जब वह खूब अच्छा बजायेगा तो रोयेगा भी. उसने प्रण कर रखा था कि तब सितार की अपनी धुन पर केवल रोयेगा. अभी तक कभी भी उसने अपने लिए सितार के तार नहीं छेड़े थे, अपनी पसंद का राग नहीं गाया था, बल्कि जनता की मांग पर उसकी उंगलियां थिरकती थीं, उन लोगों के लिए उसने सितार बजाया था, जिनकी खुशियां, जिनके अरमान उनसे रूठकर दूर चले गये थे और वे उस खुशी, उस तमन्ना को उसकी छेड़ी दर्दभरी स्वर-लहरी में ढूंढ़ते थे.

उन सारे समारोहों में, जो खुशी के मौकों पर संपन्न हुए थे, उसने जो गाने गाये थे और सितार बजाया था, वह लोगों के लिए एक तफरीह थी, मगर उसके लिए एक पीड़ा. अब वह उस नम्रता और सहनशीलता को पीछे छोड़ देगा. उसने अपनी पूंजी से यह सितार खरीदा है. जी भरकर बजायेगा, तेज और धीमी धुनें निकालेगा.

तीन वर्ष से वह गाने-बजाने का

काम कर रहा है. इसीलिए स्कूल भी उससे छूट गया था. पहले वर्ष तो उसने अपने को सारी सारी रात गा-गाकर तोड़ ही लिया था.

कुछ समय बाद उसने अपना कार्य-क्रम ठीक तरह से संचालित करना शुरू कर दिया. तमाम सारे निमंत्रण मिलने और लोगों के इसरार करने पर भी वह हफ्ते में दो-तीन कार्यक्रमों से अधिक में सम्मिलित न होता. धीरे-धीरे वह प्रसिद्ध हो रहा था.

▣

इसके बावजूद उसकी यह रातें बड़ी सख्त गुजरती थीं. मां देख रही थी कि वह दिन-प्रतिदिन अधिक दुर्बल और थका नजर आने लगा है, मगर स्वयं उसका ध्यान अपनी ओर न गया. उसका तो बस एक ही अरमान था कि वह एक सितार खरीद ले और जिस तरह से उसका मन करे, वह उसे बजा सके. यह सब आसानी से तो होना न था, मगर पिछले दिनों उसकी यह इच्छा पूरी हो गयी. एक विवाह समारोह में लोगों ने खुश होकर उसे कुछ अधिक ही इनाम दे दिये. आज उसने यह सितार उन्हीं पैसों से खरीदा है. अब उसकी तो बस एक ही इच्छा है कि कैसे वह तुरंत घर पहुंचे, तारों को कसे और मिजराब से उन्हें छेड़े और मस्ती के उसी आलम में पहुंच जाये, जिसमें वह दूसरों के लिए राग छेड़ता था और उसमें डूबता दूर निकल जाता तो लौटने का मन ही न करता, मगर तब यह कैसे मुमकिन था. वह तो दूसरों की खुशी के लिए बजाता था. इन सारी बातों के बावजूद वह तन्हा था. अपने लिए, अपने मन के लिए कोई साथी ढूंढ़ न पाया, जो उसे उसके खाली मन को उष्णता से भर देता. जाड़े की लंबी ठंडी रातों में जब बदन से एक एक बूंद निचोड़ संगीत सभाओं से थका और परेशान लौटकर उस अंधेरे में अपना घर ढूंढ़ता तो उस गर्म स्पर्श के लिए व्याकुल हो उठता, जिसके लिए उसका मन प्यासा था.

वह बहुत कमजोर-सा दुबला लड़का था. पहली नजर में नशे का मारा लगता, मगर आज की लगभग एक घंटे की इस प्रसन्नता और उत्तेजना के झूले में झूलने से उसके फीके गालों पर लाली दौड़ गयी थी. चेहरा जिंदगी से भर गया था. जब से वह सितार का मालिक बना था, उसके वजूद में एक गर्म लहर-सी दौड़ रही थी, जिंदगी से भरपूर.

अपनी सोच में डूबा वह मस्जिदे-शाह की चौखट पर पहुंच गया था और उसके संगमरमर के सफेद चबूतरे पर उसने कदम रखा ही था कि अत्तार का लड़का, जो मस्जिद के किनारे अपनी दूकान में किसी ग्राहक की प्रतीक्षा में बैठा था और खिन्नता से तस्वीह के मनकों को घुमाकर दिल बहला रहा था, एक ही छलांग में अपनी बिसात के ऊपर से कूदा और उसकी कलाई पकड़ ली, "काफिर! इस कुफर के साज के साथ मस्जिद में? खुदा के घर में?"

उसकी भावनाओं के तार टूट गये. वह गर्मी, जो बरसों बाद उसने अपने आपमें महसूस की थी, गायब हो गयी. अभी तक दूसरे लोगों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित नहीं हो पाया था. सब लोग अपने-अपने बिसातों में व्यस्त, खरीदने-बेचने में लगे हुए थे. वह कुछ बोला नहीं. बस, अपनी कलाई छुड़ाने की कोशिश की, ताकि आगे बढ़ सके, मगर इत्र बेचने वाला लड़का उसे छोड़ ही न रहा था. उसने एक बार फिर कोशिश की कि अपनी कलाई उसके हाथों से छुड़ा ले और अपनी राह निकल जाये, मगर लड़का इतनी आसानी से उसे छोड़ना नहीं चाह रहा था.

लग रहा था कि कुछ होकर रहेगा, मगर उसकी अब पहली-सी वह हालत न थी. दिल में फिर से गर्मी आ गयी और वही गर्मी उसने अपने दिमाग में भी महसूस की. एकदम से वह उबला और दूसरे हाथ से एक जोर का झापड़ उस लड़के के गाल पर जड़ दिया. लड़के की सांस ठहर गयी.

▣

एकदम से उसने देखा कि फिर तेजी से लपककर वह सितार को हाथ में थामे मस्जिद में जाना चाहता है. उसने फिर से उसकी कलाई पकड़ ली. कोई भी कुछ समझ नहीं पा रहा था. उसकी समझ में खुद भी कुछ नहीं आ रहा था. होश में तो वह तब आया, जब उसके सितार का लकड़ीवाला हिस्सा जमीन से टकराया, एक मुलायम झनझनाती आवाज गूंजी और सितार तीन टुकड़ों में बिखर गया. वह हैरान-सा किनारे खड़ा सामने जमा भीड़ को ताक रहा था. अत्तार के लड़के को विश्वास हो गया था कि उसने अपने धार्मिक कर्त्तव्य को भलीभांति अंजाम दे दिया है. हल्का होकर वह अपनी दूकान के समीप पहुंचा, बिसात को पार कर अपनी जगह पर बैठा और संतोष की सांस ली. अपना बिगड़ा हुलिया ठीक किया और बड़े इत्मीनान के साथ पहले की तरह बैठ गया, मगर उसके सारे जज्बात आपस में उलझे, लिपटे, सितार के उन टुकड़ों पर पड़े, जो उसकी अंतरात्मा को काटते उसके मस्तिष्क में घुसने की राह ढूंढ़ रहे थे. उसकी आशाओं का महल सितार के तन की तरह टुकड़ों में बिखर गया था. टुकड़ों के नीचे दबा उसका दिल खून के आंसू रो रहा था. □

▣ जलाल आल अहमद :

पत्रकार पहले रवायती इन्कलाबी थे. बाद में तोदे पार्टी से जुड़े और फिर धार्मिक विचारधारा से प्रभावित हो गये. रूढ़िवाद के खिलाफ लिखने के कारण जलाल को सावाक पुलिस ने खत्म कर दिया. इनकी पत्नी सीमिन दानिश्वर ने एक उपन्यास 'स्ववोशन' लिखा, जो इनके दुख और लाचारी की लंबी दास्तान है. फारसी कहानी को नयी दिशा देने वालों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है.

ER RAKESH
9716080365

काली छोटी मछली

• समद बहरंगी

एक छोटी काली मछली की यात्रा, चश्मे से लेकर समुद्र तक की. अपनी चश्मे की छोटी दुनिया को छोड़कर वह जैसे-जैसे बड़ी दुनियाओं की ओर बढ़ती गयी, एक से एक बड़ी मुसीबतें उसके सामने आती रहीं. और आया एक बहुत बड़ा सवाल—आखिर ये बढ़ते हुए खतरे किस सभ्यता की देन हैं?

चिल्ले की रात थी. समुद्र के अंदर बूढ़ी मछली अपने बारह हजार बच्चों, पोतों और नवासों के बीच बैठी कहानी सुना रही थी.

बहुत समय पहले की बात है कि एक काली छोटी मछली अपनी मां के साथ एक चश्मे में रहा करती थी. यह चश्मा पहाड़ के पथरीले सीने से फूटता हुआ दर्रे के बीच से होकर बहता था. इस छोटी मछली का घर काली चट्टान के पीछे था, जहां वे दोनों मां-बेटी काई की छत के नीचे रात को सोती थीं. छोटी मछली के मन में बड़ी तमन्ना थी कि वह सूरज की चमकीली किरणों को अपने घर में चमकता देखे.

छोटी मछली अपनी मां की इकलौती बेटी थी. मां के दस हजार अंडों में से यही एक औलाद सही-सलामत निकली थी. कुछ दिनों से वह बड़ी खामोश थी, जैसे किसी गंभीर समस्या के हल में डूबी हो. सुस्ती से भरी अनमने मन से इधर से उधर धीरे-धीरे तैर रही थी. अधिकांश समय वह मां के पीछे रह जाती थी. मां समझ गयी थी कि बेटी की तबीयत आज जरा भारी है. यह थकन और अनमनापन शीघ्र ही दूर हो जायेगा. मगर वह यह नहीं जानती थी कि काली छोटी मछली का दुख कुछ और ही था.

एक दिन सुबह, अभी सूरज निकला नहीं था कि छोटी मछली ने मां को सोते से जगाया और कहा, "मां, मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूं."

मां नींद से उनमादे स्वर में बोली, "जिगर के टुकड़े, बात कहने का यह कौन-सा समय चुना है! बात फिर करेंगे, अभी तो घूमने चलते हैं." छोटी मछली बोली, "नहीं मां, अब मैं घूमने-फिरने में समय बरबाद नहीं करूंगी. मुझे इस जगह से कहीं दूर जाना है."

मां ने प्रश्न किया, "बहुत जरूरी है तुम्हारा जाना?"

"हां मां, बहुत जरूरी है मेरा जाना. मैं जरूर जाऊंगी."

"इतनी सुबह आखिर तुम जाना कहां चाहती हो?"

छोटी मछली ने कहा, "चाहती हूं, जाकर देखूं कि इस चश्मे का अंत कहां है? मां, मैं कई महीनों से इस उलझन में हूं कि आखिर इस चश्मे का अंत कहां होता है? मगर अफसोस! अभी तक कुछ भी जान न पायी. कल रात इसी सोच में डूबी पलभर भी पलक न झपका पायी. अंत में मैंने फैसला कर लिया है कि मैं स्वयं जाऊं और जाकर इस चश्मे को देखूं. दिल चाह रहा है कि यह भी जानूं कि दूसरी जगहें कैसी हैं, क्या हो रहा है वहां?" मां को बेटी की बातें सुनकर हंसी आ गयी, "मैं जब छोटी थी तो इसी प्रकार के विचारों से मेरा मस्तिष्क परेशान रहता था, मगर प्यारी बेटी, वास्तव में न चश्मे का कोई आरंभ है न अंत! जो है यही है, जो तुम स्वयं देख रही हो, चश्मा हमेशा बहता रहता है और कहीं पहुंचता भी नहीं है."

छोटी मछली ने प्रश्न किया, "आखिर मां, क्या यह बात

सही नहीं है कि हर चीज अपने अंत तक पहुंचती है? रात समाप्त होती है, दोपहर ढलती है, दिन गुजरता है, इसी तरह से सप्ताह, मास, वर्ष. . ." मां ने बेटी की बात बीच में ही काटते हुए कहा, "इतनी बड़ी-बड़ी बातें तुम्हें कहां से करनी आ गयी हैं? चलो, चलकर घूमते हैं. यह समय सैर का है, ऐसी बातों का नहीं!"

काली छोटी मछली बोली, "नहीं मां! मैं सच कहती हूं, इस घूमने-फिरने, सैर-सपाटे से मैं अब थक चुकी हूं. मैं कुछ और करना चाहती हूं. इस दुनिया को देखना चाहती हूं, घूमना चाहती हूं. देखूं तो वहां क्या हो रहा है?

मां ने बेटी की पूरी बात सुनी और बोली, "मेरी नन्हीं बेटी, इसी को दुनिया कहते हैं. जहां हम जी रहे हैं, और इसी को जिंदगी कहते हैं, जो हम गुजार रहे हैं."

इसी समय एक बूढ़ी मछली उनके घर के समीप से गुजरी और बोली, "पड़ोसन, किस बात को लेकर लड़की से उलझ रही हो? क्या आज घूमने का कोई इरादा नहीं है?"

पड़ोसन की आवाज सुनकर मां बाहर निकली, "कलयुग आ गया है. औलाद मां को उपदेश देने लगी है."

"क्या हुआ?" पड़ोसन ने पूछा

मां ने कहा, "तुम्हीं देखो, बालिश्तभर की छोकरी. कहां जाना चाहती है! लगातार एक ही बात की रट लगाये हुए है कि मैं दुनिया घूमूंगी. जाकर देखूंगी, क्या हो रहा है वहां? कैसी बड़ी-बड़ी बातें हैं इसकी?" पड़ोसन बोली, "अरे छटंकी, कब से तुम दार्शनिक और ज्ञानी बन बैठीं, हमें बताया भी नहीं?"

मां बोली, "मैंने तो कभी सोचा भी न था कि मेरी औलाद, वह भी इकलौती, ऐसी निकलेगी एक दिन! नहीं समझ पा रही हूं कि इस मासूम को बहकाने के पीछे किसका हाथ है?"

छोटी मछली ने कहा, "न किसी ने मुझे बहकाया है, न बरगलाया है. मेरे पास खुद अकल और समझ है. मैं जो देखती हूं, समझती हूं, वही जबान पर लाती हूं."

पड़ोसन ने मां से कहा, "बहन, उस घोंघे की खुसुर-फुसुर कुछ याद है?"

मां ने चौंककर कहा, "खूब याद दिलाया, वह तो सच-मुच मेरी बेटी के पीछे हाथ धोकर पड़ा हुआ था. अब तुम्हीं कोई तरकीब बताओ कि मैं अपनी बेटी को सुधारूं!"

छोटी मछली बोली, "बस करो मां, उसे कुछ मत कहना. वह मेरा मित्र था."

मां बोली, "मित्रता मछली और घोंघे की! एसा पहले तो कभी नहीं सुना था."

छोटी मछली बोली, "मैंने भी आज तक मछली और घोंघे की शत्रुता नहीं सुनी है, मगर आप लोगों ने तो उसका काम ही तमाम कर दिया."

पड़ोसन बोली, "यह तुम पुरानी बातें दोहरा रही हो."

छोटी मछली बोली, "आप ही गुजरी बातों को याद दिला रही हैं."

मां बोली, "ठीक तो कह रही है. इधर-उधर बैठा कैसी बातें बनाया करता था."

छोटी मछली बोली, "फिर मुझे भी वही दंड दीजिए, क्योंकि मैं भी उसी तरह की बातें बना रही हूं."

इनके बीच होते वार्तालाप की ऊंची उठती आवाजों ने इधर-उधर की मछलियों को अपनी ओर आकर्षित कर लिया. उन्हीं में से एक बूढ़ी मछली बोली, "तुम हो किस खयाल में कि हम तुम पर रहम खायेंगे?"

दूसरी बोली, "कान मरोड़ना काफी है."

काली मछली की मां चीखी, "छोड़ो, दूर हटो! मेरी बच्ची को हाथ मत लगाना!"

उन्हीं में से एक बोली, "जब बच्चों का लालन-पालन उचित ढंग से नहीं होता है तो फिर यही दिन देखने को मिलता है!"

एक पड़ोसन बोली, "मुझे तो शरम आ रही है कि मैं तुम्हारे पड़ोस में रहती हूं."

दूसरी बोली, "इससे पहले कि लड़की हाथ से निकल जाये, इसे बूढ़े घोंघे के पास भेज दो!"

मछलियां चारों तरफ से आगे बढ़ीं, ताकि काली छोटी मछली को पकड़ें. मगर उसकी दोस्तों ने झट उसे घेरे में लिया और तेजी से तैरती हुई मछलियों से दूर निकल गयीं. मां ने रोते हुए सिर व सीना पीटना आरंभ कर दिया, "हाय मेरी बेटी, मेरे हाथों से निकल गयी! मैं क्या करूं?

छोटी मछली बोली, "मां! मेरे लिए आंसू मत बहाओ, बल्कि इन बड़ी खूसट मछलियों की हालत पर रोओ, जो कुछ भी नहीं समझती हैं."

एक मछली यह सुन दूर से चिल्लायी, "बालिश्त भर की छोकरी, हमारा यूं अनादर न कर!"

दूसरी बोली, "जा तो रही है, अगर पछताकर लौटी तो फिर अच्छी तरह खबर ली जायेगी."

तीसरी बोली, "यह जवानी का जोश है, यूं मत जाओ!"

मां ने सुबकते हुए कहा, "मेरी जान! मेरे ऊपर रहम खाओ, मत जाओ, मत जाओ!"

छोटी मछली पर इन सारी पुकारों, फरियादों, उपदेशों का कोई प्रभाव न पड़ा. वह अपनी मित्रमंडली के साथ तैरती हुई आगे बढ़ने लगी. जलप्रपात तक उसकी सखियां उसे छोड़-कर वापस आ गयीं.

छोटी मछली पानी के तेज बहाव के साथ ऊपर से नीचे पानी से भरे ताल में गिरी! पहले तो वह बड़ी सटपटायी, फिर अपनी घबराहट पर काबू पा धीरे-धीरे तैरना और घूमना शुरू कर दिया. इससे पहले उसने इतनी बड़ी मात्रा में जमा पानी नहीं देखा था. ढेरों मेढकों के भेक उस पानी में लोट रहे थे. काली मछली को देखा तो मजाक उड़ाते हुए बोले, "इसका हुलिया तो देखो! यह कौन-सा जीव है?"

मछली ने बड़ी सहिष्णुता से कहा, "मेहरबानी करके आप मेरा उपहास न करें. मेरा नाम काली छोटी मछली है, आप भी अपना परिचय दें, ताकि हम एक-दूसरे से परिचित हो सकें." एक मेढक के भेक ने कहा, "हम तो एक-दूसरे को छुछमछली कहकर पुकारते हैं."

दूसरी बोली, "खानदानी हैं."

तीसरी बोली, "हम जैसा सुंदर यहां दूसरा तुम्हें नही दिखेगा."

चौथी बोली, "तुम्हारी तरह बेढंगी और बदसूरत नहीं हैं हम!" काली छोटी मछली बोली, "मैंने सोचा नहीं था कि तुम लोग इतनी आत्मकेंद्रित और इतनी आत्ममोहित होगी. खैर छोड़ो! मैंने तुम्हें क्षमा किया, क्योंकि तुम लोग यह सारी बातें अपनी नादानी के कारण कर रही हो."

सब छुछमछलियां एक जबान होकर चीखीं, "यानी हम सब नादान हैं?"

मछली बोली, "अगर नादान न होतीं तो ऐसी बातें हो क्यों करतीं. तब जानती कि बहुत सारे जीव ऐसे हैं, जिनका रूप-लावण्य उनके लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है, और तुम लोगों का तो यह हाल है कि तुम्हारा नाम भी तुम्हारा अपना नहीं है."

सारी छुछमछलियां क्रोधित हो उठीं, मगर वे समझ गयीं कि मछली की बातों में किसी हद तक सच्चाई है. फौरन बात पलटकर बोलीं, "तुम तो हवा से लड़ रही हो? हम सुबह से शाम तक दुनिया घूमते हैं, मगर अपने मां-बाप के अलावा हमने किसी को नहीं देखा. अगर देखा है तो छोटे-मोटे कीड़े मकोड़ों को, मगर उनकी गिनती ही क्या है हमारे सामने!"

मछली ने कहा, "इस तलैया के पानी से कभी बाहर भी निकली हो कि यूं ही दुनिया को देखने का भ्रम पाले हुए हो?"

"इस तलैया से बाहर भी कोई जगह है?"

मछली बोली, "कम से कम इतना ही सोचो कि यह पानी ऊपर कहां से आ रहा है और बहकर कहां जा रहा है? इस पानी के अलावा और किन वस्तुओं का वजूद है."

छुछमछली बोली, "पानी से बाहर कौन-सी जगहें हैं? हमने तो पानी के अलावा कुछ देखा ही नहीं है? हा हा हा हा, क्या गप्पें मार रही है यह काली छोटी मछली!"

अब काली मछली को भी हंसी आ गयी. वह सोचने लगी कि उचित यही है कि इनको इनके हाल पर छोड़ दिया जाये और आगे बढ़ा जाये.

आगे संकरी घुमावदार घाटी थी और चश्मे का पानी कई गुना बढ़कर चक्कर काटता बह रहा था. अगर वह यहां से पहाड़ की ओर दृष्टि घुमाकर चश्मे को देखना चाहती, तो वह केवल एक बारीक सफेद धागे जैसा नजर आता. पहाड़ से एक बड़ी चौड़ी शिला बाहर को निकली हुई धार में फंसी हुई थी और पानी को दो धाराओं में बांट रही थी. एक बड़ी-सी छिपकली पत्थर पर पेट के बल लेटी धूप सेंक रही थी. नीचे पानी में छिपे चौड़े-मोटे केकड़ों को देख रही थी, जो खामोशी से छुछमछली और मेढ़कों का शिकार कर रहा था. उसे देखकर छोटी मछली डर गयी और घबराहट में सलाम कर गयी.

"कैसी बदतमीज मछली है! इधर करीब आओ छटंकी!"

छोटी मछली बोली, "मैं दुनिया के सफर पर निकली हूं, महाशय के मुंह का कौर मुझे नहीं बनना है."

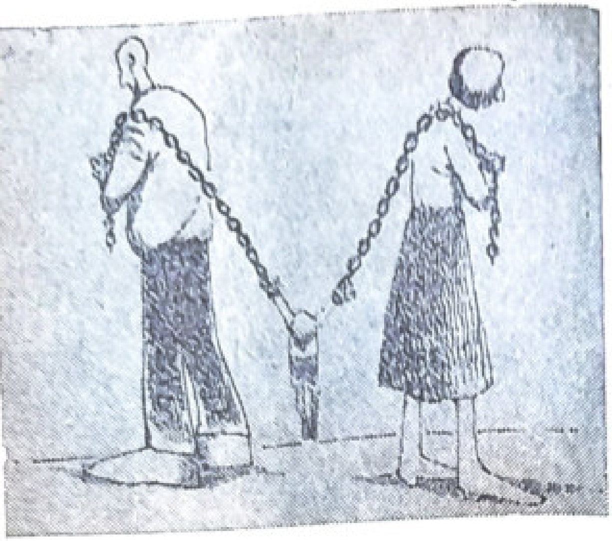

केकड़े ने कहा, "तुम वास्तव में कितनी छिद्रान्वेषी हो, कितनी भयभीत हो छोटी मछली?"

छोटी मछली ने कहा, "खूब! न मैं छिद्रान्वेषी हूं, न भयभीत. मेरी आंखें जो देखती हैं और दिमाग जो समझता है, वही मेरी जबान से निकलता है."

केकड़े ने कहा, "अच्छा! तो फिर देखूं तो तुम्हारी आंखें और दिमाग क्या कहते हैं? तुम इस गलतफहमी में हो कि हमलोग तुम्हारा शिकार करना चाहते हैं?"

मछली ने कहा, "अब बात को दूसरी तरफ मत मोड़िए."

केकड़े ने कहा, "तुम्हारा इशारा मेढक की तरफ है. तुम तो एकदम बच्चों की तरह सोच रही हो. मैं तो स्वयं मेढकों से घृणा करता हूं. अपनी इसी चिढ़ के कारण मैं उनका शिकार करता हूं. जानती तो हो तुम कि यह अपने को बड़ा महान समझते हैं. सोचते हैं कि यही केवल संसार में भाग्यशाली जीव हैं, अरे मैं इसीलिए इन्हें सबक सिखाना चाहता हूं कि आखिर दुनिया है किस के हाथों में! बस बेटी, फिर मुझसे क्या डरना, आओ आओ, करीब आओ." केकड़े ने चाटुकारिता से कहा और मछली की तरफ बढ़ने लगा. इतने मजाकिया अंदाज से वह घिसट रहा था कि छोटी मछली अपनी हंसी न रोक सकी और ठहाका मारकर बोली, "तुम रास्ता तो चलना जानते नहीं हो. तुम क्या खाक समझे हो कि दुनिया किसके हाथ में है?" इतना कहकर काली मछली केकड़े से दूर हट गयी. एक बड़ी छाया पानी पर उभरी और केकड़े को बालू में दबा गयी. केकड़े के मुख के भाव देख छिपकली अपनी हंसी न रोक सकी. और ऐसा खिलखिलायी कि फिसलकर नीचे पानी में गिरने को हुई. केकड़ा फिर बालू से बाहर न निकल पाया. काली मछली ने देखा कि एक छोटा गडरिया लड़का पानी के किनारे खड़ा केकड़े और उसको देख रहा है. भेड़ और बकरियों का झुंड पानी के पास आया और पानी में मुंह डाला. 'माऽऽ माऽऽ बाऽऽ बाऽऽ' की आवाजों से घाटी गूंज उठी. छोटी मछली तब तक चुप रही, जब तक वह लड़का अपनी भेड़-बकरियों के साथ लौट न गया. फिर उसने छिपकली को पुकारा, "छिपकली जी! मैं काली

छोटी मछली हूं. मैं चश्मे का अंत ढूंढने निकली हूं. आप तो बड़ी समझदार और बुद्धिमान हैं. मुझे आपसे कुछ पूछना है."

छिपकली बोली, "जो चाहो पूछ लो."

"रास्ते में मुझे जलसिंह पक्षी, शार्क मछली और बगुले से लोगों ने डराया है. अगर आपको इनके बारे में कुछ पता हो तो मुझे बताने का कष्ट करें!"

छिपकली बोली, "शार्क और बगुला यहां नजर नहीं आते हैं, विशेषकर शार्क मछली समुद्र में मिलती है. मगर जलसिंह यहीं थोड़ा नीचे जाने पर तुम्हें नजर आयेंगे और तुम धोखा खाकर हो, सकता है, उसकी थैली में चली जाओ."

छोटी मछली ने पूछा, "थैली कैसी?"

छिपकली बोली, "जलसिंह पक्षी की गर्दन के नीचे एक थैली-सी बनी होती है. जब वह पानी में नहाता है तो अनजाने ही मछलियां उसकी थैली में बह आती हैं. अगर वह भूखा नहीं होता है तो मछलियां पड़ी रहती हैं, अगर भूखा हुआ तो फौरन उन्हें निगल लेता है.

छोटी मछली ने पूछा, "अगर मछली थैली में फंस जाये, तो निकास का कोई रास्ता है या नहीं?"

छिपकली बोली, "नहीं, जब तक थैली फाड़ी न जाये, निकलना कठिन है. मगर मैं तुम्हें एक खंजर दे रही हूं जो तुम अपने पास रखना. फंस गयी तो निकलने की कोशिश करना." यह कहकर वह पत्थरों के बीच छेदों में से किसी एक में सरक गयी, फिर एक खंजर लिये लौटी. मछली उससे खंजर लेकर बोली, "छिपकली जी, आप कितनी दयावान हैं. किस जबान से और किन शब्दों में मैं आपको धन्यवाद दूं."

छिपकली बोली, "धन्यवाद देने की कोई आवश्यकता नहीं है, मेरे पास ऐसे खंजरों का खजाना है. मैं जब बेकार होती हूं तो घास से बैठे-बैठे ऐसे बहुत से खंजर बनाती हूं, फिर मछलियों को और तुम जैसी बुद्धिमानों को भेंटस्वरूप दे देती हूं."

छोटी मछली ने पूछा, "क्या मेरे अलावा इधर से और मछलियां भी गुजरी हैं?"

छिपकली बोली, "असंख्य! अब तो वह अपने में एक समूह बनकर मछियारे को नाकों चने चबवाती होंगी."

काली मछली बोली, "क्षमा कीजिएगा, मैं बाल की खाल नहीं निकाल रही हूं, मगर मैं जानना चाहती हूं कि मछलियां मछियारों को कैसे नाकों चने चबवाती होंगी?"

छिपकली बोली, "यही न कि सारी मछलियां एक साथ समूह में घूमती हैं. जब जाल में फंस जाती हैं तो जाल को खींच नीचे समुद्र में ले जाती हैं." छिपकली ने पत्थर से कान लगाते हुए कहा, "अब मैं चलती हूं. मेरे बच्चे जाग गये हैं."

काली छोटी मछली तैरती हुई आगे बढ़ रही थी, मगर उसका मस्तिष्क दुगने वेग से दौड़ रहा था. वह हर फलांग पर एक नयी चीज को देख रही थी, सुन रही थी, सीख रही थी! अब उसके मन को जलप्रपात के बहते बहाव के साथ नीचे गिरना अच्छा लग रहा था. उसका दिल चाह रहा था,

ER RAKESH
9716080365

जमाने की मांग

▣ म. द. जोहरा

ईरान में 'शाह पर लानत' के नारों का सैलाब था. अखबारों में 'शाह के अत्याचारों' की चर्चा थी. कहानियों में उसके द्वारा की गयी हिंसात्मक घटनाओं का लेखा-जोखा था.

कविताओं में उसके द्वारा दिये गये दुखों का तराना था. गरज कि हर तरफ शाह ही शाह का तहलका मचा हुआ था.

"शाह ईरान का गौरव था, शाह पश्चिम एशिया की नब्ज था, यह आज कोई लिखे तो मैं उसे लेखक समझूं!"

"ऐसी मूर्खता की बात कोई क्यों लिखने लगा? जमाने की मांग और तकाजा कुछ और कह रहा है कि शाह ईरान छोड़कर जाये. उसकी प्रशंसा सेआपका अर्थ क्या है?"

"नमक हलालो! तुम्हारा कहना उचित है कि आज जमाने की मांग और तकाजा कुछ और है, मगर आज से मैं तुम्हें एक बेबाक लिखने वाला तसलीम करने से इन्कार करता हूं, क्योंकि तुममें गट्स नहीं हैं!"

"कैसे?"

"अगर होते तो सच्चाई लिखते, जो कल हमारे सामने साफ खुलकर आयेगा, मगर तुम्हारी कलम आज के अधीन है, और आज तो यह हालत है कि अगर खुद शाह यह सब खुली आंखों से देखे, तो इस शोरगुल और हंगामे को देखकर भीड़ में खुद शामिल होकर चिल्लाने लगेगा, 'शाह पर लानत!' क्योंकि जमाने की मांग यही है. ❑

नस पर नस ?

आयोडेक्स मलिए, जो
पीड़ा हरे, अच्छा करे
दूसरे बाम पीड़ा से आराम भले पहुंचाएं. आयोडेक्स आराम पहुंचाने के साथ साथ अच्छा भी करता है, क्योंकि इसमें आयोडीन मिली है.
जोड़ों और मांसपेशियों की पीड़ा के लिए एकमात्र बाम — आयोडेक्स.

आयोडेक्स मलिए-
काम पर चलिए
लिंटास-IODEX 26 207 HI

फिर वह उसी तरह ऊपर से उछलती-कूदती आये और नीचे आकर तैरने लगे. चमकते हुए सूरज की गर्मी उसको अपनी पीठ पर महसूस हो रही थी और उसको एक अद्‌भुत स्फूर्ति बख्श रही थी. कुछ दूर पर एक हिरनी को जल्दी-जल्दी पानी पीते देख मछली समीप गयी और बोली, "सुंदर हिरणी, इतनी जल्दी में क्यों हो?" हिरणी ने उत्तर दिया, "शिकारी मेरा पीछा कर रहा है. एक गोली भी उसने मुझे मारी है, यह देखो!" छोटी मछली उसके दिखाने पर उसके गोली का घाव न देख सकी, मगर दौड़ते हुए लंगड़ाते देखकर लगा कि वह सच बोल रही थी. किनारे पर कछुए धूप सेंकते ऊंघ रहे थे. फाखताओं की आवाजों से घाटी गूंज रही थी. पहाड़ों पर उगी वनस्पति की सुगंध पानी में घुलमिल गयी थी.

दोपहर के समय मछली तैरते-तैरते ऐसी जगह पर पहुंची, जहां घाटी जरा चौड़ी हो गयी थी, और आगे जाकर पानी चौड़ाई में बह रहा था. यहां पर आकर पानी इतना अधिक हो गया था कि काली मछली को मजा आ गया. फिर बहुत सारी मछलियों को उसने देखा. जब से वह मां से जुदा हुई थी, किसी मछली से अभी तक उसकी भेंट नहीं हुई थी. मछलियां उसके समीप पहुंची, उसे घेरकर बोलीं, "लगता है, अजनबी हो यहां?"

"हां, मैं मुसाफिर हूं. बड़ी दूर से आ रही हूं." मछली ने उत्तर दिया. उस नन्हीं-मुन्नी मछली ने पूछा, "कहां जाना चाहती हो?"

काली मछली ने कहा, "जा रही हूं, इस चश्मे का अंत देखने."

नन्हीं-मुन्नी मछली बोली, "कौन-सा चश्मा?"

छोटी काली मछली बोली, "अरे यही चश्मा, जिसमें तुम रहती हो?"

नन्हीं-मुन्नी मछली बोली, "हम इसे नदी कहते हैं. . . "

तुरंत ही मछलियों के बीच यह खबर फैल गयी कि काली छोटी मछली बड़ी दूर से आयी है और बहुत दूर जाना चाहती है. उसे जलसिंह पक्षी से किसी तरह का भय नहीं है, यह सब सुनकर कुछ नन्हीं-मुन्नी मछलियां उत्तेजित हो उठीं और आतुरता से वह काली मछली के साथ जाने की सोचने लगीं, मगर बड़ों के भय से खामोश रहीं. कुछ काबू न रख पायीं और बोल पड़ीं, "अगर जलसिंह पक्षी का डर न होता तो तुम्हारे साथ चलते, मगर उसकी थैली से हम डरती हैं."

नदी अब एक गांव से होकर बह रही थी. देहाती औरतें बर्तन-कपड़े लिये बैठी मांज-धो रही थीं. काली छोटी मछली बड़ी देर तक उनके शोरगुल को सुनती रही और पानी में नहाते बच्चों को ताकती रही, फिर अपनी मंजिल की ओर चल पड़ी . . .चलती गयी. . . चलती गयी, यहां तक कि रात घिर आयी और वह वहीं पत्थर के नीचे दुबककर सो गयी.

सुबह जल्दी ही उसकी आंखें खुल गयीं. नन्हीं-मुन्नी मछलियां उसके समीप खड़ी खुसुर-पुसुर कर रही थीं. उसे जागी जानकर एक साथ बोलीं, "शुभ प्रभात." छोटी मछली

[ने शीघ्र ही उन्हें पहचान लिया और बोली, "तुम लोग मेरा पीछा करते-करते आखिर यहां तक पहुंच ही गयीं?"

एक बोली, "मगर डर से अभी तक कांप रही हैं."

दूसरी बोली, "जर्लसिंह पक्षी का डर तो किसी प्रकार से दिमाग से निकलता ही नहीं."

काली मछली बोली, "तुम लोग कुछ ज्यादा ही सोचती हो. हर समय हर चीज से इतना भयभीत रहना उचित नहीं है. एक राह पकड़ लो. डर आप ही आप जाता रहेगा."

लेकिन जैसे ही वे चलने को हुईं, पानी उनके ऊपर से आया और कोई चीज उनको समेट ले गयी. चारों तरफ अंधेरा छा गया. भागने की कोई राह न थी. हाथ को हाथ नहीं सूझ रहा था. काली मछली क्षणभर में समझ गयी कि वे जर्लसिंह पक्षी की थैली में फंस गयी हैं. काली मछली बोली, "हम लोग जर्लसिंह पक्षी की थैली में कैद हैं, मगर निकास का रास्ता एकदम बंद नहीं हुआ है, हताश होने की कोई आवश्यकता नहीं है."

नन्हीं-मुन्नी मछलियों ने यह सुनते ही रोना आरंभ कर दिया. और एक बोली, "हमारे पास भागने का अब कोई रास्ता नहीं है. तुम्हीं ने हमें बहकाया था, और अब यहां यूं लाकर हमें फंसाया है."

दूसरी बोली, "रुक जाओ, देखना अभी यह हमें निगलेगा."

एकदम से एक भयानक हंसी पानी में गूंजी. यह आवाज जर्लसिंह पक्षी के कहकहे की थी, "कैसी नन्हीं-मुन्नी मछलियां मैंने पकड़ी हैं. हा हा हा हा सचमुच मेरा दिल तुम्हारे लिए दुख रहा है. दिल नहीं चाह रहा, तुम्हें निगलूं, हा हा."

नन्हीं-मुन्नी मछलियों ने घिघियाते हुए कहा, "श्रीमान जर्लसिंह पक्षी जी, हमने आपकी बड़ी प्रशंसा सुनी है. अगर आप जरा-सी दया करें और अपनी चोंच मुबारक को थोड़ा-सा खोल दें तो हम बाहर निकल जायें, हम सदा आपकी इस भलाई का मुक्तकंठ से गुणगान करेंगी."

काली छोटी मछली चीखी, "डरपोको! किस खयाल में हो, इस धोखेबाज को क्षमा की मूर्ति समझ बैठी हो, जो इस तरह गिड़गिड़ा रही हो?"

नन्हीं-मुन्नी मछलियों ने कहा, "तुम समझ नहीं पा रही हो कि आखिर तुम कह क्या रही हो? अभी आगे देखती जाओ, जनाब जर्लसिंह साहब हमें कैसे क्षमा करते हैं और तुम्हें कैसे निगलते हैं." जर्लसिंह पक्षी बोल उठा, "हां हां, मैं तुम लोगों को क्षमा कर सकता हूं, मगर एक शर्त पर."

नन्हीं-मुन्नी मछलियां अधीरता से बोलीं, "शर्त बतायें जनाब."

"इस बेवकूफ मछली का गला घोंट दो, मैं सबको स्वतंत्र कर दूंगा." जर्लसिंह बोला.

काली मछली ने कहा, "तुम सबकी अक्लें तो घास चरने गयी हैं. अगर मुझे मार भी डालोगी तो भी तुम्हारे नसीब में स्वतंत्रता नहीं है. तुम धोखा खाओगी."

मछलियां बोलीं, "यह तो सब अपनी जान बचाने के लिए कह रही हो, वरना तुम्हें हमारी जानों की क्या फिक्र है!"

काली मछली बोली, "मेरी बात तो सुनो, मैं तुम्हें एक

समद बहरंगी ईरान के उन कुछ रचनाधर्मियों में हैं जिनकी कलम और बंदूक एक रफ्तार से चलती रहीं. शाह के जमाने में जिस गुरिल्ला सेना की उन्होंने स्थापना की थी, आज उनकी मौत के दस साल बाद भी वह अशरफ देहगानी के नेतृत्व में कुर्दिस्तान में लड़ रही है. और उनकी कहानियां, जो ऊपर से बच्चों के लिए लिखी गयी लगती हैं, अपने भीतर विद्रोह की चिंगारी लिये होती हैं.

ER RAKESH
9716080365

तरकीब बताती हूं. मैं नीचे मरी मछलियों के बीच में सांस रोककर पड़ जाती हूं. फिर देखती हूं कि जर्लसिंह पक्षी तुम लोगों को जीवनदान देता है या नहीं."

काली मछली मरी मछलियों के पास नीचे गयी. नन्हीं-मुन्नी मछलियों ने ऊपर आकर कहा, "जनाब, उस बदतमीज मछली को हमने मार गिराया है."

जर्लसिंह हंस पड़ा, "काम बढ़िया किया तुम लोगों ने. इस बढ़िया काम के इनाम में अब मैं तुम लोगों को एक-एक करके खाऊंगा, फिर दूर तक लंबी सैर को जाऊंगा . . ."उसने कहा और इससे पहले कि मछलियां संभलतीं, उसने उन्हें निगल लिया. काली मछली ने खंजर निकाला और थैली को चाक किया. जर्लसिंह दर्द से तड़पता पानी पर मुंह मारने लगा, मगर काली मछली का पीछा न कर पाया. काली मछली एक छलांग में ही उसके जाल से दूर निकल गयी थी.

काली मछली ने फिर यात्रा आरंभ कर दी . . . तैरती गयी, तैरती गयी, यहां तक कि दोपहर हो गयी. पहाड़ और गुफाएं गुजर चुकी थीं. अब नदी समतल मैदान पर से होकर बह रही थी. इस पानी के खजाने में छोटी मछली खोकर रह गयी. तभी उसने देखा कि एक बड़ा-सा जानवर तेजी से उसकी तरफ बढ़ रहा है. उसके मुंह के पास दो दुमी आरी थी. उसे समझते देर न लगी कि यही शार्क मछली है. उसने सोचा कि शार्क मछली अभी उसके टुकड़े-टुकड़े कर देगी, मगर उसके अवचेतन में एक बिजली लहरायी. वह तड़पकर बढ़ती शार्क मछली के समीप से भागी और पानी की सतह पर निकल आयी. फिर थोड़ी देर बाद अंदर गयी. थोड़ी दूर पर उसे मछलियों का एक झुंड मिला. हजारों की संख्या में मछलियां थीं. उनमें से एक से उसने पूछा, "दोस्त! मैं यहां मुसाफिर हूं, अजनबी हूं. यह कौन-सी जगह है?"

मछली ने दोस्तों को पुकारा, "देखो तो एक और . . ." फिर काली मछली की तरफ मुड़कर बोली, "बांधवी, इस समुद्र में तुम्हारा स्वागत है!"

दूसरी मछलियों में से एक ने कहा, "यहीं पर सारे चश्मे व नदियां आकर मिलते हैं. वैसे कुछ दलदल में जज्ब हो

जाती हैं."

दूसरी बोली, "जब भी तुम्हारा मन करे, हमारे समूह में मिल जाना. काली छोटी मछली खुश थी, प्रसन्नता से झूम रही थी कि आखिर वह समुद्र में पहुंच ही गयी. बोली, "जरा मैं समुद्र का एकआध चक्कर लगाकर आती हूं, फिर तुम्हारे समूह में मिल जाऊंगी.

काली छोटी मछली ने उनसे विदा ली और तैरती हुई आगे बढ़ने लगी. थोड़ी देर बाद वह ऊपर पानी की सतह पर निकली. सूरज चमक रहा था. उसकी जलती किरणों की तपिश अपनी पीठ पर महसूस करके मस्त हो रही थी. खुश-खुश वह बड़े आराम और तरंग से तैर रही थी और स्वयं से बातें कर रही थी—बड़ी आसानी से इसी पल मुझे मौत अपने चंगुल में पकड़ सकती है, मगर जब तक जिंदा रहूंगी, कोशिश करूंगी कि उसका निवाला न बनूं. मगर एक दिन अगर उससे सामना हो ही गया तो... जो होगा, सो देखा जायेगा... उसका महत्व भी क्या है... महत्व तो इस बात का है कि मेरी मौत और मेरी जिंदगी दूसरों पर प्रभाव क्या डालती है?

काली छोटी मछली इससे आगे सोच न पायी थी कि एक बगुले ने उसे चोंच में दबा लिया. लंबी चोंच के बीच में दबी छोटी काली मछली स्वतंत्र होने के लिए बहुत तड़पी, मचली, मगर सब बेकार! अपने को छुड़ा न सकी. बगुले की चोंच में दबी उसकी कमर दर्द से फटी जा रही थी और उसकी जान निकली जा रही थी. एक मछली बिना जल के कितनी देर जिंदा रह सकती है. काली मछली की इच्छा हो रही थी कि बगुला शीघ्रातिशीघ्र उसे निगल ले, ताकि पेट की नमी में वह कुछ पल चैन की सांस तो ले सके. इसी आशा में उसने बगुले से कहा, "तुम मुझे निगल क्यों नहीं रहे हो, मरने के बाद मेरे शरीर में विष फैल जाता है."

बगुला ऊपर से चुप रहा, मगर मन में बोला, "अरे चतुर, तेरी बातों में तो षड़यंत्र की गंध आ रही है. ऐसा तो नहीं है कि मुझे बातों में फंसा खुद भाग जाये.

काली मछली को खुश्क किनारा अब साफ नजर आ रहा था जो पल-पल समीपतर होता जा रहा था.

बगुला अभी यह सोच ही रहा था कि मछली का शरीर ढीला पड़ने लगा और उसे अनुभव हुआ कि मछली का शरीर बेजान हो गया है. वह सोचने लगा—मर गयी है. अब तो मैं स्वयं भी नहीं खा सकता. मछली भी ऐसी नर्म व नाजुक! बेवकूफी में मैंने हाथ से गंवा दी, "काली मछली, मैं तुम्हारे अधमरे शरीर को निगल रहा हूं." मगर वह अपना वाक्य पूरा भी न कर पाया कि चोंच खुलने से मछली का शव पानी में गिर गया. और बगुला ताव खाकर रह गया. जब उसने मछली को हिलते देखा तो उसकी आशंका सही निकली, मगर बगुला उसे पकड़ न पाया. वह तो पानी में गिरते ही वह एक अजीब तृष्णा से भरी सूखे मुख को खोल पानी से तर कर रही थी. मछली ने जैसे ही दुबारा जिंदगी हासिल की और संतोष भरी सांस खींची, बगुले ने उसे ढूंढ़ लिया और बिजली की तेजी से उस ओर झपटा और उसे निगल गया. पलभर तो काली मछली अकबकायी-सी समझ न पायी कि आखिर हुआ क्या? उसे केवल महसूस हुआ कि वह एक अंधेरी गीली जगह में है. वहीं पास ही उसे रोने की आवाज सुनाई दी. जब आंखें अंधकार की अभ्यस्त हो गयीं तो उसने देखा कि एक बेहद बारीक-सी नन्हीं मछली औंधी पड़ी सिसक रही थी. मां को पुकार रही थी. काली मछली पास गयी और बोली, "नन्हीं मछली उठो, कोई तरकीब सोचो. रोने से मां थोड़ी मिलेगी."

नन्हीं ने रोते हुए कहा, "तुम... कौन हो? तुम... क्या देख नहीं रही हो... कि मैं... मरने वाली हूं... आहो आहो उं ऽ उं ऽ ऽ मां... मां, अब तुम्हारे साथ जाल घसीटकर समुद्र तल तक नहीं ले जा पाऊंगी... उं ऽ ऽ".

काली मछली बोली, "बस करो भाई, तुम तो सारी मछलियों की इज्जत खाक में मिलाने पर तुली हुई हो."

जब छोटी मछली ने रोना बंद कर दिया तो काली मछली बोली, "मैं चाहती हूं कि बगुले को मार डालूं, ताकि मछलियों को इससे आजाद कर सकूं. लेकिन इससे पहले मैं तुम्हें बाहर निकालूंगी, ताकि बदनामी न फैले."

मछली ने पूछा, "तुम तो स्वयं मर रही हो, तुम बगुले को क्या मारोगी?"

काली मछली ने छोटा-सा खंजर दिखाया और कहा, "यही इसका पेट फाड़ देगा. अब ध्यान से सुनो, 'मैं इधर-उधर उछलती-कूदती हूं, इसके पेट में गुदगुदी करती हूं, जब यह हंसेगा तो तुम फौरन तैयार रहना और उसके खुले मुंह से बाहर छलांग लगा देना."

यह कहकर छोटी मछली ने बगुले के पेट में इधर से उधर दौड़ना, लोटना, उछलना-कूदना शुरू कर दिया. मेदे में नन्हीं मछली तैयार खड़ी थी. जैसे ही बगुला गुदगुदाहट से बेचैन होकर हंसा, वह एक ही छलांग में बाहर पानी में कूद पड़ी और काली मछली के आने की प्रतीक्षा करने लगी. मगर वह न आयी. फिर उसने देखा कि बगुला बेचैन है और तड़प रहा है, चिल्ला रहा है. उसके बाद वह हाथ-पैर पटकता वहीं पानी की सतह पर गिर पड़ा और पानी में डूबने लगा. पानी की सतह पर छोटा-सा भंवर उभरा, और हाथ-पैर मारता बगुला ठंडा हो पानी में डूब गया, मगर काली छोटी मछली का कहीं पता न चला, और आज तक उसकी कोई खबर न मिली. वह लौटकर न आयी.

बूढ़ी दादी ने काली मछली की कहानी समाप्त की और अपने बारह हजार पोतों, नवासों से बोली, "अब सोने का समय है बच्चो, जाओ, सो रहो."

बच्चों ने पूछा, "दादी मां, उस नन्हीं-मुन्नी मछली का क्या हुआ?"

बूढ़ी मछली ने कहा, "अब उसकी कहानी कल रात को सुनाऊंगी, अब सोने का समय है, शुभरात्रि."

बारह हजार छोटी मछलियों ने 'शुभरात्रि' कहा और जाकर सो गये. दादी मां भी सो गयी. मगर लाल मछली की आंखों से नींद कोसों दूर थी. वह सारी रात समुद्र के बारे में सोचती सुबह तक जागती रही. □

परिचर्चा : जनता तुम क्या सोचती हो!

कि जब जवान हों बच्चे ...तो कत्ल हो जायें ?

विश्वविद्यालय बंद और सड़कों पर लाशों के अंबार....उस माहोल में जबकि खुशबू बिखेरते बहार के फूलों को रौंदा जा रहा था, ईरान की जनता कौन-सा गुल खिलाना चाह रही थी और खून के दरिया में क्या हासिल करना चाहती थी? क्या वो सब उसे मिला? एक विचारोत्तेजक परिचर्चा—

● **मैं ईरानी हूं,
मेरा अरमान है शहादत!**

लगभग एक वर्ष होने को आया, फिर भी ईरान के सारे विश्वविद्यालय बंद पड़े हैं. मशहद, तेहरान, सीसतान, बिलोचिस्तान तथा अहवाज में इस तरह से लड़कों की लाशों का अंबार लगा था और किताबें जलायी गयी थीं कि कुछ लोगों को एहसास हुआ कि जिस तरह से शाह के जमाने में विश्वविद्यालय 'फसाद की जड़' कहलाते थे, इन्कलाब के पहले दिसंबर, 1977 को तेहरान विश्वविद्यालय में कोई छह सौ लड़के दो घंटे में भून-कर रख दिये गये थे और ईरान की तारीख में 16 आजर (दिसंबर) एक यादगार दाग बन गया था. आज फिर जनवरी मास में विचारों की आजादी और विकास की चिता जल रही है, जिसकी गर्मी स्वंय अपने ही भाई-बंद सेंक रहे हैं. विश्वविद्यालय के बंद होने का प्रभाव केवल ईरानी जीवन पर ही नहीं पड़ा, बल्कि उसका प्रभाव भारत में भी नजर आया है. विश्वविद्यालय बंद होने से सारे के सारे विद्यार्थी भारत की ओर आये और आते चले गये. यह समस्या ऐसी थी कि इस पर लोगों से बातें करना जरूरी था.

▣

आजकल तेहरान विश्वविद्यालय के सामने कैसेट, मैगजीन तथा किताबों आदि की छोटी-मोटी बेशुमार दूकानें फुटपाथ पर खुली हैं, जिनके समीप बड़ी-बड़ी किताबों, फोटोग्राफी, रेस्तरां इत्यादि की लंबी कतारें हैं. यहां पर गजब की भीड़ रहती है. गाने और भाषण तेज आवाज में गूंजते रहते है. लोग एक दूसरे से टकराते हुए चलते जाते हैं. दूकानों के शो केस के सामने नौजवान विद्यार्थियों की पूरी फौज बेकार-सी बैठी रहती है, जैसे आशिक, माशूक की एक झलक के लिए आंखे बिछाये रहता है, वैसे ही यह लड़के अपने विश्वविद्यालय की इमारत को ताकते बैठे रहते हैं. जहां से वह धूल-खून में लियड़े निकाल बाहर किये गये थे. भेंट होने पर विद्यार्थियों ने बताया:

"उस दिन वहां जमा हम सारे विद्यार्थी विभिन्न साम्यवादी समुदायों से थे. हाथ में हाथ डाले अपने बदनों से हमने विश्वविद्यालय के चारों तरफ एक जंजीर-सी बना रखी थी. अंदर भी विद्यार्थी भरे थे. कुछ दिन पहले से हमें पता था कि ऐसा होने वाला है, यानी सांस्कृतिक इन्कलाब. मगर सरकार ने जब यह नोटिस दिया कि तीन दिन के अंदर विद्यार्थी विश्वविद्यालय को खाली कर दें तो समस्या के जटिल होने का एहसास जागा. अमरीकी दूतावास पर हिजबउल्लाहियों ने कब्जा कर लिया था. हिम्मत भी बढ़ गयी थी और विश्वास भी जाग गया था कि वे बहुत कुछ कर सकते है. सो, उसके बाद उनकी दृष्टि तेहरान विश्वविद्यालय पर थी. संविधान के आरंभ में आया है कि हमारा उद्देश्य ईरान से विदेशी व शाही जड़ें उखाड़ फेंकना है. यह ठीक भी है, मगर उस शाही या विदेशी प्रभाव के हटाने का अर्थ केवल अमरीकी दूतावास पर कब्जा और विश्वविद्यालय का बहिष्कार करना ही तो नहीं है."

कुछ लड़कियां भी किताबें खरीदते हुए हमारे पास आ गयीं. उनसे भी मैंने कुछ सवाल पूछे. वे बहुत जज्बाती होकर बोलीं, "तीन दिन का नोटिस हमें मिल गया था, विश्वविद्यालय खाली करने के लिए, मगर कोई भी अपनी जगह टस से मस न हुआ. विश्वविद्यालय के विभिन्न कमरों में विभिन्न मार्क्सवादी समुदायों का कब्जा था. एक में 'फिदाईन' तो दूसरे में 'मुजाहिदीन' तीसरे में 'पैकार' चौथे में 'राहेकारगर' पांचवे में 'रंजबरान' छठे में 'तुफान' सातवें में 'तोदे' आठवें में... कहां तक आदमी समुदायों का नाम याद रखे. विश्वविद्यालय की इसी इमारत के सामने हजारों लड़के-लड़कियों का मजमा था, जो अपने विचारों और राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए यहां आये थे. आस

पास कबाब और सैंडविच की दूकानें खुल गयी थीं. छोटे-मोटे बाजार का दृश्य उभर रहा था. पोस्टर लहरा रहे थे. दीवारें नारों से भरी थीं. मेजें किताबों से दहक रही थीं. वास्तव में साम्यवादी विचारों के विद्यार्थियों का यह असीमित समुद्र, उनका बढ़ता मार्क्सवादी स्वभाव और जनता पर बढ़ता प्रभाव दोनों ही सरकार के लिए एक बड़ा खतरा बन गये थे. अंजुमने इस्लामी, जिसके हाथों यह मसला सौंपा गया था, ने तीन दिन का नोटिस दे दिया था. हमारे देश में अभी विचारों का टकराव बहुत है. इसे मैं बुरा नहीं समझती, इससे बाद में हमें फायदा होगा. ऐसा मेरा विश्वास है.

▣

अंदर हम खामोश थे. जानते थे कि जो जनता खड़ी है. सिपाहियों के साथ हमें बाहर निकालने के लिए, वह यह नहीं जान रही है कि हम उसी के लिए, ईरान के भविष्य के लिए ऐसा कर रहे हैं. उसके दिमाग में तो हम वतनफरोश, रूसी एजेंट, खयानतकार हैं. यह प्रचार आज से नहीं, शाह के समय से रूस के विरुद्ध फैलाया जा रहा है. रूस से हमारी सीमा मिलती है. शाह भी डरता था. इस्लामी गणतंत्र पार्टी भी डरती है, मगर हमारा उसमें क्या दोष है, अगर हम जनता के लिए सोचते हैं, असमानता को समाप्त करना चाहते हैं तो बुरा क्या है? न स्कूल हैं, न कालेज. चार महंगे स्कूल, वह भी अमीरों के बच्चों के लिए. न खेलने के पार्क, जहां बच्चे व्यायाम कर सकें, कसरत कर सकें. गलियों में फुटबाल खेलते हैं. अगर हम आम जनता के लिए यह सारी चीजें जरूरी समझते हैं तो क्या गलती करते हैं? अगर हम विकास और समय के साथ चलना चाहते हैं तो इसमें रूस कहां से आ जाता है? दरबारियों के घर के बाथरूमों की जंजीरें व हैंडिल तक सोने के थे और पूरे ईरान में एक भी पब्लिक बाथरूम नहीं है? पेट्रोडालर कहां गया और आज क्या हो रहा है. जो हो रहा है, वह हम होने नहीं देंगे." कहते हुए नीले स्कार्फ में बंधा चेहरा लाल अंगारा हो गया था.

"लेकिन इतना सब करने के बाद आप लोगों ने विश्वविद्यालय बंद क्यों होने दिये?"

"हार तो हमारी हुई, जानें हमारी गयीं. आपस में मनमुटाव और छींटा-कशी भी हुई, मगर अभी खुले विचारों के लोग हैं ही कितने ईरान में. 50 वर्ष से बुद्धिजीवी मारे जा रहे हैं. धनी वर्ग तो किसी भी बदलाव को नहीं चाहता है. शाह के विरुद्ध था, मगर अमरीका के विरुद्ध नहीं है. 'कशकाई' कबीला के सरदार नासिर खां का बहुत जोर है. वे शाह को उखाड़ फेंकना चाहते थे, इसे हम अभी खानदानी लोगों की ईर्ष्या का नाम दे सकते हैं. अली मदनी, जो राष्ट्रपति के चुनाव के लिए खड़े हुए, एयरमार्शल थे, शाह के विरोधी, मगर बाद में पता चला कि वे अमरीका के परम मित्र हैं. सनद अमरीकी दूतावास से मिली. उनके भागकर पेरिस जा छिपने में किसकी सहायता का हाथ है? कशकाई कबीले के इन्हीं सरदार नासिर खां का. आपके प्रश्न का उत्तर यही है कि हम अपनी गलती समझ गये हैं कि बिना जनता को शिक्षित किये हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा सकते, और जाहिल जनता उस दिन 25 मार्च, 1980 को हमारे खिलाफ थी, यह देखकर पीशगाम और फेदाई समुदाय ने कहा कि हम खाली हाथ हैं. वह हर हथियार से लैस हैं. हमारा पीछे हटना ही ठीक है. वे चले गये. तोदे पार्टी वाले चले गये, मगर अंत तक पैकारी (माओ ग्रुप) जमे रहे. उनका विश्वास था कि हम शहीद हों. मरने वालों की संख्या जितनी अधिक होगी, हम जनता पर अपना प्रभाव उतना ही अधिक बना पायेंगे. इस विचार को लेकर वे बैठे रहे. बाहर वालों को एकता के टूटने का जैसे ही एहसास हुआ, उन्होंने हवाई फायर के साथ जोरदार आवाज उठायी, "अंदर से गोली मत चलाओ, बाहर जनता खड़ी है, वह तुम्हारी दुश्मन नहीं है." उसी के बाद दूसरी आवाज उभरी, "अगर तुम्हारे पास हथियार नहीं हैं तो पीछे हट जाओ." हमें पता चल गया कि उनमें भी विचारों की एकता नहीं है, मगर उद्देश्य और जोर की एकता है. सो, कुछ लड़कों ने उत्तर दिया, "हमारे पास हमारा हथियार हमारा दिल है, जो घृणा से भरा है, इंपीरियलिस्ट के खिलाफ. उसी को लेकर हम तुम्हारे सामने खड़े हैं." गर्ज कि हमारे 40-50 साथी पलभर में ही घायल हो गये. घायल होते गये, चारा

● . . . साथियों की लाशों के साथ विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय छोड़ देना पड़ा.

सामने कुछ था नहीं. 15000 का मजमा विश्वविद्यालय में हार कर, साथियों की लाशें कंधों पर उठाये दूसरी ओर से निकल गया. मगर हमारी लड़ाई जारी है. उचित बात कहने से हम डरते नहीं हैं. हम पूंजीवाद के खिलाफ लड़े थे. आज ताज की जगह इमाम आ गया है, हम उसे भी उखाड़ फेंकेंगे. वह 50 साल पुराना था, यह दो साल पुराना है.

▣

तेहरान विश्वविद्यालय के टीचरों से बातें हुई. पहले तो वे काफी डरे, फिर कहने लगे, "जो हालात इस यूनिवर्सिटी के थे, उसमें इसका बंद हो जाना ही उचित था, क्योंकि यहां पढ़ाई-लिखाई तो होती नहीं थी, मगर उसका यही एक इलाज था तो इसके मैं खिलाफ हूं. वही तानाशाही, वही सितमशाही. इन्कलाब का अर्थ बदलाव है, न कि शक्लों का बदल जाना. इस आचरण की घोर भर्त्सना करते हुए उसी समय वाइसचांसलर ने त्यागपत्र दे दिया था. हम कोई सपने में तो रहते नहीं हैं, न यूनिवर्सिटी कोई काल्पनिक वाटिका है, जो जिंदगी से दूर हो. लड़कों की मांगें उचित थीं. इनका उग्र व्यवहार अनुचित है. मैं भी इस्लामी आदमी हूं, मगर यह कौन सा इस्लाम है, स्वयं मोहम्मद साहब ने कहा है कि इल्म हासिल करने के लिए चीन भी जाना पड़े तो जाओ, इल्म यानी इंसान की फिकरी उन्नति, मगर यहां? आगे क्या कहूं आप स्वयं ही देख रही हैं." अंग्रेजी साहित्य के एक प्रोफेसर मेरे प्रश्नों का उत्तर देते हुए बोले, "जितने प्रोफेसर यूनिवर्सिटी से निकाले गये हैं, उनमें से आधे से अधिक का निष्कासन उचित था, मसलन कोई फार्मेशियन का मेंबर था तो कोई सावाकी एजेंट. चार जिल्दों की किताब 'फारमेशन' के नाम से छपी है. बड़े बड़े लोगों का उसमें मय तस्वीरों के जिक्र है. उनका रहना इस इन्कलाब को खोखला करना था. हां, कुछ का निकाला जाना जरूर अपवाद है. उसको मैं इस सरकार का रूढ़िवादी होना समझता हूं."

▣

इन्हीं प्रश्नों को लेकर कुछ औरतों से मिली, जिनके बेटे या तो विदेश से लौट आये थे या रणक्षेत्र में थे या फिर विदेश जाने की तैयारी कर रहे थे.

"विश्वविद्यालय क्या बंद हुआ है यहां तो सब कुछ ही बंद है. यह सरकार नयी नस्ल के ही खिलाफ है. लड़का अच्छा भला पढ़ रहा था. इन्कलाब देखने आया. यहां फंस गया, चूंकि 25 के नीचे के लड़कों को फौज में जाना पड़ता है. सो, चला गया. दो लड़के बेकार हैं. फल की दूकान खोल ली है.

हमारी तकदीर ही फूट गयी. अच्छी लड़की ढूंढने जाओ तो लड़के की डिग्री देखी जाती है. नौकरी लो तो डिग्री, मगर पढ़ाई का इंतजाम न पहले अच्छा था, न अब. सरकार कहती है, बच्चे खेती करें. पूछो उनसे कि सांस्कृतिक क्रांति क्या इसी का नाम है. दूसरी चीजें सांस्कृतिक बदलाव में नहीं आती हैं क्या? या फिर पड़ोसी देशों में डाक्टर, इंजीनियर और उस्ताद हैं, पैसे फेंककर उन्हें बुला लेंगे. पेट्रोल उनके पास नहीं है, हम पेट्रोल देते हैं. यह तो आपस में चलता है. यह कौन-सी बातें हैं? यह किस कल्चर की दुहाई है? हम तो पागल हो गये हैं?"

"मेरा बेटा अभी भारतवर्ष गया है. अव्वल तो बड़ी मुश्किल से नाम लिखवाया. अब इरानी दूतावास उस कालेज को मानता ही नहीं है. सो, स्टूडेंट वीजा उसे नहीं दे रहे हैं. वीजा नहीं तो पैसा बैंक से भेजना कठिन है. किसी आते जाते के हाथ जेवर भेजूंगी. यहां तो कौर हलक में अटकता है. जाने क्या मिल रहा होगा वहां खाने को. यहां सारे दिन रसोई में उन तीनों के लिए पकवान बनाती थी. अब कुछ पकाया ही नहीं जाता है. अगर भारत सरकार हमारी मदद न करती तो हमारे बच्चे कहां पढ़ने जाते? कौन पूछे इन उजड्ड देहातियों से कि इस्लाम दिल में है, न कि दिमाग में. मगर नये नये मुसलमान हुए हैं, नमाज ज्यादा पढ़ेंगे."

अपने प्रश्नों के साथ मैं जब अंजुमने इस्लामी के अनुयाइयों से मिली तो उनमें गजब की नफरत दिखी. बोले, "हम अमरीका के जानी दुश्मन हैं, मगर रूस के दोस्त नहीं हैं. हमारा नारा 'न पूर्व, न पश्चिम' है. हमारा रास्ता इस्लाम है. रूस के खरीदे गुलाम यह लड़के चाहते हैं कि हम वतन को रूसियों के हाथ बेच दें? कौन थे लेनिन, कौन थे मार्क्स, क्या रसूल सबसे बड़े साम्यवाद के प्रतीक न थे?

पानी नहीं कि अपने चेहरों को देख लें, मंजर जमी के ढूंढते हैं माहताब में!

उस समय आज से 1400 वर्ष पहले मजदूरों के दुख के विरुद्ध किसने आवाज उठायी थी. किसने बराबरी की बात कही थी? फिर यह पोलैंड में क्या हुआ. अगर मार्क्सवाद में इतनी ही ताकत थी तो वहां अमरीकी प्रभाव क्यों बढ़ रहा है? हमारी सारी किताबों के चार पन्ने शाह और शाही कुटुंब के चित्रों से भरे रहते थे. आज खुमैनी साहब का चित्र है, क्योंकि वे हमारे नेता, हमारे रहबर हैं. उन पर कीचड़ उछालने वालों और इस्लाम के खिलाफ आवाज निकालने वालों को हम पीस कर रख देंगे."

▣

तेहरान विश्वविद्यालय की इमारत की मरम्मत चल रही थी. जुमे को वहां पर पब्लिक नमाज होती है, बजाय मस्जिदों के. मस्जिदों में राशन से लेकर हर तरह के कार्ड इशू होते हैं. यह बताने के लिए कि बदलाव तेजी से हो रहा है. सो, जुमे को छोड़कर विश्वविद्यालय के सुनसान कंपाउंड में केवल मजदूरों की हथौड़ी-छेनी, आरी, सीमेंट-कोलतार की खुशबू और आवाज ही गूंजती रहती हैं. तभी विश्वविद्यालय के बाहर बनी सद्र का पोस्टर खरीदती हुई एक औरत से मैंने पूछा कि यह विश्वविद्यालय क्यों बंद है? इमारत की मरम्मत क्यों हो रही है? तो उसने कहा, "बदकिस्मती है हमारी. अमरीका की सियासत है. पहले शाह के जरिये, अब मौलवी के जरिये. वे हमें पिछड़ा ही रखना चाहते हैं, ताकि जी भर कर हमारा शोषण करें. यह इमारत तो गोलियों से छलनी है. जरा सोचो, इतनी गोलियां हमारे जवानों की भीड़ पर जब पड़ी होंगी तो कितनी कोखें जख्मी हुई होंगी?"

"पासदार भी मारे गये होंगे?"

"कहते तो लोग यही हैं कि तीन पासदार भी मारे गये थे, मगर अस्पतालों से उठने वाले जनाजों में केवल विद्यार्थी ही थे. 29 मार्च को सारे सिपाही बंदूक की नलियों में लाल फूल सजाये कटाक्षभरी मुस्कराहट लिये चारों तरफ बिखरे हुए थे. इनसे कोई पूछता कि जालिमो! अगर तुम्हारा अपना कोई मरा होता तो चार रंगों में उस पासदार का फोटो छापते. हर गली-बाजार में धूम मच जाती, मगर ऐसा न हुआ. किसी को सही गिनती भी नहीं पता है. हमें तो इन्कलाब करके भी कुछ न मिला." और फिर बड़े दुख से बोली, "मेरी बहन के तीनों लड़के मारे गये थे. दीवानी हो गयी तो एक पासदार को झिंझोड़कर बोली, 'क्यों इन गुलों को गोलियों से मारा? यह तो बहार के फूल थे? यह तो अपनी खुशबू से चारों दिशाओं को महकाते?' पासदार ने शायद अपने ऊपर इतना कंट्रोल किया कि हाथ में पकड़ी बंदूक पर उसकी अंगुली का जोर अधिक बढ़ गया और अनजाने ही गोली उसके हलक से पार हो सिर को छेदती हुई आसमान को निकल गयी."

सारे प्रश्नों के उत्तर मुझे मिल गये थे. गली-कूचों, कारों के शीशों, दूकानों-दरवाजों तथा दीवारों पर लगे पोस्टरों में जब जवान शहीदों की तस्वीर देखती तो लगता कि इन मासूमों के हाथों जाने कितने और जाने किन मासूमों के हाथों इनका कत्ल हुआ होगा. इन सबके हाथ अनजानेपन में बेगुनाह मासूम खूनों से रंगे हुए हैं. केवल एक छोटी-सी गलती पर कि उनके अपने देशवासियों के बीच उचित वैचारिक संपर्क की कमी है. शायद यह जहर भी शाह के अन्य उपहारों में से एक हो, जिसे ईरानी कौम कई वर्षों तक भुगतती रहेगी.

□

लघुकथा

इन्कलाब का दुश्मन

▣ मेहरी चहलतन

गरीबों के चंद मकान और सामने चंद दूकानें, यही था मोहल्ला इन्कलाबियों का. घर में तेल की एक बूंद तक न थी. गैस खत्म हुए हफ्ताभर हो गया था. शाहीन खानम बेचैन थीं. दोनों बेटे कल से गये हुए हैं. छोटी बेटी नाजी की तबीयत खराब थी. खिड़की से वे लाइन देखकर घबरा रही थीं. नाजी का बुखार कम हो या बेटे लौटकर आ जायें तो वे जायें. तभी रुकईया खानम आ गयीं, "बहन, जंग है. जंग में यही होता है. कभी न भी हो तो कल का हिसाब तो रखना ही पड़ता है."

"कौन शिकायत कर रहा है. कल की उम्मीद पर सब कुछ बरसों से सहते आये हैं. भरी जवानी में शौहर खोया. बेटों को देखो. . .आगे अभी कौन-कौन-से दाग देखने बाकी हैं. खैर, उसकी भी पूरी तैयारी मैंने कर ली है!"

दूकान पर खड़ी भीड़ थकी-परेशान थी. कभी यह सब किया हो तो आदत होती. तभी सामने से भरी वैन गुजरी. सब ने हसरत से चाय, शक्कर, घी और चावल के पैकेट देखे. भीड़ के कारण वैन धीमी हुई. ड्राइवर के पास बैठा आदमी बोला, "तुम पूछ रहे थे कि कौन है इन्कलाब का शत्रु? सामने भीड़ देखो. लाइन में खड़े सारे लोग इन्कलाब को बदनाम कर रहे हैं. आखिर एक चीज के लिए सुबह से शाम तक यूं. . ." ड्राइवर ने वैन रोकी. नीचे उतरकर बड़े धैर्य और आदर के साथ कहा, "जनाब, अब आप उतर जायें. यहां से मेरा रास्ता बदल गया है. आगे अब मैं आपको नहीं ले जा सकता."

"मगर यह बेईमानी है. बद्तमीजी है. तुमने मुझे बिठा लिया, वरना बहुत सारी गाड़ियां थी, जिन पर. . . जंग है तो इन्सानियत खतम हो गयी."

"आप उतरते हैं या बताऊं कि इन्सानियत क्या है? इन्कलाब का शत्रु कौन है? यह सारा सामान ब्लैक से खरीदकर घर में भरेंगे, आखिर क्यों? चाय के 40 डिब्बे, 50 किलो शक्कर, आखिर क्यों, इन्कलाब के दुश्मन." भीड़ जमा हो गयी. वह आदमी उछला, भीड़ में घुसा और फिर गायब हो गया. भीड़ का तब एक ही स्वर था—इन्कलाब का दुश्मन! □

मुलगाता ऐंपुन

• नादिर इब्राहिमी

दरवाजा खोला तो मेहरी को घर के बड़े हाल के बीच में खड़ा पाया. समझ गया कि आज फिर उसके पास सुनाने के लिए कोई ताजा चटपटी खबर है, जिसके बोझ से परेशान वह बचैन-सी कभी टी. वी. पर रखे छोटे गुलदान में फूल लगाने और कभी खाने की मेज के चारों तरफ कुर्सियां सजाने में समय काट रही होगी. जब मैं गैलरी में पहुंच कोट टांग रहा हूंगा, तो वह बड़ी व्यस्त-सी आकर, बड़े ठहरे, सुलझे अंदाज में, धैर्य के साथ कोई खबर सुनायेगी. अपनी तरफ से वह बहुत संभलकर खबर देती है, मगर उत्तेजना उसके रोम-रोम से टपकती है. हां, एक गुण है उसमें, वह इन बुरी खबरों को अपने पकाये मजेदार पकवानों में नहीं मिलाती, जिनकी खुशबू रसोईघर में भरी रहती है.

मेरे सलाम करने पर वह हौले-से मुस्करायी. उस के मुस्कराने में मुस्कान का रंग कम, होंठ फैलाने का भाव अधिक था. कोई और समय होता तो शायद मैं इस व्यथाभरी मुस्कान पर कटाक्ष करता हुआ पूछता, "क्यों, कोई ताजा खबर?" मगर बरसों गुजर गये, मैंने उसे यों छेड़ना और चिढ़ाना बंद कर दिया है. बहरहाल, चौदह वर्ष का विवाहित जीवन काफी था एक-दूसरे की मूक भाषा समझने के लिए. सो, कोट टांगने जा रहा था, मगर कान कोई नयी खबर सुनने के इंतजार में उतावले हो रहे थे कि एकाएक मेहरी ने पूछा, "आज का अखबार पढ़ा है?"

"अभी नहीं"

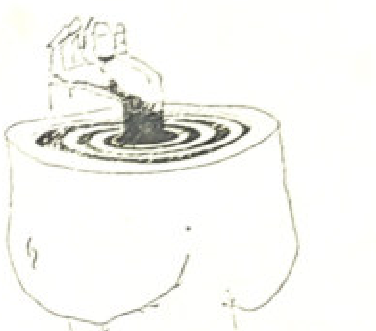

ER RAKESH
9716080365

मौत बड़ी होती है या मौत का डर? तिस पर अगर दोनों ही अगल-बगल खड़े अट्टहास लगाने लगें तो? ईरान में तानाशाही पुलिस और जासूसी जाल का नकाब उलटती कहानी

"तुम्हारा दोस्त सवाकी निकला!"

"कौन-सा दोस्त?"

"उसका नाम भी महमूद है."

कोट हैंगर पर टांगने के बजाय वहीं स्टूल पर डाल दिया... और समझ नहीं पाया कि जो मेरे गालों को भिगोता तेजी से बह रहा है, वह माथे पर छलक आये पसीने की धाराएं हैं, या आंखों में भर आये आंसुओं की लड़ियां!

धीरे-से टूटे हुए मन-से कहा, "झूठा इल्जाम लगा रहे हैं सब. आजकल तो यह आदत-सी हो गयी है."

"सावक पुलिस की बहुत पुरानी सूची में उसका नाम निकला है. वह तो बहुत पुराने एजेंटों में से है... लगभग चौबीस साल." उसने शीघ्रता से कहा.

"अरे, सब ड्रामा है."

"उसे पकड़कर गिरफ्तार कर लिया गया है... और उसने अपना जुर्म भी कबूल कर लिया है. अब उस पर मुकदमा चलेगा."

हमारी बातों का खजाना खत्म हो गया था. अब हमारे बीच बात करने का कोई विषय नहीं था. हम खामोश थे.

क्या मेहरी मेरी दोस्ती का यह आखिरी अड्डा टूटने पर खुश थी? चाहता था उसके भावों को पढ़ूं, मगर बहते-टपकते आंसुओं ने इस मौके की मोहलत न दी. मेहरी ने कागज का रूमाल मेरी तरफ बढ़ाते हुए कहा, "तुमने खुद लिखा था, ये दिन तनहाई से भी बदतर हैं."

दिल चाह रहा था कि जवाब दूं, यह तो बहुत पहले की बात है जब मैंने लिखा था, मगर जवाब के लिए मुंह नहीं खोल सकता था. मुझे डर था कि मैं धाड़ मार-मारकर रो पड़ूंगा! खड़ा हुआ, कोट उठाया, उसे 'ठंड पड़े' शानों पर डाला और घूमा, ताकि घर से बाहर निकल जाऊं... कि तभी मेहरी बोली, "दुनिया इसी का नाम है. तुम उदास क्यों हो? जिंदगी इसी को कहते हैं."

सिर को घुमाया और गर्दन हिलाते हुए बोला, "हां सही है, दुनिया इसी का नाम है!"

वतन

▣ क. खुसरू

"अरे, मेरा दुख क्या बांटोगे दोस्त? मां मरती है, तो खाला की गोद मिल जाती है, बाप मरता है, तो चचा की उंगली मिल जाती है पकड़ने को. मगर वतन जब छिनता है, तो उसका बदला दूसरी धरती पूरा नहीं कर पाती. जीना दूभर हो जाता है. कभी परदेस में जीते हुए तनहाई के दर्द को चखा है?"

"आप लौट क्यों नहीं जाते हैं? आखिर वह आपका देश है."

"लौटना अगर आसान होता तो देश छोड़कर आता ही क्यों? तब भी वहां घड़ियाल थे निगलने को, अब वहां व्हेल मछली तैर रही है. पहले सब कुछ होने के बाद भी वतन नाम की चीज को हम 'ईरान' के नाम से जानते थे, मगर अब वह 'नाम' भी हमसे छिन गया."

"जो?"

"हम मुसलमान हैं और इस्लाम हमारा धर्म! आज का नारा है कि इस्लाम एक अंतर्राष्ट्रीय धर्म है, संस्था है. सारे मुसलमानों को मिलाकर एक साम्राज्य, एक देश का निर्माण होता है. कोई सीमा कहीं से जुड़ी नहीं है, सब अल्लाह के बंदे हैं. जमीन अल्लाह की है. फिर भी सबके तो देश और वतन हैं. और हम अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं में बंधे हुए हैं. अब बताओ हमारा वतन कहां है? सासानी, सफवी काल का वह वैभव कहां गया? पारसियों के आतिशकदे कहां गये? हम बेवतन हैं दोस्त! इस गम को अगर बांटोगे तो कैसे, बताओ तो?" □

1955 में मैं और महमूद संग पढ़ते थे. वह मेरा पड़ोसी था. साथ ही साथ हम पहली बार जेल भी गये थे... जेल की मुद्दत बहुत कम थी. तब हम जवान थे. दीवार पर हमने कुछ लिख दिया था, जो शहंशाहियत के खिलाफ तो न था, लेकिन सरकार के तो था ही. पूछने पर हमारा जवाब यही था कि हम संविधान और कानून को मानते हैं मगर सरकार को नहीं, क्योंकि वह संविधान के खिलाफ है.

चालीस कोड़े हम दोनों को पड़े. मगर अलग-अलग....इसके बाद प्रतिज्ञा!... फिर सब समाप्त!

कुछ दिन बाद वे फिर मुझे पकड़ ले गये और बोले, "भूल गये न! अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी न?"

"नहीं, मैंने तो नहीं तोड़ी!"

"फिर क्यों रात को फलां प्रेस में काम करते हो?"

"आप लोग तो जानते हैं कि मुझे मेरे पिता ने घर से निकाल दिया है. अगर काम न करूं तो खाऊं कहां से? कहां से अपनी पढ़ाई का खर्च निकालूं?"

"तो हमारा काम क्यों नहीं करते?"

"मुझसे आपका काम नहीं हो सकता"

दो जन्नाटेदार झापड़ गालों पर पड़े और छुट्टी हो गयी.

▣

महमूद कहने लगा, "बशर्म! हर चीज की खबर रखते हैं, हर जगह के बारे में जानते हैं."

"खैर, जो हुआ सो हुआ. मैं सोच रहा हूं कि छापने के विभिन्न तरीकों को सीखूं. आजकल लोग सबसे ज्यादा इश्तिहार और पैंफलेट की जरूरत महसूस करते हैं."

"इन सब बातों में बेकार मत पड़ो." उसका उत्तर था.

1957 में फिर साथ-साथ जेल गये. मेरे लिए तीन मास और महमूद के लिए तीन मास ग्यारह दिन की सजा थी. उसका जुर्म विश्वविद्यालय में हंगामा करना था, और मेरा जुर्म एक पैंफलेट छापना था. जिसका न अर्थ था, न महत्व. पूछने वाले ने कहा था, "अरे शैतान! चाह रहे हो कि छापने की कला में उस्ताद बन जाओ. ऐसा होने नहीं दूंगा बेटा. अगर फिर यह काम किया, और हमें पता चला, तो खाल खिंचवा दूंगा."

महमूद बोला, "जाने कहां-कहां से खबर लाते हैं. कुछ तो छिपा नहीं है इनसे. आजकल तो किसी से बात भी नहीं करनी चाहिए. खामोशी से मुंह सिलकर रहना चाहिए. तुम किसी से बात मत किया करो."

"खुदाया! यह कैसे मुमकिन हो सकता है भला?"

▣

1962 में वे मुझे अच्छी तरह से पहचानने लगे थे और महमूद को भी. और भी बहुत सारे लोगों को, बहरूज को, सईद को, मेंहदी को, अहमद को, फरीबुर्ज को. हम सब साथ रहते थे. साथ जेल जाते थे—कितना विचित्र था वह सब कुछ!

1963 में कजलकिला जेल कैदियों से भर गयी. विभिन्न समुदायों के लोग थे. कसर जेल का भी यही हाल था. कैदियों में वामपंथी भी थे. महमूद का झुकाव उस ओर हो चुका था. उन्हींके बीच उठता-बैठता था. मुझे बुरा न लगता था. वास्तव में मेरे लिए युद्ध करना...संघर्ष करना महत्वपूर्ण था, न कि किसी विशेष वाद से जाकर लड़ना.

■ नादिर इब्राहिमी

जन्म : 1936. पत्रकार, टाइपिस्ट, डायरेक्टर, गाईड, खजांची, मुंशी, रेडियो, टी. वी., पेंटिंग से लेकर कबाब तक बेचा. कहते हैं—"सियासत और तरह-तरह की नौकरियों ने मुझे अद्भुत अनुभव दिये हैं. जो मरकर जिया हूं. इसलिए निजी तौर पर कोई इच्छा नहीं रखता. बस, यही तमन्ना है कि देश प्रेम का बल हर किसी की आत्मा में बस जाये."

अब तक 32 पुस्तकें प्रकाशित.

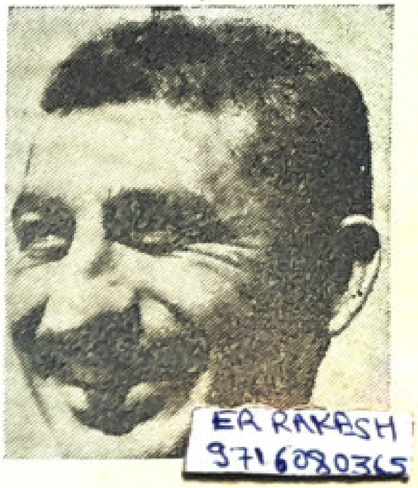

ER RAKASH
9716080365

मेरा जुर्म विभिन्न पैंफलेट छापना था. अब वे समझ चुके थे कि मैं चतुर हो गया हूं. फेंके हुए बेकार कागज दोस्तों की मदद से खरीदता. फिर एक-दो महीने हम सब मिलकर उस पर माथा-पच्ची करते. फिर जाकर कहीं एक खबर तैयार होती. हम एक खबर के पीछे दूसरी खबर छापते थे. जिस खबर के लिए मुझे पकड़ा गया था, वह यह थी—'शाह जनरल, इंगलैंड का सिपाही.' सासान व रहीमी भी पकड़े गये! यह सब महमूद को पता था. वह मेरी आंखों का तारा था.

एक दिन महमूद नींबू के रस की बोतल लेकर आया. उसकी पेंदी में लगा स्टिकर पढ़ाने लगा—"फरीबुर्ज सवाकी है, उससे बचकर रहना." यह कैसे हो सकता है! आश्चर्य से मैंने सोचा! बिना किसी कारण के इत्तिला देकर किसी का दामन भी तो नहीं रंगते थे. जरूर खबर में सच्चाई है. फरीबुर्ज को सबने अकेला छोड़ दिया. वह अपने में ही खोया रहने लगा, सबसे अलग-थलग. जब जेल से बाहर निकला, तो क्रांति को ताक पर रखकर इंजीनियरिंग के कामों में खो गया.

बेचारा फरीबुर्ज! बेगुनाह था, पाक था, ठीक पहाड़ी चश्मे की तरह शफाफ.

■

एक दिन 'मिलने का दिन' था. उस दिन सबको मोसम्मी बंटी. हम सबने अपनी-अपनी मोसम्मी बहरूज के हवाले कर दी जो स्टोरकीपर था. कई दिन बाद जब हम मोसम्मी खाने बैठे, तो सबकी मोसम्मी बदल चुकी थी. किसी में पर्चा निकला—"सईद, मशकूक है, उसे अपने से अलग कर दो."

"सईद इस संग्राम में सबका उस्ताद है. मैं उसके साथ सत्रह साल से मिलकर इस लड़ाई को आगे बढ़ा रहा हूं. वह लोगों के लिए प्रेम का संदेश और देश के नाम पर त्याग की मूर्ति है. ऐसा कैसे हो सकता है!"

यह सब मैंने कहा, मगर किसे यकीन हो सकता था. बोले, "बिना किसी कारण के यह पैगाम न आता..."

सईद एकदम अकेला हो गया. हम लोग बड़ी निष्ठुरता से उसके सामने खामोश रहते. बाद में उसने अपनी कलाई की रग काट डाली और मर गया.

साको भी दांतों से उसकी रग को पकड़ न पाया, जबकि वह इस काम में उस्ताद था.

बेचारा सईद! अगर आज हमारे बीच होता तो पौरुष का प्रतीक होता!

1963 के बाद, संग्राम का रूप बदल चुका था. कुछ लोगों ने कलम को तलवार समझकर उठा लिया. कुछ व्यापार में लग गये, कुछ विदेश चले गये, कुछ ने बंदूक उठा ली. महमूद इन्हीं में से निकला, क्योंकि वह सबसे ज्यादा दिलेर था. कभी-कभी महमूद मन हल्का करने मेरे पास आता. बातें कम करता, क्रोध ज्यादा.

कहता था, "संग्राम! केवल हथियार से...इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं."

1966 में एक बार क्रांतिकारी नौजवान गुट के साथ मुझे भी पकड़ा गया. जेलर ने कहा, "मादर कहबहे, क्या कर रहे थे? गलत-सलत छापना, उल्टी-सीधी पत्थर की लिखाई, मूर्खतापूर्ण मेहनत, गधेपन की हरुफचीनी, पोलीकापी....आखिर बदनाम!"

मैंने कहा, "कम से कम बदनाम शब्द का इस्तेमाल मेरे लिए न करें, मैं विवाहित हूं."

बोला, "अरे, बेगैरत! अगर तुम फलां की जान-पहचान के न होते तो तुम्हें खड़े-खड़े नंगा कर देता और तुम अब तक सात पर कफन फाड़ चुके होते."

महमूद को भी मेरे साथ पकड़ा गया था. किसलिए? पता नहीं चला. मुझे सजा सुनायी गयी कि मैं तेहरान छोड़ दूं और महमूद को तेहरान छोड़कर कहीं न जाने की सजा मिली.

मैंने गुंबद शहर से महमूद को लिखा, "मैं तेहरान आना चाहता हूं. मां को देखने को व्याकुल हूं, मगर उससे पहले कुछ दिन के लिए समुद्र के किनारे जाना चाहता हूं, तुम आओगे?"

जवाब आया, "तेहरान से बाहर निकलना कठिन है, मगर मैं आऊंगा."

■

हमने आपस में प्रोग्राम तय किया और वह आया. कुछ दिन हमने आसतारा (रूस व ईरान की सीमा पर एक शहर) में गुजारे. कितनी बातें की थीं आपस में, उफ! फिर तेहरान लौटे. जिस दिन सुबह लौटे थे, मां को मिलने से पहले ही अपने पुराने मकान के दरवाजे पर मुझे पकड़ लिया गया. गिरफ्तारी के बाद कर्नल बहजादी ने पूछा था, "क्यों लौट आये तेहरान? कार्ड तो न लौटने का जारी हुआ था?"

मेरा उत्तर था, "केवल मां को देखने आया हूं."

"गू खाये! यहां अम्मां की ज्यारत को आये हो! तुम्हारा एक ही इलाज है बस, वह है उम्र कैद! कुत के बाप! ताकि तुम्हारी तरफ से हमेशा के लिए इत्मीनान हो जाये."

मैंने हंसते हुए कहा, "एक आदमी 'कामो' नाम का है, कहता है कि एक

दिन की जिंदगी उस उम्र से कहीं भली है, जिसके बारे में कैद में बैठकर सोचा जाये."

वह कुछ नर्म पड़ते हुए बोला, "तुम कुछ दिन आस्तारा में थे?"

"दस दिन था."

"कुत्ते की औल्लाद! बारह दिन कहो, वह भी महमूद के साथ, जिसे तेहरान से निकलने की इजाजत नहीं है."

मैंने कहा, "शाबाश आपको!"

"वहां क्या काम था?"

"काम कुछ न था. जंगल मुझे पसंद है, समुद्र से मेरा वास्ता नहीं था."

"अब जंगल के खेल का दाग मुझे तुम्हारे सीने पर लगाना है."

—धन्यवाद! आप खुद चले आये... हंड्स अप!

▣

महमूद को फौरन लिखा, "कमबख्त हर चीज की खबर रखते हैं. यहां तक कि हम लोग वहां कितने दिन रहे, और जंगल की किस्मों और लाभ पर हमने क्या-क्या बातें कीं! तुम ध्यान रखना!"

उसने लिखा, "ये ठीक कैंसर की तरह फैल रहे हैं. तुम पूरी तरह से इन बातों से अपने को दूर खींच लो. ये सब बहुत खतरनाक हैं और इतने जालिम कि तुम्हारे बच्चों को भी बख्शने वाले नहीं हैं!"

1971 में मेरे बहुत ही प्रगाढ़ मित्रों को पकड़ा और मार डाला गया. उनमें से एक महमूद का बहुत ही करीबी और प्यारा दोस्त था. दूसरा महमूद के चचा का बेटा था. शिकंजे में ही वह बिना शोयान का पता बताये मर गया.

1972 में महमूद के जानने वालों में से तीन लोगों ने शाह की मूर्ति को बम से उड़ाने का प्रयत्न किया था. जिसने बम रखा था, उसे मार डाला गया. बाकी दो को उम्र कैद हुई.

1974 में एक समुदाय, जिसमें 32 लोग थे. सबके सब बच्चे थे. उन्होंने अभी-अभी काम करना आरंभ ही किया था. सूची के नामों के बीच में मेंहदी के लड़के का नाम, हुसैन के बेटे का नाम, फरीबुर्ज की लड़की और महमूद के छोटे भाई का नाम था. सभी बच्चे ही थे.

रात को महमूद का खयाल आया, जो छुपा हुआ था. मैं दुखी हो सोचने लगा, "अफसोस! महमूद ने केवल दोस्तों का दुख ही नहीं उठाया है, बल्कि उनके बेटों और भाइयों का भी गम देखेगा बेचारा."

महमूद 1975 में गिरफ्तार हुआ और दो वर्ष तीन माह जेल में रहा. एक जेल से दूसरी जेल, जगह बदलता रहा. उसका संबंध विभिन्न छोटे-मोटे गुटों से बन गया था.

फिर आजाद हुआ.

एक दिन बोला, "अब लड़ना नहीं चाहता. मुझमें अब लड़ने का दम नहीं रह गया है."

मैंने सोचा... ठीक ही तो कहता है. सत्ताइस वर्ष हो गये थे लड़ते-लड़ते. बूढ़ा हो गया है. मगर फिर इन्कलाब के आरंभ में वह संग्राम के मैदान में कूद पड़ा. वह अब पार्टी का सदस्य था और एक ऐतिहासिक गौरव की मोहर लगाये हुए था.

इन्कलाब के दिनों में हम साथ ही रहते थे. हमारे रणक्षेत्र दो थे, मगर उद्देश्य एक ही था—आजादी!

▣

धीरे-धीरे हर घटना हर सच्चाई आंखों के सामने आती गयी. हकीकत खून में पीप की बूंद-बूंद बन नफरत के फूल की तरह आहिस्ता-आहिस्ता खुलने लगी. घृणा और द्वेष की तीखी भावना के भंवर में फंसता हुआ मैं डूबने लगा.

कुत्ते की औल्लाद! कुत्ते की औल्लाद! कुत्ते की औल्लाद! मादर कहबहे! मादर कहबहे! मादर कहबहे!

खुदाया! यह कैसे मुमकिन है?

इन गुजरे सालों में इन सारी हिंसात्मक घटनाओं में हमने कहीं भी महमूद के कदम नहीं पाये. न उसकी झलक ही देखी और न अब उसके कदमों के निशान ही...

मगर हाथों को देख रहा हूं. वे कोहनी तक अपने मित्रों और उनके प्रियजनों के खून के सोग में रंगे हुए हैं!

मैं वास्तव में कितना खुशकिस्मत था, जो उसके हाथों कत्ल न हुआ!

▣

मेहरी मेरी प्रतीक्षा में थी. उसकी आंखें लाल हो रही थीं.

मेरी आंखों को जो देखा, तो अधीर होकर बोली, "मैं सोच रही हूं, यह कैसी विपदा पड़ी है!"

मैं रोता हुआ चिल्लाया, "मेरे बालों को देखो! मेरे बालों को गौर से देखो!! सबके सब सफेद हो गये हैं. अब कौन-सी मुसीबत आगे बची है, जिसका मुआवजा मैं दे सकूंगा!" □

सुर्खियां

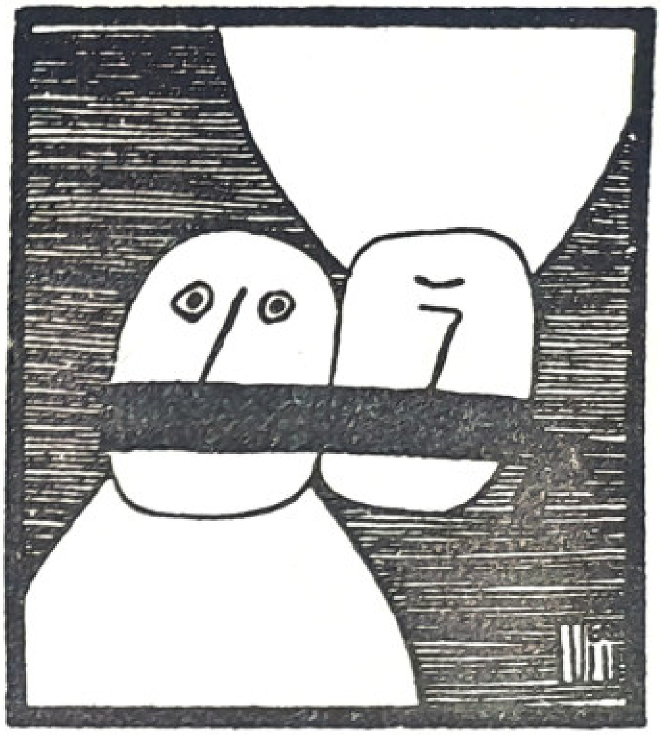

न्याय का रंग

दिलदार हुसैन और फिदा हुसैन दो भाई थे. एक भाई शाह के काल में उसका विरोध करने के आरोप में फांसी पर लटका दिया गया. दूसरा भाई हाथ मलकर रह गया कि न भाई को इस हरकत से बाज रख सका न उसकी जान बचाने में उसकी कोई मदद कर सका! वर्षों बाद ईरान में क्रांति हुई. पहली ही खेप में शाह के प्रति वफादार. फौजी अफसर गोली से उड़ा दिये गये, क्योंकि वे मानवता के दुश्मन थे. इस्लामी गणतंत्र इसे सहन नहीं कर सकता था. सो, दूसरे भाई के सीने पर उसकी गद्दारी के तीन लाल तमगे दाग दिये गये! ▣

चांद तो बेकार है

अमरीकनों के प्रति ईरानियों की नफरत बढ़ती जा रही थी. वे जैसे-तैसे अपनी जान बचाकर भाग रहे थे. उनके घरों पर हमले हुए, आग लगायी गयी. हर क्रांति के लिए जो लाजिमी बातें थीं, घट रही थीं. एक अमरीकी के घर में तोड़-फोड़ चल रही थी, तभी कई लोग देखने के बहाने वहां पहुंचे तो अच्छी बढ़िया चीजें देखकर कुछ का कलेजा मुंह को आने लगा. जब मन न माना तो एक ने बढ़कर बर्तनों की आलमारी से दर्जन भर सुनहरी फूलदार प्लेटें उठा लीं, दूसरे ने कुछ और तीसरे ने कुछ. वे बाहर निकले, तभी किसी ने कहा, "आख थू! अमरीकी बर्तन हैं! हमारे दुश्मन! तुम इनमें खाना खाओगे?"

इतना सुनना था कि सबका लहू खौल उठा. 'मर्गबर अमरीका' (अमेरिका को मौत आये) के नारे के साथ चट-चट बर्तनों के टूटने की आवाजें आयीं. सबने आग बबूला होकर बर्तन और फूलदान तड़ातड़ वहीं तोड़ दिये. ▣

दोनों तरफ स्वर्ग

खलखाली साहब—क्रांतिकारी अदालत के कर्त्ता-धर्त्ता. गोली के जरिये वह ईरान की धरती से बुराई को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं. एक दिन रोती-कलपती एक औरत चादर लपेटे खलखाली साहब के पास आयी और उनसे विनती करते हुए बोली, "वे बेगुनाह हैं! इन सात बच्चों का खयाल कीजिए. मुझे नर्क में मत धकेलिए."

"तुम्हें तो खुश होना चाहिए, तुम्हारे कहने के मुताबिक अगर वह बेगुनाह था और मारा गया है तो समझो शहादत का रुतबा मिला. . .और गुनहगार हो था तो इस्लामी अदालत द्वारा कत्ल होने पर भी वह स्वर्ग में हीजायेगा."

किसको मौत आये?

एक ने चलते हुए दूसरे आदमी का कंधा थपथपाया और आत्मविभोर-सा बोला, "चांद देखो! खुदा की कुदरत का तमाशा. चांद में खुमैनी साहब का चेहरा! "

इस दीवानगी की खबर जनाब खुमैनी के पास पहुंची. उन्होंने लोगों का इतना भावुक हो जाना पसंद नहीं किया. . .और उन्हें ऐसी बातों से रोका. मगर कौन सुनता है?

कुछ माह बाद.

घर-घर बल्ब लगे हैं. बल्ब में जलते तार की जगह खुमैनी साहब का चेहरा लगा है. चांद का क्या है, आज कलाएं हैं, कल निकला न निकला! मगर बल्ब, जब चाहा जलाया और इमाम के लाल मुख का दर्शन कर लिया! ▣

ER RAKESH
9716080365

4 नवंबर, 1979—जंगल की आग की तरह ईरान में जब यह खबर फैल रही थी कि छात्रों ने अमरीकी दूतावास पर कब्जा कर लिया. . . और फिर जब अमरीका ने बंधकों को छुड़वाने के लिए हवाई हमला किया! ... तब ईरान की जनता क्या कर रही थी? क्या सोच रही थी?—बारिश की इच्छा होने पर बाढ़ आ जाने जैसी भयावह स्थितियों और घटनाओं की तारीखवार डायरी—

४४४ जख्मों के टांके और एक डायरी के चंद पन्ने

सुबह दस बजे. पूरे ईरान में यह खबर जंगल की आग की तरह फैल रही थी कि छात्रों ने अमरीकी दूतावास पर कब्जा कर लिया है और वहां के कर्मचारियों को बंधक बना लिया है. जो भी यह खबर सुनता, काम-धाम छोड़कर सीधा अमरीकी दूतावास की तरफ भाग पड़ता.

"यह छात्र कौन हैं?"

"शायद मार्क्सवादी हों या फिर मुजाहिदीन समुदाय के हो सकते हैं."

"है तो हिम्मत का काम. . .मगर किया कैसे?"

टी. वी. रेडियो के संवाददाता अपने-अपने कैमरे लटकाये बदहवास-से अमरीकी दूतावास की तरफ भाग रहे थे. सड़क पर भीड़ थी, लोगों में एक उत्तेजना फैली हुई थी, जिसमें क्रोध, भय और उत्सुकता तीनों ही थे. तभी रेडियो से प्रसारण हुआ—

"ये विद्यार्थी इमाम के अनुयायी तथा धार्मिक विचारों के हैं. इनमें तेहरान विश्वविद्यालय, पोलिटेकनीक व अन्य कालेजों के लड़के शामिल हैं."

लोगों की बेचैनी शांत हुई तो आलोचना आरंभ हो गयी. बर्फ गिरी हुई थी. जाड़ा अपने शबाब पर था. मगर लोग जोश से भरे इधर-उधर सड़क पर घूमते, दूतावास के अंदर-बाहर जा रहे थे, जैसे चांदनी छिटकी हो.

"इसमें, हो न हो कुतुबजादे का हाथ है. वह अमेरिका के मित्र हैं."

"भई, विदेश मंत्री हैं, जो चाहे करें. फिर सुना है कि सी. आई. ए. के पुराने एजेंट हैं."

"मुझे इन विद्यार्थियों का यह उग्र

ER RAKESH 9716080365

● ईरान में क्रांति की घोषणा करते अमरीका विरोधी इश्तिहारों का अंबार

आचरण पसंद नहीं आया. क्या फायदा इन्हें पकड़कर रखने का? बेकार की हंगामेबाजी है. हमारे सामने दसियों जटिल समस्याएं मुंह बाये खड़ी हैं."

"शाह की वापसी और पैसा लौटाने की मांग. . . मुझे तो लगता है कि इस तरह ये समस्याएं बढ़ा रहे हैं."

"यह जमीन, यह इमारत दूसरे देश की थी. शाह की लकीर पीटते जाना कहां का न्याय है. पहले शोर था कि. . . शाह जरूर जाये, अब हंगामा है कि. . . शाह जरूर आये!"

"और हमारी जो दौलत अमरीका हथियाए बैठा है, वह उसकी है क्या?. . . शाह ईरानी मुजरिम है. . .वह क्यों पनाह दिये बैठा है?"

इमाम खुमैनी के भाषण का एक अंश—

"यह उन कालेजों, विश्वविद्यालयों के धर्मपंथी छात्रों का कर्त्तव्य था, जो अपने ऊपर किये गये हर प्रकार के हमले का जवाब देने की ताकत रखते हैं, ताकि इजराइल और अमरीका अपने हिंसात्मक व्यवहार की त्रुटियों को समझते हुए शाह के विरुद्ध कदम उठायें."

विरोधी दल शांत हो गये. सभी सहमत थे. इसके बाद अमरीकी दूतावास में कुछ ऐसे कागजात मिले, जिनसे पता चला कि वह तो जासूसी का अड्डा बना हुआ था. बस, फिर क्या था, जनता का एक ही नारा था कि . . . इन्हें गोली से उड़ा दो!

4 फरवरी, 1980

बाजार सामानों से भरा है. ग्राहक कम हैं. चीजें महंगी हैं. लोगों में असंतोष फैल रहा है. बनीसद्र की कृपा से स्वतंत्र वार्तालाप की सबको स्वतंत्रता है. सो, दूकानदार आराम से धूप सेंकते फुटपाथ के किनारे अपनी दूकानों के सामने खड़े गप्पें मार रहे हैं.

"जो कागजात मिले थे उनकी कुछ खबर है?"

"भई, जासूसों के नाम पर अपने ही लोगों के नाम निकल रहे हैं. फलां विद्यार्थी, फलां अफसर. मगर अमरीकी षडयंत्रों की कोई चर्चा नहीं."

"मुझे तो लगता है यह सारा खेल बजरगान की सरकार को गिराने के लिए हुआ है. दूसरी ओर मदनी जैसा शाही दुश्मन भी अमरीकी निकला!"

"कहते तो ठीक हो, उधर यजदी और बजरगान ने अलजीरिया में ब्रिजनेस्की से भेंट की, उनको लेकर ईरान के हर वर्ग में अजीब-अजीब अटकलें लगायी गयीं कि वह कार्टर के साथ सांठ-गांठ कर रहे हैं. अमरीका को लाकर रहेंगे. . . उधर अमरीका आया और इधर बजरगान का पत्ता साफ."

"मगर यह इस्लामी गणतंत्र वाले कामयाब रहे. उधर बजरगान का लौटना, इधर अमरीकी दूतावास पर घेरना. पूरा ईरान अमरीका के खिलाफ हो रहा था, बजरगान खामोश रह गये. न सफाई में कुछ बोले, न लड़े. बस, इतना कहा— हमने तो बारिश की इच्छा की थी, यहां बाढ़ आ गयी!"

"कुछ भी कहो, आदमी पढ़ा-लिखा था. इन सबसे समझदार. चालीस पुस्तकों का लेखक इनके आगे बुद्धू बन कर रह गया."

"मगर विद्यार्थी वर्ग तो भाई, इन्कलाबी समिति को भी नकारता है, केवल इमाम की बात सुनता है. पहले तो लोगों का कहना था कि स्वयं इमाम के कहने से ऐसा हुआ है. . ."

"पता नहीं भाई, देखो क्या होता है आगे." सब दूकानों में लौट गये.

20 फरवरी, 1980

तब्स में अमरीकी युद्धविमान मौसम की खराबी से गलत जगह उतरा और इंजन में आग लग गयी. उधर से गुजरती बस के ड्राइवर ने यह सब देखा और इस्लामी सिपाहियों को खबर दी. वे दौड़े. अमरीकी घबराये-से भागे और आठ लाशें वहीं जहाज के पास पड़ी रहीं. यहां पर प्रश्न उठता है—क्या ईरानी राडार एकदम खराब थे? फिर जब एक ईरानी अफसर ने कुछ कागज संभाले तो वहां उसके सिर में गोली किसने मारी? इन सारे प्रश्नों का उत्तर है कि ईरान की पुलिस व सेना शाह के प्रति बहुत वफादार थी. सो, आज भी वे लोग उन्हीं के साथ हैं और इस इन्कलाब को समाप्त करना चाहते हैं. नौसेना प्रमुख इस षड्यंत्र में मिला हुआ था, तभी तो अफसरों को गोली से उड़ाया गया.

अप्रैल, 1980

बनीसद्र शांति समिति की बैठक में जाना चाहते थे. उनका कहना था, "हमारे लिए शांति समिति कर्बला का मैदान है, जहां पर जाकर हम शहीद हों और अपनी जीत को हासिल करें!" बनीसद्र चाहते थे कि वह 25 वर्षों के अमरीका के जुल्म को बेनकाब करें. शाह की दौलत वापस लें और ईरान में हुए शहीदों के चित्र दिखाकर दुनिया के सामने ईरान की स्थिति स्पष्ट करें.

मगर आंतरिक गुटबंदी के कारण वे नहीं जा सके. कुम से आये हुक्म के अनुसार उनकी जगह कुतुबजादे विदेश मंत्री बन बैठे और फौरन 500 पत्रकारों के सामने उन्होंने कहा, "बेरोसलेगन व उनके दो साथी; बंधकों में से ईरान से सुरक्षापूर्वक जा सकते हैं." इससे ईरान में तूफान मच गया. मगर कुतुबजादे अपना काम निकाल ले गये. बनीसद्र की कोई नहीं सुन रहा था. सभी उन से नाराज थे.

अगस्त, 1980

"न अमरीकियों ने हमें पैसा दिया न शाह को लौटाया. शाह मर गया और यहां हजारों बार मिलिट्री कूप हुआ. अब उस पक्ष का सारा जोश शाह के पुत्र को वापस लाने में है."

"कुछ भी कहो, हमने दुनिया को हिला दिया है."

"विदेशी अखबार तो निंदा कर रहे हैं. वह हमें भावुक, उग्र, व्यवहार कुशलता में जीरो और जाहिल समझ रहे हैं क्योंकि हमने अंतर्राष्ट्रीय कानून तोड़ दिये हैं."

"हमारा संताप और शोषण वे क्या जाने! ईरान की ऊपरी टीमटाम में अंदर की हालत लोगों को पता भी तो नहीं है. . .कहने दो!"

"हम सब बहुत-बहुत खुश हैं. अब अमरीका किसी भी पिछड़े देश का शोषण नहीं कर पायेगा. इन्हें छठी का दूध याद दिलाया है, यही काफी है!"

20 अक्तूबर, 1980

इराक का आक्रमण, 52 बंधकों पर होने वाला खर्च, महंगाई, बेकारी सबने जैसे एक साथ कमर कस ली है. हमारा इम्तिहान हो रहा है शायद!" वैन से 32 लाशों को निकालता गुशाल बोला.

"तो यहां थका कौन है? लोग लड़ रहे हैं. किस बात की कमी है? हमारी आंखों में घृणा की ज्वाला ही काफी है उन्हें खत्म करने के लिए!" कब्रिस्तान में चार सौ पांचवीं कब्र खोदते हुए जवाब मिला.

30 अक्तूबर, 1980

बम का गोला फटा. सब हैरान. इमाम के अनुयायी छात्रों में से एक का खुला बयान— "हमने बंधकों को पकड़ा था. धीरे-धीरे सरकार ने हमसे उन्हें ले लिया. सारे कागजात, सारी फाइलें. हमें कुछ भी पता नहीं है कि वास्तव में ये बंधक हमने क्यों पकड़े थे! अब वह कहां है? लोग हमसे उन्हें स्वतंत्र करने की मांग करते हैं. . . मगर हम मजबूर हैं".

"इन सारी बातों पर विश्वास न करो. . . किसी ने झूठ छाप दिया है."

"पता नहीं, क्या हो रहा है. मुझे तो लगता है इसमें अमरीका का हाथ है".

"अमरीका का हाथ क्या है, अमरीका स्वयं है यहां. यह हुकूमत और है क्या? एक इमाम से क्या होता है?"

4 नवंबर, 1980

सुबह दस बजे का समय. आज अमरीकी दूतावास के कर्मचारियों को पकड़े एक साल हो चुका है. सारा ईरान,. जुलूस, नारों और पोस्टरों से भरा हुआ है. ऊपर से हवाई जहाज भी ढेरों पर्चे फेंक रहा है. सब लड़के-लड़कियों के बदन पर कफन हैं. सब मरने को तैयार हैं. भय का निशान भी नहीं. दूतावास के प्रांगण में लोग बैठे हैं, लेटे हैं, खा रहे हैं, पी रहे हैं. क्योंकि प्रधानमंत्री का भाषण 11 बजे आरंभ होगा.

"जब तक अमरीका हमारी चारों शर्तें मान नहीं लेता, हम इन्हें आजाद नहीं करेंगे. इन पर मुकदमा चलेगा, ये जासूस हैं." लड़कियों का झुंड बोला.

"अगर यह ऐसे ही छोड़ दिये गये तो?" किसी का दिल धड़का.

"इन शहीदों का खून जो नाहक बहा है, इसका भुगतान कौन करेगा? यह हमारे जीते जी नहीं हो सकता. सारी लड़ाई इन्हीं शर्तों पर निर्भर है."

जर्मन डाक्टरों का कहना है कि कैद में रहने के कारण उनके दिलों पर असर पड़ा है. मगर ईरानियों के दिल और उनकी स्थिति? कौन समझेगा उसे? लेकिन हम समझाकर रहेंगे!

लड़कियां, लड़के, बच्चे, बूढ़े, सब ऊपर से नीचे तक एक ही बात कह रहे हैं. मगर एक आवाज सबसे अलग थी पर दबी हुई, "जो वास्तव में जासूस थे, अफसर थे, वे कोरियन दूतावास की मदद से भाग निकले. अब तो ये कर्मचारी हैं. इनसे क्या लेना-देना".

"यकीन करो, इस सरकार का तख्ता जंग के बाद पलट जायेगा. समस्याओं के प्रकोप में अब ये हमें नारों और जुलूसों से नहीं बहला सकते."

10 नवंबर, 1980

कार्टर की हार, रीगन का आना, ईरान में कुछ लोगों में दुख की लहर फैली. रीगन को सब पहचानते हैं. जिस दिन रीगन ने तसल्ली का खत बंधकों के कुटुंबों को भेजा, लोग समझ गये कि वह हवाई हमले की तैयारी कर रहा है. बंद हवाई अड्डे खोल दिये गये. विदेशियों से भरे जहाज हर हफ्ते विभिन्न दिशाओं की तरफ उड़ने लगे. ईरान सरकार के सामने कोई चारा नहीं रह गया था, सिवाय उन्हें छोड़ने के.

25 दिसंबर, 1980

क्रिसमस का त्योहार! बंधकों के लिए पूरा इंतजाम—केक का, गाने-बजाने का, पादरी का. वे भी प्रसन्नचित से उस में मगन हैं. मगर संसद में इस समस्या को लेकर गर्मागर्म बहसें और अफवाहें फैल रही हैं. लोग चाहते हैं कि बंधक वापस जायें और इराक अपनी फौज पीछे खींचे.

18 जनवरी, 1981

एक लंबे वार्तालाप के बाद अलजीरिया की मध्यस्थता से मसला हल हुआ. अमरीका ईरान की चारों शर्तें मान गया और हजारों कठिनाइयों के बाद 52 बंधक अलजीरिया एयर लाइन के द्वारा आज उड़े. सीधे न जाकर वे वाईसबाडेन में रुके ताकि उनका डाक्टरी मुआयना हो.

19 जनवरी, 1981

डाक्टरों ने बताया है कि उन्हें 'किजसिनडरोम' बीमारी हो गयी है. यह बीमारी दिमागी सदमे के कारण पैदा हो जाती है. ताज्जुब है, दूसरों को कठ-

● बायें—व्हाइट हाउस में शाह के स्वागत में राष्ट्रपति फोर्ड द्वारा किया गया भव्य आयोजन, जिसमें अमरीका की प्रमुख अभिनेत्री एन मार्गरेट एवं उसके साथियों ने समारोह की रौनक बढ़ायी.

● नीचे—21 जनवरी को तेहरान से अलजीरिया पहुंचे, आजादी की खुशी में मस्त अमरीकी बंधक.

ER RAKESH
9716080365

पुतली की तरह नचाने वालों का यह हाल है! ईरानियों को 30 वर्ष तक बंधक बनाये रहे, लाशों के ढेर के ढेर कुम में स्थित नमक की झील में डलवाते रहे...तो भी ईरानी बीमार न पड़े. यह केवल एक वर्ष कुछ मास में ही बोल गये? जर्मन डाक्टरों का कहना है कि कैद में रहने से उनके दिलों पर असर पड़ा है. मगर ईरानियों के दिल और उनकी स्थिति? कौन समझेगा उसे?. . .मगर हम समझाकर रहेंगे!

20 जनवरी, 1981

रीगन के शपथ ग्रहण करने के आधे घंटे बाद 52 बंधक अमरीका पहुंच गये. 4 लाख लोग सड़क पर उनके स्वागत के लिए खड़े थे.

52 ईरानी छात्र जो अमरीका निवासी हैं, 52 गुलाब की कलियां लेकर उन्हें शुभ 'आगमन' कहने आये.

444 दिन बाद यह मसला शांत हो गया. मगर इराक और ईरान की लड़ाई अभी तक जारी है.

इराक ने बम गिराकर ईरान के कुछ हिस्से नष्ट किये. मगर ईरान रेडियो का दावा है कि उसने अमरीका का चेहरा जमीन पर रगड़ दिया है, अब वह कभी इधर का रुख नहीं करेगा!

मार्च, 1981

ईरानी सरकार केवल इस्लाम का प्रचार करने में व्यस्त रही और बड़े से बड़ा अवसर अपनी नादानी से खोती रही. जहां बंधकों को पकड़ हमने साम्राज्यवाद की नींव हिला दी थी, वहीं पर उन्हें अधिक समय रखकर अपनी साख खो बैठे. ईरान की जनता यह क्रांति लायी थी, आज वही सब कुछ झेल रही है. तय था कि बिना मुकदमे के ये बंधक नहीं छोड़े जायेंगे. फिर यह क्या हुआ? क्या रीगन ने धमकाया था? क्या इस्लामी सरकार अपनी सत्ता जमाने के लिए उनसे सहायता मांगेगी? रेजा साआदती, जो वर्षों शाह की कैद में रहे, उनका मुकदमा, जेल, सजा सब कुछ हुआ मगर. . .? 22 बिलियन की जगह मिस्टर रीगन केवल 8 बिलियन के लिए तैयार हुए हैं. वह भी शाह द्वारा लिये गये कर्ज वगैरह में से कटकर मिलेगा. शाह की बहन अशरफ और पूरा परिवार वहां है. सही अनुमान भी तो नहीं लगाया जा सकता है कि ईरान का वास्तव में कितना धन वहां है. सारे लोग रुपयों के साथ बहुत पहले भाग गये थे. उनके घरों में गुसल की जंजीरें तक सोने की थीं पर जनता के लिए पूरे ईरान में कोई भी जनसुविधा न थी! मेरे मन से कोई पूछे कि हमसे (ईरानी जनता) कैसे-कैसे झूठ बोले गये हैं. लगता है यह सरकार भी पूंजीवाद की धुरी पर नाच रही है. देखो, आगे होता क्या है, कुछ खबर नहीं है! □

हम पर क्या-क्या गुजरी है...

जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो! ...कि अराजक सरकारें प्राय: लेखकों पर कैसे-कैसे जुल्म ढाती हैं और दमन के खौफनाक साये में पल-पल मौत की प्रतीक्षा करते लेखक किस तरह कलम के दम पर तलवार से जा टकराते हैं! प्रस्तुत हैं ईरानी लेखकों के क्रियाकलाप, साहित्य और जीवन पर जानकारीपूर्ण टिप्पणियां :

ईरानी लेखक संघ का खत राष्ट्रपति के नाम

जनाब राष्ट्रपति! इतिहास के इस नाजुक और पुरखतर मौके पर सेंसरशिप और घुटन का अजदहा हम सबको निगल रहा है. लगता है, जैसे सरकार की सारी ताकत छापेखाने को बंद करने, किताबों को जलाने, मजदूरों को बेकार करने, क्रांतिकारी लेखकों पर दबाव डालने और उनकी स्वतंत्रता छीनने में ही सर्फ हो रही है. राष्ट्रपति के चुनाव के बाद इस सिलसिले में आपको एक पत्र हमने लिखा था, जिसमें अपने विचार सेंसरशिप के बारे में, विचारों की राजनीतिक स्वतंत्रता, वह भी संस्कृति को सामने रखते हुए, जनाब को पेश किये थे. ईरान के इन्कलाब की मूल मांग यही थी. संविधान की धारा के मुताबिक, सेंसरशिप और बोलने-लिखने की स्वतंत्रता आपके हाथों में है. यह संस्था आपसे आज उसी हक की बात कर रही है. आपको तीन मास हो गये हैं पद संभाले हुए. इन तीन मास में छापेखाने और सेंसरशिप की हालत बदतर हो गयी है. अब तो आलम यह है कि यदि एक पंक्ति भी सरकार की पसंद की नहीं हुई तो वे कुछ भी छापने से इन्कार कर देते हैं. इस्लामी अदालत के आदेश से छापेखाने बंद पड़े हैं. जबानी तौर से प्रकाशकों और बुकसेलर्स को कह दिया गया है कि सेंसरबोर्ड के पास होने पर ही किताब छपेगी. क्या यही शाही तरीका पहले न था?

हम ईरानी लेखकों का दोष क्या है? देश की सेंसरशिप की घुटन दोबारा हमें अपनी लपेट में ले रही है और इस बार पहले से शदीदतर है. जनाब, वह सारी घुटन, सेंसरशिप, स्वतंत्रता की कमी, बोलने-लिखने की मनाही आदि हमारी जो भी तकलीफें पहली हुकूमत में थीं, क्या वह उसी तरह अब भी हमारे ऊपर बनी रहेंगी? क्या हजारों बेगुनाह लोगों का खून इसी दिन के लिए बहाया गया था कि दोबारा हम उसी षड्यंत्र के शिकार हो जायें? आपने तो राष्ट्रपति पद को संभालने से पहले हमें आजादी का वचन दिया था और हर तरह की सेंसरशिप और घुटन के खिलाफ नारे लगाये थे. फिर कैसे इन सारी घटनाओं के साक्षी बने आप खामोश हैं. वह घुटन, जो अपने काले डैनों से हमारे सिरों पर मंडरा रही है, उसके नाश के के लिए आप कोई साहसिक कदम क्यों नहीं उठा रहे हैं? राष्ट्रपतिजी, हम छापेखाने को बंद करने, उनके मजदूरों को बेकार करने, फिर से घुटन व सेंसरशिप लगाने जैसी कार्रवाइयों की अपनी पूरी ताकत से निंदा करते हैं. इन बातों के साथ वे कहां पहुंचना चाहते हैं? जनता की बढ़ती चेतना से अपनी घबराहट और वहशत को छिपाना चाहते हैं या बेबुनियाद वायदों एवं जनता के साथ ईमानदारी का व्यवहार न करने से शर्मिंदा होकर ऐसा कर रहे हैं?

हम अपने अडिग विश्वास और सहृदयता से आपको सावधान कर रहे हैं कि इन तरीकों से कोई भी अपने किसी उद्देश्य तक नहीं पहुंच सकता. ईरान की इन्कलाबी और जाग्रत जनता इस बात की इजाजत कभी भी नहीं देगी कि स्वतंत्रता के दुश्मन, उन्नत एवं स्वस्थ विचारों वाले देशवासियों की फिक्र और आकांक्षा को कब्रिस्तान में दफन कर डालें.

20 मार्च, 1980

● ईरानी लेखक संघ

—क्रांति के कुछ समय बाद.
"इसने क्या शराब बेची थी?"
"नहीं भाई, बेचारे ने किताब बेची थी."

तेल की धरती के लेखकों की जीवनगाथाएं : किसे पढ़ाएं, किसे सुनाएं?

ईरान में घुटन का एक दौर वह था, जब कबूतर, आसमान, आजादी, खामोशी, लाले का फूल, बंधे हाथ, सिले होंठ का प्रयोग चाहे जिस संदर्भ में किया गया हो, मगर उसका अर्थ एक ही लगाया जाता था कि या तो यह सियासी उपमाएं हैं या फिर शाह पर सीधा कटाक्ष. सेंसरबोर्ड के बिना पास किये किसी किताब का छपना ईरान में नामुमकिन था. सो, तेल की धरती पर सांस लेने वाले लेखकों एवं कवियों की सांसों का हिसाब उनके खाते में होता था और बुद्धिजीवी अपनी सांसें अपने वश में करके किताब छपवाते न थे. अगर छपवाते भी थे तो बहुत लुका-छिपाकर रखी जाती थीं और विशेष हाथों तक ही सीमित रहती थीं.

सेंसरबोर्ड के लोग अधिक पढ़े-लिखे न होते थे. सो, गूढ़ विषयों पर या कहानी-कविताओं में फैले प्रतीकात्मक शब्दों के मायाजाल में डूबकर मोती नहीं निकाल पाते थे. इन सारे शब्दों को वह किसी मामूली प्रेमकथा में देखकर उस किताब को न छपने वाली फेरिस्त में डाल देते थे और जो गहरी आलोचनाओं और उपमाओं के जरिये शहनशाहियत

के परखचे उड़ाती थीं, उन्हें दर्शन समझकर छपने की इजाजत दे देते थे. यह घपले में होता था, मगर ऐसी किताबों का पाठक एक वर्ग विशेष था, जो उसके छिपे अर्थ को समझता था, मगर कभी-कभी ऐसा भी होता था कि यदि कोई जेल चला गया तो उसकी पुस्तक सेंसरबोर्ड देखेगा भी नहीं. बुद्धिजीवी वर्ग शाह के समय में अपनी पांडुलिपियों की सलीब सीने पर रखे जी रहा था.

शाहबानो फरहा मल्लिका का विशेष लगाव ललित कलाओं की तरफ था या वह आत्मप्रदर्शन करना चाहती थीं. वस्तुतः वह अच्छे और बड़े बुद्धिजीवियों को बड़े-बड़े लालच देकर दरबार एवं उसके जलसों में आमंत्रित करती थीं, मगर आज जो क्रांतिकारी लेखक और कवि हैं, उन्होंने उनको किसी भी तरह से घास तक न डाली. जो चूक गये, वह दरबारी बन गये. शोहरत मिली, दौलत मिली, जिंदगी की रंगीनी मिली, लेकिन लेखकों और कवियों की उस पंक्ति से, जो समाज के प्रति ईमानदार थी, वे अनजाने ही कटकर अलग हो गये और आज इन्कलाब के बाद उन दरबारी बुद्धिजीवियों की हैसियत उस कटी पतंग की तरह है, जो कहीं पर कटकर किसी भी छत पर अटक सकती है.

इन्कलाब के बाद जब सेंसरशिप थोड़े दिनों के लिए हटी थी तो उस बीच ईरान का पिछले 50 वर्ष का बेहतरीन साहित्य खुलकर सामने आया और किताबों की उन दूकानों पर, जहां इक्का-दुक्का आदमी नजर आते थे, भीड़ का समुद्र नजर आने लगा. लोग किताबें यों खरीदते और पढ़ते हैं, जैसे बरसों के बाद किसी भूखे को खाना मिला हो.

लेखकों एवं कवियों ने अपनी विचारधारा और ईरान को स्वतंत्र कराने में जिन जिन यातनाओं को झेला, उसके सामने उनकी कहानियां और कविताएं फीकी जान पड़ती हैं, क्योंकि स्वयं उनकी अपनी जिंदगी किसी जीती-जागती महानकृति से कम नहीं है. इन शाहकारों में से चंद का परिचय यहां दिया जा रहा है—

कितना अच्छा हो कि...

▣ *आतफे गोर्गीन*

खुसरू गोलसोर्खी ऐसे कवि और पत्रकार थे, जिन्होंने इस्लाम द्वारा मार्क्सवाद को पहचाना. पौरुष और वीरता में तमाम क्रांतिकारी लेखकों को पीछे छोड़ गोलसोर्खी ने यह साबित किया कि आम आदमी के लिए वह सिर्फ कलम से ही नहीं लड़ सकते, समय पड़ने पर जान की बाजी भी लगा सकते हैं. उन्होंने शाही सरकार के सामने सिर नहीं झुकाया, बल्कि जनता के पक्ष में बोलते हुए फांसी के फंदे पर झूल गये.

गोलसोर्खी की पत्नी आतफे गोर्गीन अच्छी कवयित्री और पत्रकार हैं. उन्होंने बताया, "जब उन्हें फांसी हुई, मैं जेल में थी. मैं उनसे मिलने गयी तो उन्होंने कहा, 'कितना अच्छा हो कि आदमी कुछ देकर जाये. हमारी चिंता का केंद्र पूरा मानव समाज है.' आज मुझे गर्व है कि मैं कुछ कर रही हूं. मार्क्सवादी विचारधारा के कारण यहां मैं बेकार हूं, लेकिन मेरे लिए यह चिंता की बात नहीं. जहां सब बेकार, वहां मैं भी. उनका विश्वास साम्यवाद में था, परंतु वह किसी भी गुट, किसी भी समुदाय से बंधे नहीं थे. उनका संपर्क केवल जनता से था. वह गरीब-दुखी जनता के लिए सोचते थे, वही मेरा उद्देश्य है."

आतफे गोर्गीन 'फस्ले दर गोलसोर्खी' नामक डाइजेस्ट निकालती हैं, जिसमें साहित्यिक व राजनीतिक विषयों पर चर्चा होती है.

चोर, तस्कर और लेखक!

▣ *बुजुर्ग अलवी*

फारसी गद्य के सम्राट और अपने समय के प्रसिद्ध क्रांतिकारी बुजुर्ग अलवी की कलम इतनी पैनी है कि उनका लिखा पढ़कर आदमी का कलेजा खून तो नहीं होगा, मगर ऐसी मीठी-मीठी तड़पन का एहसास होगा, जैसे किसी ने बड़े-बड़े नाखूनों से आदमी के सारे वजूद को नोंच डाला हो. खराश से खून तो नहीं निकला, मगर अपनी तमाम सोजिश के साथ छलक जरूर गया. जवानी शाही जेल में कटी. देश निकाला हुआ तो विदेशों में दर-दर की ठोकरें खाते रहे. भेंट होने पर उन्होंने बताया कि जेल में शुगर क्यूब के रैपर्स, सिगरेट की पन्नी व मिठाइयों के लिफाफे हमारे राइटिंग पैड हुआ करते थे. जेल में लेखन उस समय बहुत बड़ा जुर्म हुआ करता था. मोहम्मद फारुखी यजदी केवल शेर लिखने के जुर्म में शहीद हुआ. वहां आये कैदी से एक ही प्रश्न पूछा जाता ,"क्यों भाई, क्या गुल खिलाया था."

"कुछ नहीं बिरादर, मैं तो मस्जिद में नमाज पढ़ रहा था. आये और यहां कर गये." वे गंभीर होकर कहते, मगर धीरे-धीरे खुल जाते तो बताते, "कुछ नहीं, मजबूरी थी. 100 तुमान चुराये. मुझ क्या पता था कि 80 तुमान दारोगा को देनी चाहिए थी. सो, भुगत रहा हूं."उसके इस अंदाज से खाने के इंचार्ज और शातिर बदमाश कहते,

"100 तुमान की चोरी छिछोरापन है. मैंने तो सरकारी दफ्तर से 40 हजार का माल उड़ाया है."

खैर, दुख की बात यह थी कि कैदियों में भेदभाव बरता जाता. सरकारी चोर की अच्छी आवभगत होती. इसके बाद स्मगलर आराम से होते. खराब आदमी तो सिर्फ सियासी कैदी को समझा जाता. कत्ल के आरोप में गुलाम हुसेन 3 वर्ष की सजा पाता है, लेकिन सियासी कैदी होने के कारण मुझे सात वर्ष की सजा मिली, वह भी बामशक्कत.

बेचना मना, पढ़ना भी मना!

▣ शफी कदकनी

अभिव्यक्ति पर लगी पाबंदी के कारण जनता में व्याप्त घुटन का जितना अच्छा चित्रण शफी कदकनी की रचनाओं में मिलता है, शामलू को छोड़कर अन्यत्र नहीं मिलता. शफी पहले मौलवी थे, फिर अध्यापक हुए और बाद में इन्कलाबी. उनसे भेंट होने पर लगा कि चेहरे से थकन और आंखों से निराशा टपक रही है. दुबले-पतले तन और छोटे कद के इस सीधे-सादे शायर ने बताया कि क्रांति के बाद साहित्य में कोई खास इजाफा नहीं हुआ. गद्य में पत्रकारिता बढ़ी है, जिसकी धुरी इस्लाम या शाश्वत वचन हैं. जो छप रहा है, वह यही है और जो छप नहीं रहा, लिखकर छिपाया जा रहा है. वह छपेगा तो बहुत अच्छा साहित्य निकलकर सामने आयेगा. शफी कदकनी उन लेखकों में से हैं, जिनकी पुस्तकों को शाह के समय में बेचना तो दूर, पढ़ना भी मना था.

क्या-क्या मत करो!

▣ गौहर मुराद

सीता के चित्र, रविशंकर और बिस्मिल्ला खां के रिकार्ड—गौहर मुराद के घर देखकर लगा कि लंबी यातनाओं के सफर के बाद भी गौहर के अंदर का लेखक मरा नहीं है. वह अपने आसपास ही नहीं, दूर देशों की कला और जीवन को समझने की नजर रखते हैं. उनके नाटक देखकर मन में एक चित्र बना था—जेल की यातनाओं से अधमरे, दुबले-पतले, थके-हारे एक बूढ़े लेखक का, किंतु देखा तो इसके विपरीत पाया—सेहतमंद, प्रसन्नचित्त और हंसमुख आदमी, जिसके चेहरे पर जख्मों के तमाम निशान, बदन पर सलाखों और चाबुकों के न जाने कितने घाव. ईरान और इन्कलाब की बात पर बोले, "ईरान की संस्कृति को कुछ लोग तोड़-मरोड़ रहे है. ललितकलाओं को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहते हैं."

गौहर मुराद न सिर्फ सफल नाटककार, बल्कि सफल कथाकार भी हैं. करीब एक दर्जन किताबें छपी हैं. लेखन में चुभन और कटाक्ष है. कलम की प्रखरता के कारण बरसों शाही जेल में रहे, पर सरकार की आलोचना से कभी बाज न आये.

तलवों पर चमड़े का जुल्म!

▣ नसीम खाकसार

नसीम खाकसार एक अच्छे कथाकार हैं. डेढ़ वर्ष बाद हाल ही में जेल से छूटे हैं. छह वर्ष शाही शासन में भी जेल में गुजारे, सो उनकी कहानियों में दबा-दबा-सा आक्रोश है, दर्द है और है दुख उठाने का संताप. धरती से जुड़े ईरानी आम आदमी की अभिव्यक्ति इनकी कहानियों में है. मार्क्सवाद का अध्ययन इन्होंने बचपन से ही प्रारंभ कर दिया था. इंटर पास कर गांव में मास्टर हुए और समद बहरंगी से पत्र-व्यवहार के बाद इन्कलाबी हो गये. भेंट होने पर नसीम ने बताया, "कौन-सा जुल्म है, जो जेल में हम पर ढाया न गया. मार खाने के बाद चलना लगभग नामुमकिन हो जाता. वे पहले बहलाते-फुसलाते और फिर पीड़ित करते. झूठी बातें करके वे सच उगलवाना चाहते थे. न बोलने पर चमड़े की बेल्ट होती और हमारे तलवे"

दूसरे लेखकों की तरह मार्क्सवादी होने के कारण नसीम खाकसार को भी नौकरी से निकाल दिया गया है. दो छोटे बच्चों के पिता और कई किताबों के लेखक नसीम कल की आशा में किसी तरह जिंदगी की गाड़ी खींच रहे हैं.

इन्कलाब के बाद का ड्रामा

▣ सईद सोल्तानपोर

अपनी पैनी दृष्टि से कलम के जरिये लोगों के मुखौटे उतारने और खाल उधेड़ने में माहिर सईद सोल्तानपोर न सिर्फ सफल नाटककार, बल्कि संवेदनशील कवि भी है, सैकड़ों गुटों में बंटे मार्क्सवादियों के हर गुट में समान रूप से लोकप्रिय.

अधपके बाल, पतला-कमजोर बदन, घनी मूंछें और ओज से भरा सांवला चेहरा, जिस पर छोटी, मगर तेज-चमकीली आंखें और मासूम हंसी. यही हैं सईद सोल्तानपोर, जो इस्लामी गणतंत्र में अपनी चौकड़ी भूल चुके हैं. पूछने पर बताते हैं, "इन्कलाब के बाद सेंसरशिप खत्म हुई. हमें आजादी मिली, जिसको हमने अच्छी तरह से इस्तेमाल भी किया. बाजार अच्छी किताबों से पट गये. इसी समय मैंने ईरान की वर्तमान राजनीति पर एक ड्रामा लिखा, जिसके एक पात्र (बस ड्राइवर) की शक्ल खुमैनी से हुबहू मिलती है. इसे देखने के लिए पढ़े-लिखे लोगों की भीड़ बढ़ी, लेकिन दूसरे ही शो में मुझ पर कातिलाना हमला हुआ. किसी तरह से यूनिवर्सिटी पहुंच गया तो प्राण बच गये अन्यथा..." □

खूनी ताने-बाने

• इब्राहिम मोतामद नेज़ाद

क्या ईरान दौलत और ऐशो-आराम का पालना है? या ज्वालामुखी के मुहाने पर खड़ा एक देश, जिस पर न जाने कब क्या गुजर जाये?—ईरान के भविष्य यानी बाल श्रमिकों के शोषण और उत्पीड़न की मद के कालीन बनाने वालों की समर्पित मार्मिक कहानी——

ER RAKESH
9716080365

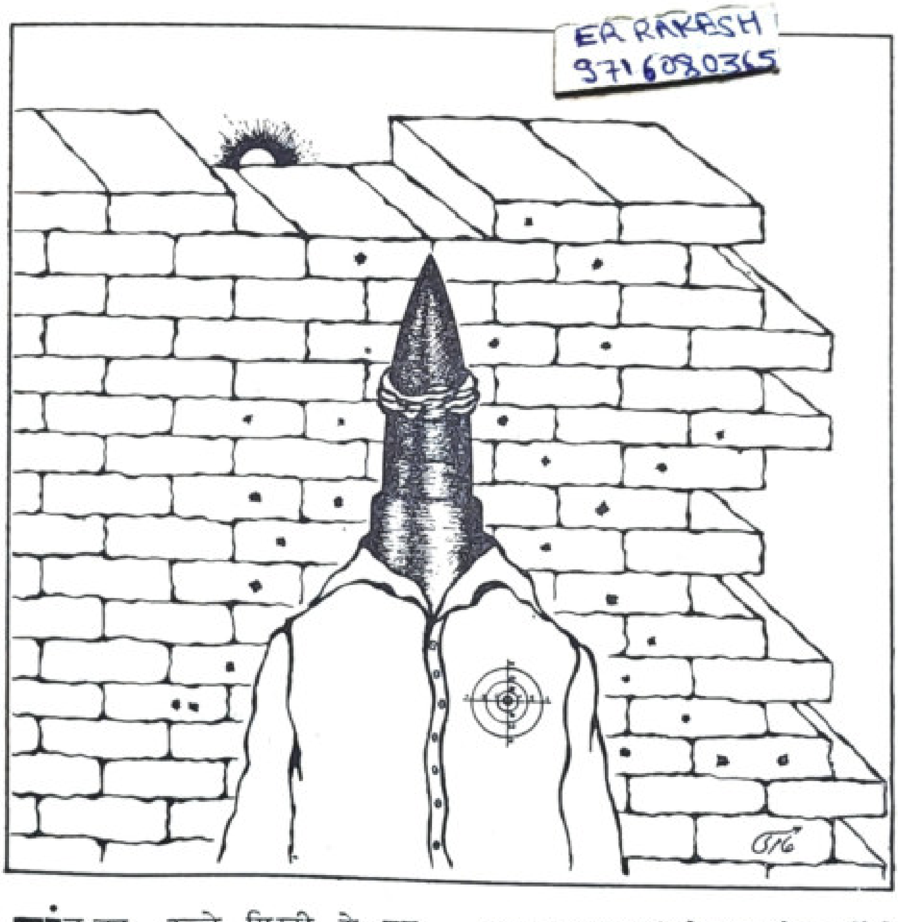

पांच-छह कच्चे मिट्टी के घर, बेर और सेंदज के कुछ पेड़, एक तंदूर, उथला चश्मा, छोटी-सी तलैया —यही सब कुछ उस टेढ़े-मेढ़े मैदान में फैल बीज़ूम गांव को आबाद किये थे.

दोपहर का समय था. पूरा गांव जलते सूरज से भाड़ के चने की तरह भुन रहा था. दीवार के साये में बैठा गाय-भेड़ों का झुंड जबरदस्ती जुगाली कर रहा था. हांफते हुए और गर्मी से पगलाये पक्षी पत्तियों की ओट में दुबके बैठे थे. मैदान के एक तरफ एक बड़े-से पेड़ की मोटी शाख से खाल उतरी भेड़ टंगी हुई थी. वह पूरी की पूरी मक्खियों से अटी हुई थी. अपने हाथ में बड़ा-सा चाकू थामे एक बूढ़ा उकड़ूं बैठा बीच-बीच में हांक भी लगाता जा रहा था, "गोश्त . . . गोश्त . . . भेड़ का."

चश्मे के किनारे बैठा काला-कलूटा लड़का पत्थर से रगड़-रगड़कर हाथ का मैल छुड़ा रहा था. कुछ ही दूर पर कीचड़ में सना कुत्ता पानी में गोते लगा रहा था. इससे थोड़ी ही दूर पर गुलअफरोज सिर से पैर तक पसीने में नहाती हुई सामने रखे आटे के पिंडों को बेल-बेलकर तंदूर की दीवार पर चिपका रही थी और बीच-बीच में सिकी हुई रोटियों को एक तरफ रखती भी जा रही थी. पांव की एड़ियां तंदूर की गर्मी से चटख रहीं थीं. गुलअफरोज की उम्र यही कोई आठ वर्ष के लगभग होगी. उसके शरीर पर चर्बी नहीं के बराबर थी. हड्डीला चेहरा और सूरज की तपिश से जली रंगत. छोटी-छोटी चमकीली आंखें काले चेहरे पर अजीब तरह से नृत्य करती थीं, उलझे बाल, जिनमें जुएं ही जुएं थे, सूती चादर के नीचे ढके हुए थे. रंग उड़े कपड़े घुटनों के नीचे तक चिथड़ों से लटक रहे थे, जिनसे झांकती दो पतली सूखी टांगें खपच्चियों की तरह उसके शरीर को उठाये हुए लग रही थीं.

एकाएक दूर से आती घोड़ों की टापों से मैदान गूंज उठा. बूढ़े कस्साब ने भेड़ की लाश को तेजी से उतारा और कंधे पर रख सामने की पतली गली के दहाने में जा घुसा.

"हाय! हाय. . . . सिपाही आ गये हैं. भागो. . .!!"

गुलअफरोज घबरायी-सी उसी कस्साब के पीछे भागी. गायें और भेड़ें भी माऽऽऽ माऽऽऽ बाऽऽऽ की आवाजों के साथ बिखरने लगीं. क्षणभर में ही मैदान खाली हो गया और तीन घुड़-

सवार उस मैदान में पहुंच गये.

"अरे...अरे...अरे बुजदिलो! मत डरो! कहां हैं रोड गार्ड, अरे भाई, यह तो मैं हूं...अलीमर्दान खान...आया हूं, ताकि कालीन बुनने वाले बच्चों को ले जाऊं."

सुनकर छिपे हुए लोग अपनी जगह से सरकने लगे. जब उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि वे सिपाही नहीं हैं तो बाहर निकल मैदान में जमा हो गये.

अलीमर्दान खान छोटे कद, लंबे हाथ और भारी गालों वाला आदमी था. उसकी आंखों में बहती घृणा और छिपी बदले की तीव्र भावना पा जाने के बाद भी लोग उसके हाथ और पैरों का चुंबन ले रहे थे और कह रहे थे, "पधारें मालिक!"

"हम तो आपके पैरों की धूल के समान हैं जमींदार साहब!"

"खुदा हमारे ऊपर मालिक का साया बनाये रखे!"

"ये हड्डियां, ये गोश्त तो कहने भर को हमारा है, मगर संपूर्ण वजूद आप ही के दम से है!"

हर कोई अपनी औलादों को अलीमर्दान खान के सामने लाता और घिघियाता-सा खुशामद करता हाथ-पैर जोड़ रहा था!

अलीमर्दान खान ने गुलअफरोज के अंग-अंग का यूं निरीक्षण किया, जैसे कस्साब बकरे को खरीदने से पहले देखता है. और फिर उसके पिता से बोला, "कितने दिनों के लिए दोगे?"

"जितने दिन के लिए अन्नदाता चाहेंगे!" वह दोनों हाथ जोड़कर बोला.

"बहुत बढ़िया....बहुत अच्छा... शाबाश! रोज का तुमको पांच रेयाल (पैसा) मिलेगा और ऊपर से इसको रोटी-पानी. अब बोलो, इससे ज्यादा क्या चाहिए!"

"कुछ नहीं मालिक...कुछ नहीं! हमारे लिए यही बहुत है."

"इसे ले जाऊंगा 'मुद' आबादी की ओर. वह जगह अच्छी है. यह मत भूलना कि पांच साल के पहले बिना मेरी मर्जी के तुम इसे वापस नहीं बुला सकते. मेरे पास कोई मुफ्त की रोटियां तो हैं नहीं, जो लंगर लुटाऊं. इसके पेट को

ER RAKESH 9716080365

■ कीमत : हैसियत के मुताबिक

—तो कीमत रखने की आजादी तुमने अपने हाथ में ले ली!

भरने के लिए पांच साल तक पैसा खर्च करूंगा और बाद में नतीजा क्या निकलेगा, यही न कि मुफ्त और सस्ते में इसे गंवा बैठूंगा...."

अलीमर्दान खान ने दोनों हट्टे-कट्टे मर्दों की तरफ इशारा किया और गुर्राया, "कौन है, जो इस लड़की को घोड़े पर बिठायेगा!" वह, जो कद में लंबा और अधिक तगड़ा था, आगे बढ़ा. गुलअफरोज उकाब के पंजों में फंसी एक चिड़िया की तरह उसके हाथों में आयी और उसने उसे एक हाथ से उठाकर ऊंचे घोड़े की पीठ पर बिठा दिया. अलीमर्दान खान उचककर घोड़े पर सवार हुआ और पलक झपकते ही तीनों घोड़े पहाड़ियों के पीछे गायब हो गये.

■

गुलअफरोज कारखाने के कोने में बैठी घुटनों पर सिर रखे खामोशी से चांदनी के चकत्ते को टुकटुकी लगाये देख रही थी, थकी झुंझलायी-सी. नींद का कोसों पता न था. मां की गर्म गोद की याद उसे दुख पहुंचा रही थी. उसी के सामने एक-दूसरे से लिपटी मासूमा व असमत बेखबर खर्राटे भर रही थीं.

पौ फटने ही वाली थी कि कारखाने का दरवाजा चर्र की आवाज के साथ खुला और एक लंबी-चौड़ी छाया दरवाजे पर दिखी. यह बड़ा 'उस्ताद' था. भयभीत असमत और मासूमा डर-कर सोते से उठ गयीं. उन पर बड़े उस्ताद की फटकार पड़ी, "मुर्दा-लाशों उठो, जाकर पानी भरो! झाड़ू का काम गुलअफरोज का है. पहले मालिक का घर बुहारना है, बाद में कारखाना."

असमत और मासूमा लाल फूली आंखें लिये घड़े कंधे पर रख चश्मे की ओर चलीं और गुलअफरोज दुखी निढाल-सी झाड़ू थामे गली के उस पार मालिक के घर की ओर.

जब मासूमा व असमत अपना काम समाप्त करके लौटीं तो गुलअफरोज भी काम से निबटकर लौट चुकी थी. उसका दिल एक चाय के लिए तड़प रहा था और दिमाग 'बीजूम' देहात में घूम रहा था. जैसे ही बड़ा उस्ताद मालिक के घर से बाहर निकला, उदास मुरझाये चेहरे से तीनों लड़कियां कालीन बुनने का चाकू हाथ में लिये उसके सामने बैठ गयीं. बड़ा उस्ताद हाथ में कालीन का नमूना पकड़े उन्हें बुनना सिखाने लगा.

"क्या मौत आ रही है या हाथों में लकवा मार गया है... तेजी से हाथ चलाओ... इधर खींचो... उधर."

लड़कियां लंबी कांपती उंगलियों से विभिन्न रंगों के ऊन में गांठें लगातीं और फिर उसके सिरे को कूटतीं. बड़ा उस्ताद ध्यान से निरीक्षण करता रहा.

दोपहर को वह तीनों छोटी लड़कियां एक बड़े प्याले के चारों तरफ बैठी भूख से व्याकुल हो बड़े चाव से भोजन करने में मशगूल थीं. जब वह गाढ़ा सब्जी-वाला सूप खत्म हुआ तो मासूमा ने

गली के नुक्कड़ को देखते हुए धीरे-से कहा, "कितना रंग था!"

शाम को सूरज डूबने के समय जब उन्होंने हाथों से चाकू रख दिये, तभी उस्ताद की आवाज आयी, "उठो, जल्दी से पानी भरो. फिर बाड़े में भी जाना है!"

गुलअफरोज ने भेड़ों का झुंड जमा कर लिया और उनकी नांद में ताजी घास डालने लगी. असमत और मासूमा बड़बड़ाती हुई बाड़े की बाल्टियां को पानी से भरने लगीं.

एकाएक रात में गुलअफरोज फूट-फूटकर रोने लगी. रोने की आवाज से मासूमा और असमत जाग उठीं और वे दोनों भी रोने लगीं. जब गुलअफरोज जीभर कर रो ली तो असमत से बोली, "ऐसा नहीं हो सकता है कि किसी तरह यहां से निकल चलें?"

"ऐसा नहीं हो सकता है अफरोज, पिछले साल मासूमा भागी थी. कुछ दिनों बाद मालिक उसे ढूंढ़ने पहुंचा, बाप ने इनकार कर दिया, इस पर मालिक ने मासूमा के पिता को गोली मार दी!" असमत खामोश हो गयी और मासूमा ने दुखते दिल के कारण निचला होंठ कसकर दांतों से दबा लिया! गांव में सोता पड़ा था. कुत्ते भी एक-दूसरे के आसपास पड़े बड़े आराम से सुस्ता रहे थे. पेड़ की पत्तियां तक नहीं हिल रही थीं. चांद धीरे-धीरे डूब गया था, तीनों लड़कियां एक-दूसरे की गर्दन में हाथ डाले सो गयीं.

▣

बड़ा उस्ताद क्रोधित-सा खड़ा था. कालीन बुनने वाले लकड़ी के चाकू को गुलअफरोज के मुंह पर दे मारा, "नसीबोजली, कहां हैं तेरे होशोहवास! लाल की जगह पिस्तई रंग लगा रही है? मुफ्त की रोटी तोड़ती है, काम नहीं करती? बेवकूफ है . . . बेवकूफ!" गुल-अफरोज ने पिस्तई रंग की गांठ को तेजी से खोला और उसकी जगह दूसरा रंग लगाया, मगर बड़ा उस्ताद उसी तरह बड़बड़ाता रहा.

एक हरे रंग की लंबी चमचमाती कार कारखाने के समीप आकर रुकी. दो मर्द, एक औरत नीचे उतरे. दोनों मर्द लंबे कद के थे. होंठों में सिगरेटें दबी थीं. औरत सफेद नाजुक कपड़े की चादर ओढ़े हुए थी, लेकिन बदन से चिपकी जीन साफ नजर आ रही थी.

▣

मालिक ने मोटर की आवाज जैसे ही सुनी, कमरे से बाहर निकल आया. उटंगी काली शलवार पहने था, कपड़े मैले-कुचैले. जम्हाई लेता गुद्दी खुजाता हुआ आया और बड़ी मक्कारी से बोला, "वाह. . . .वाह, स्वागतम्. हमारी यह बस्ती कालीनों से भरी थी. अब आपके आने से तो इसका रंग ही बदल गया है. लगता है, पिछली कालीनें आपको पसंद आयीं हैं."

गले के बटन बंद करती हुई औरत बोली, "खैर, इतनी अच्छी भी न थी. भाई ने खरीदा था, दाम भी न बताया."

"खैर, दाम-वाम में तो कोई अधिक फर्क नहीं हुआ है. उसी का जोड़ा बन रहा है. एकदम कंबख्त मखमल की तरह है, नमूना वही 'सादिया' का है. आइए, कारखाने के अंदर तशरीफ लाइए." आगे औरत, पीछे दोनों मर्द अंदर घुसे. उनमें से एक ने दाम पूछा.

"बस, सौ रुपये ज्यादा हो गये हैं."

"मगर यह तो महंगी पड़ी, अगर पहले वाला दाम रखो तो समझो हमने खरीद ली."

"नहीं जनाब, हमें पड़ता नहीं पड़ेगा. रंग महंगे हो गये हैं."

दूसरा आदमी, जो दलाल था, बोला, "आधा कर लेते हैं, पचास रुपया, खुदा बरकत देगा." एक रजामंदी की मुस्कान सभी के होंठों पर खेल गयी. औरत ने लड़कियों से कहा, "लड़कियो, अगर कालीन जल्दी खत्म की तो तुम्हारे लिए मैं फूलदार स्कार्फ लाऊंगी." पहला आदमी नोटों की गड्डी आगे बढ़ाता हुआ बोला, "यह रहा आठ हजार नकद, बाकी कालीन मिलने पर."

"कोई बात नहीं, यह भी न देते तो कोई बात न थी." कहते हुए उसने रुपये मोड़कर नेफे में रख लिये.

गुस्से से भरी मालिक की आवाज गूंज रही थी.

"दो महीना ही तो हुआ है यहां काम करते हुए, उसमें भी दो दिन उंगली के कट जाने से काम न किया, तीन दिन रंग न था. इस तरह से पांच दिन हुए," फिर मालिक ने आवाज थोड़ी और तेज की, "और कंबख्त काम भी तो नहीं जानती है, बार-बार खराब करती है." एक कश और लेकर बोला, "अब बचे पचास दिन, उसकी मजदूरी पचीस तुमान (रुपया), ठीक है न?"

गुलअफरोज के पिता हैदरअली ने सिर नीचा करके आहिस्ता से कहा, "ठीक है मालिक."

"मेरे हिसाब में एक कौड़ी का भी हेर-फेर नहीं पाओगे. लोगों का एक पैसा भी खाना मैं हराम समझता हूं."

"खुदा आपको बड़ी उम्र दे, आपके दस्तरखान से बचे टुकड़े हमें नसीब करे. हम इस नेकी का क्या बदला दे सकते हैं!"

"ठीक है, मगर एक बात याद रखना, जाड़े तक इधर मत आना. जब भी आओगे, गुलअफरोज का मन घर जाने के लिए बेचैन होगा."

"आपका हुक्म सिर आंखों पर."

तभी बदहवास-सी असमत गिरती-पड़ती वहां आ पहुंची.

"मालिक, सिपाही आये हैं, आपको पूछ रहे हैं!"

जमींदार वहीं लेटा-लेटा चिंघाड़ा, "इन कंबख्तों को फिर मौका मिल गया. जब तक इनके आगे हड्डी न डालो, ये टलेंगे नहीं. यह दरोगा खलील तो पूरा बिज्जू है, एक मील से लाश जैसी गंध मारता है." गली पार करके वह कारखाने पहुंचा, "सलाम सरकार! यहां कहां खड़े हैं आप, अंदर तशरीफ लायें. बातचीत करते हैं, तिरयाक पीते हैं."

"फिर कभी! अभी तो वक्त कम है. अभी सम्सोलाबाद भी जाना है. खबर मिली है, लाठियों से वहां आपस में सिर फुटौव्वल हुआ है."

"कहीं पानी और जमीन को लेकर झगड़ा तो नहीं उठा?"

"नहीं, एक शादी थी. दुल्हन किसी और से शादी करना चाहती थी, पहले से कहीं उसका चक्कर चल रहा था."

सवार उस मैदान में पहुंच गये.

"अरे... अरे... अरे बुजदिलो! मत डरो! कहां हैं रोड गार्ड, अरे भाई, यह तो मैं हूं... अलीमर्दान खान... आया हूं, ताकि कालीन बुनने वाले बच्चों को ले जाऊं."

सुनकर छिपे हुए लोग अपनी जगह से सरकने लगे. जब उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि वे सिपाही नहीं हैं तो बाहर निकल मैदान में जमा हो गये.

अलीमर्दान खान छोटे कद, लंबे हाथ और भारी गालों वाला आदमी था. उसकी आंखों में बहती घृणा और छिपी बदले की तीव्र भावना पा जाने के बाद भी लोग उसके हाथ और पैरों का चुंबन ले रहे थे और कह रहे थे, "पधारें मालिक!"

"हम तो आपके पैरों की धूल के समान हैं जमींदार साहब!"

"खुदा हमारे ऊपर मालिक का साया बनाये रखे!"

"ये हड्डियां, ये गोश्त तो कहने भर को हमारा है, मगर संपूर्ण वजूद आप ही के दम से है!"

हर कोई अपनी औलादों को अलीमर्दान खान के सामने लाता और घिघियाता-सा खुशामद करता हाथ-पैर जोड़ रहा था!

अलीमर्दान खान ने गुलअफरोज के अंग-अंग का यूं निरीक्षण किया, जैसे कस्साब बकरे को खरीदने से पहले देखता है. और फिर उसके पिता से बोला, "कितने दिनों के लिए दोगे?"

"जितने दिन के लिए अन्नदाता चाहेंगे!" वह दोनों हाथ जोड़कर बोला.

"बहुत बढ़िया... बहुत अच्छा... शाबाश! रोज का तुमको पांच रेयाल (पैसा) मिलेगा और ऊपर से इसको रोटी-पानी. अब बोलो, इससे ज्यादा क्या चाहिए!"

"कुछ नहीं मालिक... कुछ नहीं! हमारे लिए यही बहुत है."

"इसे ले जाऊंगा 'मुद' आबादी की ओर. वह जगह अच्छी है. यह मत भूलना कि पांच साल के पहले बिना मेरी मर्जी के तुम इसे वापस नहीं बुला सकते. मेरे पास कोई मुफ्त की रोटियां तो हैं नहीं, जो लंगर लुटाऊं. इसके पेट को

ER RAKESH
9716080365

◘ कीमत : हैसियत के मुताबिक

—तो कीमत रखने की आजादी तुमने अपने हाथ में ले ली!

भरने के लिए पांच साल तक पैसा खर्च करूंगा और बाद में नतीजा क्या निकलेगा, यही न कि मुफ्त और सस्ते में इसे गंवा बैठूंगा...."

अलीमर्दान खान ने दोनों हट्टे-कट्टे मर्दों की तरफ इशारा किया और गुर्राया, "कौन है, जो इस लड़की को घोड़े पर बिठायेगा!" वह, जो कद में लंबा और अधिक तगड़ा था, आगे बढ़ा. गुलअफरोज उकाब के पंजों में फंसी एक चिड़िया की तरह उसके हाथों में आयी और उसने उसे एक हाथ से उठाकर ऊंचे घोड़े की पीठ पर बिठा दिया. अलीमर्दान खान उचककर घोड़े पर सवार हुआ और पलक झपकते ही तीनों घोड़े पहाड़ियों के पीछे गायब हो गये.

◘

गुलअफरोज कारखाने के कोने में बैठी घुटनों पर सिर रखे खामोशी से चांदनी के चकत्ते को टुकटुकी लगाये देख रही थी, थकी झुंझलायी-सी. नींद का कोसों पता न था. मां की गर्म गोद की याद उसे दुख पहुंचा रही थी. उसी के सामने एक-दूसरे से लिपटी मासूमा व असमत बेखबर खर्राटे भर रही थीं.

पौ फटने ही वाली थी कि कारखाने का दरवाजा चर्र की आवाज के साथ खुला और एक लंबी-चौड़ी छाया दरवाजे पर दिखी. यह बड़ा 'उस्ताद' था. भयभीत असमत और मासूमा डर-कर सोते से उठ गयीं. उन पर बड़े उस्ताद की फटकार पड़ी, "मुर्दा-लाशों उठो, जाकर पानी भरो! झाड़ू का काम गुलअफरोज का है. पहले मालिक का घर बुहारना है, बाद में कारखाना."

असमत और मासूमा लाल फूली आंखें लिये घड़े कंधे पर रख चश्मे की ओर चलीं और गुलअफरोज दुखी निढाल-सी झाड़ू थामे गली के उस पार मालिक के घर की ओर.

जब मासूमा व असमत अपना काम समाप्त करके लौटीं तो गुलअफरोज भी काम से निबटकर लौट चुकी थी. उसका दिल एक चाय के लिए तड़प रहा था और दिमाग 'बीजूम' देहात में घूम रहा था. जैसे ही बड़ा उस्ताद मालिक के घर से बाहर निकला, उदास मुरझाये चेहरे से तीनों लड़कियां कालीन बुनने का चाकू हाथ में लिये उसके सामने बैठ गयीं. बड़ा उस्ताद हाथ में कालीन का नमूना पकड़े उन्हें बुनना सिखाने लगा.

"क्या मौत आ रही है या हाथों में लकवा मार गया है... तेजी से हाथ चलाओ... इधर खींचो... उधर."

लड़कियां लंबी कांपती उंगलियों से विभिन्न रंगों के ऊन में गांठें लगातीं और फिर उसके सिरे को कूटतीं. बड़ा उस्ताद ध्यान से निरीक्षण करता रहा.

दोपहर को वह तीनों छोटी लड़कियां एक बड़े प्याले के चारों तरफ बैठी भूख से व्याकुल हो बड़े चाव से भोजन करने में मशगूल थीं. जब वह गाढ़ा सब्जी-वाला सूप खत्म हुआ तो मासूमा ने

गली के नुक्कड़ को देखते हुए धीरे-से कहा, "कितना कम था!"

शाम को सूरज डूबने के समय जब उन्होंने हाथों के चाकू रख दिये, तभी उस्ताद की आवाज आयी, "उठो, जल्दी से पानी भरो. फिर बाड़े में भी जाना है!"

गुलअफरोज ने भेड़ों का झुंड जमा कर लिया और उनकी नांद में ताजी घास डालने लगी. असमत और मासूमा बड़बड़ाती हुई बाड़े की बाल्टियों को पानी से भरने लगीं.

एकाएक रात में गुलअफरोज फूट-फूटकर रोने लगी. रोने की आवाज से मासूमा और असमत जाग उठीं और वे दोनों भी रोने लगीं. जब गुलअफरोज जीभर कर रो ली तो असमत से बोली, "ऐसा नहीं हो सकता है कि किसी तरह यहां से निकल चलें?"

"ऐसा नहीं हो सकता है अफरोज, पिछले साल मासूमा भागी थी. कुछ दिनों बाद मालिक उसे ढूंढ़ने पहुंचा, बाप ने इनकार कर दिया, इस पर मालिक ने मासूमा के पिता को गोली मार दी!" असमत खामोश हो गयी और मासूमा ने दुखते दिल के कारण निचला होंठ कसकर दांतों से दबा लिया! गांव में सोता पड़ा था. कुत्ते भी एक-दूसरे के आसपास पड़े बड़े आराम से सुस्ता रहे थे. पेड़ की पत्तियां तक नहीं हिल रही थीं. चांद धीरे-धीरे डूब गया था, तीनों लड़कियां एक-दूसरे की गर्दन में हाथ डाले सो गयीं.

▣

बड़ा उस्ताद क्रोधित-सा खड़ा था. कालीन बुनने वाले लकड़ी के चाकू को गुलअफरोज के मुंह पर दे मारा, "नसीबोजली, कहां हैं तेरे होशोहवास! लाल की जगह पिस्तई रंग लगा रही है? मुफ्त की रोटी तोड़ती है, काम नहीं करती? बेवकूफ है . . . बेवकूफ!" गुल-अफरोज ने पिस्तई रंग की गांठ को तेजी से खोला और उसकी जगह दूसरा रंग लगाया, मगर बड़ा उस्ताद उसी तरह बड़बड़ाता रहा.

एक हरे रंग की लंबी चमचमाती कार कारखाने के समीप आकर रुकी. दो मर्द, एक औरत नीचे उतरे. दोनों मर्द लंबे कद के थे. होंठों में सिगरेटें दबी थीं. औरत सफेद नाजुक कपड़े की चादर ओढ़े हुए थी, लेकिन बदन से चिपकी जींस साफ नजर आ रही थी.

▣

मालिक ने मोटर की आवाज जैसे ही सुनी, कमरे से बाहर निकल आया. उटंगी काली शलवार पहने था, कपड़े मैले-कुचैले. जम्हाई लेता गुद्दी खुजाता हुआ आया और बड़ी मक्कारी से बोला, "वाह. . . .वाह, स्वागतम्. हमारी यह बस्ती कालीनों से भरी थी. अब आपके आने से तो इसका रंग ही बदल गया है. लगता है, पिछली कालीनें आपको पसंद आयी हैं."

गले के बटन बंद करती हुई औरत बोली, "खैर, इतनी अच्छी भी न थी. भाई ने खरीदा था, दाम भी न बताया."

"खैर, दाम-वाम में तो कोई अधिक फर्क नहीं हुआ है. उसी का जोड़ा बन रहा है. एकदम कंबख्त मखमल की तरह है, नमूना वही 'सादिया' का है. आइए, कारखाने के अंदर तशरीफ लाइए." आगे औरत, पीछे दोनों मर्द अंदर घुसे. उनमें से एक ने दाम पूछा.

"बस, सौ रुपये ज्यादा हो गये हैं."

"मगर यह तो महंगी पड़ी, अगर पहले वाला दाम रखो तो समझो हमने खरीद ली."

"नहीं जनाब, हमें पड़ता नहीं पड़ेगा. रंग महंगे हो गये हैं."

दूसरा आदमी, जो दलाल था, बोला, "आधा कर लेते हैं, पचास रुपया, खुदा बरकत देगा." एक रजामंदी की मुस्कान सभी के होंठों पर खेल गयी. औरत ने लड़कियों से कहा, "लड़कियो, अगर कालीन जल्दी खत्म की तो तुम्हारे लिए मैं फूलदार स्कार्फ लाऊंगी." पहला आदमी नोटों की गड्डी आगे बढ़ाता हुआ बोला, "यह रहा आठ हजार नकद, बाकी कालीन मिलने पर."

"कोई बात नहीं, यह भी न देते तो कोई बात न थी." कहते हुए उसने रुपये मोड़कर नेफे में रख लिये.

गुस्से से भरी मालिक की आवाज गूंज रही थी.

"दो महीना ही तो हुआ है यहां काम करते हुए, उसमें भी दो दिन उंगली के कट जाने से काम न किया, तीन दिन रंग न था. इस तरह से पांच दिन हुए," फिर मालिक ने आवाज थोड़ी और तेज की, "और कंबख्त काम भी तो नहीं जानती है, बार-बार खराब करती है." एक कश और लेकर बोला, "अब बचे पचास दिन, उसकी मजदूरी पचीस तुमान (रुपया), ठीक है न?"

गुलअफरोज के पिता हैदरअली ने सिर नीचा करके आहिस्ता से कहा, "ठीक है मालिक."

"मेरे हिसाब में एक कौड़ी का भी हेर-फेर नहीं पाओगे. लोगों का एक पैसा भी खाना मैं हराम समझता हूं."

"खुदा आपको बड़ी उम्र दे, आपके दस्तरखान से बचे टुकड़े हमें नसीब करे. हम इस नेकी का क्या बदला दे सकते हैं!"

"ठीक है, मगर एक बात याद रखना, जाड़े तक इधर मत आना. जब भी आओगे, गुलअफरोज का मन घर जाने के लिए बेचैन होगा."

"आपका हुक्म सिर आंखों पर."

तभी बदहवास-सी असमत गिरती-पड़ती वहां आ पहुंची.

"मालिक, सिपाही आये हैं, आपको पूछ रहे हैं!"

जमींदार वहीं लेटा-लेटा चिंघाड़ा, "इन कंबख्तों को फिर मौका मिल गया. जब तक इनके आगे हड्डी न डालो, ये टलेंगे नहीं. यह दरोगा खलील तो पूरा बिज्जू है, एक मील से लाश जैसी गंध मारता है." गली पार करके वह कारखाने पहुंचा, "सलाम सरकार! यहां कहां खड़े हैं आप, अंदर तशरीफ लायें. बातचीत करते हैं, तिरयाक पीते हैं."

"फिर कभी! अभी तो वक्त कम है. अभी सम्सोलावाद भी जाना है. खबर मिली है, लाठियों से वहां आपस में सिर फुटौव्वल हुआ है."

"कहीं पानी और जमीन को लेकर झगड़ा तो नहीं उठा?"

"नहीं, एक शादी थी. दुल्हन किसी और से शादी करना चाहती थी, पहले से कहीं उसका चक्कर चल रहा था."

▣ **इब्राहिम मोतामद नेजाद**
जन्म : 1957; बोरजंद
'फरियादी दर कबीर' अर्थात रेगिस्तान में चीख—कहानी संग्रह के नाम के अनुकूल इनका लेखन ईरानी जनता के विद्रोह को मुखरित करता है. संप्रति : रेगिस्तान की इलाकाई जुबानों का शब्दकोश तैयार कर रहे हैं.

खलील दरोगा ने मुंह में जमा हो गये थूक की एक पिचकारी जमीन पर मारी और गंभीर होकर बोला, "यह जो तुम्हारे यहां काम करने वाले हैं, बारह साल से कम के हैं. कानून तो जानते हो तुम! उसमें यह जुर्म है और इसे रोकना हमारा काम है."

जमींदार ने सुनी-अनसुनी करते हुए कहा, "बड़ा अच्छा हुआ, जो आप इधर से गुजरे. वह भी जाड़े की शुरुआत और भेड़ों को हलाल करने का मौसम, आप जानते ही हैं, बिना आपके हमारे गले से एक कौर भी उतरे! कल ही अपनी पत्नी से कह रहा था कि एक पूरी भेड़ आपको भेंट कर दूं. अब आप जो कहें."

दरोगा नर्म पड़ गया और बोला, "तुम हमेशा मुझे शर्मिंदा करते हो. खैर, भेड़ जिबह कर गोश्त भेज देना!"

खलील दरोगा ने सिपाहियों की तरफ मुंह मोड़ा और कहा, "चलो चलें, वरना वहां एक भी नहीं बचेगा."

▣

रात अंधेरी और खामोश थी. आसमान पर बादल घिरे हुए थे. कारखाने के फर्श पर तीनों लड़कियां कड़कते जाड़े में कांपती ठिठुरती एक फटे लिहाफ में सिकुड़ी पड़ी थीं. अलाव भी राख हो गया था. एकाएक गुलअफरोज बोली, "असमत जाग रही हो?"

"हां! बहुत ठंड है. मुझे नींद नहीं आ रही है, मगर शायद मासूमा सो गयी है." असमत ने मासूमा के शरीर को छुआ—ठंडी पड़ी थी...

सुबह होते ही बड़ा उस्ताद लंबा गर्म चेस्टर पहने, सिर पर गर्म मफलर बांध कमरे में दाखिल हुआ!

"अभी तक पड़ी सो रही हो?" असमत और गुलअफरोज के भरे गले से आवाज नहीं निकल रही थी, "उस्ताद ...! उस्ताद, मासूमा उठ नहीं रही."

"गू खाती है ससुरी, पूरा खानदान इसका नास हो!" बड़े उस्ताद ने लिहाफ के ऊपर से ही एक जोरदार लात मासूमा के जमायी और लिहाफ को उसके ऊपर से खींचा तो एकदम से उसके माथे पर सिलवटें पड़ गयीं और गले में कुछ ऊपर-नीचे होने लगा. हकलाते हुए वह बोला, "ऐं....! ऐं...! यह कैसे हो सकता है!" फिर खुद ही जवाब दिया, "हां, तो इसका काम तमाम हो गया!" फिर तेजी से जमींदार के घर की तरफ भागा और वहां जाकर बोला, "मालिक...! मालिक...! मासूमा ऐंठ गयी है!"

"मर गयी है....? कुत्ते की औलाद, यह कौन-सी जरूरी बात थी कि जो मुझे जगाने आ गया? मैंने सोचा, भेड़िया भेड़ों के बाड़े में घुस आया? घबराने की बात नहीं है. बहा दो. बस, ध्यान रहे, कहीं अटके न!"

मासूमा की लाश को ठिकाने लगाकर जैसे ही वह कारखाने लौटा, आराम से बैठकर उनसे पूछा, "अगर किसी ने पूछा कि मासूमा कहां गयी है तो क्या जवाब दोगी." गुलअफरोज ने कहा, "कहेंगे, सुबह जगाया तो उठी ही नहीं. और आपने उसे ..." सुनते ही उस्ताद ने उसके मुंह पर एक हाथ मारा.

"कंबख्तो! अगर यह बात कहीं कही तो खाल खींच लूंगा. तुम दोनों एक ही बात कहना कि मां के पास गयी है."

"ठीक है उस्ताद." वे बोलीं.

▣

वह ठंडी रोशन रात थी, बहार का प्रारंभ. जंगली फूलों की खुशबू हवा में बसी हुई थी. भेड़ें चर रही थीं और कहीं से बांसुरी की आवाज वातावरण में गूंज रही थी. गुलअफरोज खुशी से बेहाल बैठी थी. तय है कि कल बाप मुद आयेगा और उसे बीजम ले जायेगा. आज पांच साल के बाद पहली बार उसके मुंह पर हंसी खेल रही थी. कड़वे दिन उसे एक-एक करके याद आ रहे थे. पिछले जाड़ों में एक रात असमत भागी, मगर रास्ते में बर्फीले तूफान में फंस गयी, फिर उसकी कोई खबर न मिली.

आगे की यादें मालिक के कुत्ते के भौंकने में गुम हो गयीं. मालिक लंगड़ाता हुआ कारखाने का दरवाजा खोलकर अंदर पहुंचा और दरवाजा बंद कर लिया.

"कहां है मेरी कबूतरी? तुम कल जाना चाह रही हो, मुझे अभागा बनाकर. बेमुरव्वत! कितना खर्च किया है तुझ पर मैंने! यह बदन मेरे ही दया-धर्म से तो बढ़ा है. . ."

गुलअफरोज भय से अधमरी हो गयी. उसकी जबान तालू से चिपक गयी. छोटे उभारोंवाला उसका सीना धौंकनी की तरह चलने लगा. तभी मालिक बेताब-सा उसकी तरफ बढ़ा. भूखे भेड़िये की तरह हू-हा करती उसकी आवाज काम-वासना को बढ़ा रही थी. एकाएक उसने गुलअफरोज को दबोचा. गुलअफरोज ने पूरे जोर से उसका मुंह नोचा और भागी. एकदम से मालिक ने हमला किया और गुलअफरोज का गला अपने भारी हाथों में दबोच लिया. गुलअफरोज बिना किसी आवाज के ढीली पड़ गयी. घुटने मुड़ गये. खून और फेन से सनी लार नाक और मुंह से बह निकली. मालिक ने वासना के दहकते शोले को शांत किया और एक बिजयी पहलवान की तरह किले को जीत शान से बाहर निकल गया. खून की बूंदें कालीन बुनने के ताने-बानों पर फैल रही थीं. धागों पर फैलती बूंदें नुचे लालों की पंखुड़ियों-सी दीख रही थीं. गुलअफरोज ठंडी और शांत कालीन की बुनाई के चौखटे के नीचे पड़ी थी. उसकी खुली बेनूर आंखें अधबुनी कालीन के दहकते लाल फूलों पर जमी हुई थीं. □

कानूने पिजिश्की जहां मुर्दे खिलखिलाते हैं!

इंसान भी कैसा जीव है, जो जरा-सा खून देखकर बेहोश हो जाता है और ढेर-सा खून देखकर उसका आदी! —दास्तान उस केंद्र की जहां पड़ा मुर्दा उठकर फोटो भी खींच लेता है. . .

डाक्टर संघ...यानी कानूने पिजिश्की की इमारत के चारों तरफ मृत्यु का प्रमाणपत्र लेने वालों की भीड़ थी. अंदर दफ्तर में दो लंबी सूचियां टंगी हुई थीं. लोग नाम पढ़-पढ़कर अंदर जा रहे थे, औरतों ने रो-रोकर बुरा हाल कर लिया था.

सुहेली आगा ने फौज में मरे हुए लोगों की फेहरिस्त देने का वायदा किया था. वह वहां पर कफन-दफन के प्रमुख अधिकारी थे. वह खुद हाजिर नहीं थे. मैं प्रतीक्षा में डाक्टर वाले कमरे में बैठ गयी. मालूम हुआ वह बेहिश्ते जहरा में हैं. अठारह सिपाहियों की लाशें आयी हैं, उन्हें दफनाकर अभी आते हैं.

सुहेली आगा के आने के बाद हम लोग अंदर कोल्डरूम में गये. चारों तरफ मुर्दे लेटे हुए थे. लग रहा था अस्पताल है और अब मरीजों के सोने का समय है. उन्होंने कोल्ड-मशीन से खींचकर दो इराकी पायलटों की लाशें दिखायीं, जो बेतरह जली हुई थीं, कुछ बच्चों की लाशें थीं, जो हमले में बम गिरने से मरे थे. कमरे में जले गोश्त की बदबू भरी हुई थी. सफेद कपड़ों पर खून! पूरा माहौल कबूतर खाने की महक और घुटन से भरा हुआ था, जबकि देखने में सब कुछ बिल्कुल साफ-सुथरा था.

इधर-उधर से सारे कर्मचारी जमा हो गये. हर कोई मुझे विदेशी समझकर बहुत कुछ समझाना चाह रहा था. तभी किसी ने कहा, "उधर नयी लाश आयी है, वह भी खानम को दिखा दी जाये."

सुहेली टूटी-फूटी अंग्रेजी बोल लेते थे, इसलिए काफी बन रहे थे. दूसरे लोग फारसी में ही बहुत कुछ बताना चाह रहे थे. सभी लोग लाश के पास पहुंचे. सफेद कपड़े से ढकी लाश तख्त पर पड़ी थी. आम तौर से ये लोग लाश से चादर पैर की तरफ से उठाते हैं. . .जैसे ही चादर हटी, साफ चमकती वर्दी व फुल बूट नजर आये. सहसा जाने क्या हुआ कि सुहेली आगा ने चादर वहीं छोड़ी और अपने हाथ का पंजा कसकर मुर्दे का मुंह दबा दिया ताकि वह सांस न ले सके. लोग ताज्जुब में पड़ गये. तभी मुर्दे ने हाथ पैर पटकना शुरू कर दिया और एक तेज खिलखिलाहट चादर के तले गूंजी. सुहेली ने कहा, "मैं तब तक नहीं छोड़ूंगा, जब तक पांव पकड़कर माफी नहीं मांगोगे कि फिर कभी ऐसी शरारत नहीं करोगे." मुर्दे ने हाथ से इशारा किया. सुहेली ने हाथ हटाया. गहरी सांस खींचते खिलखिलाते 'मुर्दे साहब' उठ बैठे. मुझे हंसी भी आयी और ताज्जुब भी हुआ कि इंसान भी कैसा जीव है जो जरा-सा खून देखकर बेहोश हो जाता है और बहुत-सा खून देखकर उसका आदी! मुर्दे साहब करीब छह फुट लंबे-तड़ंगे फौजी थे. हंसते हुए बोले, "आइए, आपकी तस्वीर इन इराकी पायलटों के साथ खींच दूं...ताकि यहां की यह यात्रा आप कभी न भूलें!"

मैं इनकार न कर सकी. मुझे घबराहट थी कि कहीं आसपास लेटे सारे मुर्दे खिलखिलाते हुए उठ न बैठें और कहें, "खानम! ठहरिए, मैं आपको युद्ध का आंखों देखा हाल सुनाता हूं!"

तस्वीर खिचने के बाद सुहेली ने दोबारा आने की दावत दी और कहा, "जिस दिन ज्यादा शहीद आयेंगे, आप को फोन कर दूंगा, ताकि आप सारी रस्में देख सकें कि हम शहीदों को कैसे फौजी आदर देते हैं." मैंने हामी तो भर ली, मगर तीन दिन बाद उनका फोन आया, तो मैंने कहलवा दिया कि मैं नहीं हूं, क्योंकि मेरे दिल में मुर्दों की खिलखिलाहट सुनने की कोई तमन्ना बाकी नहीं रह गयी थी. □

● इराकी हवाबाज, जिसे अमरीकी समझा गया.

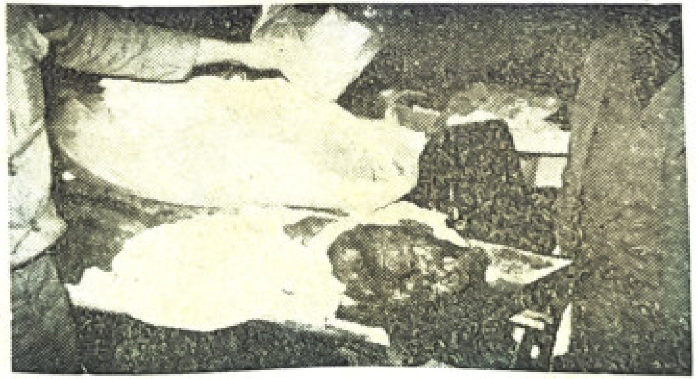

● डिस्फोल पर हुए इराकी हमले में शहीद बच्चा !

ER RAKASH
9716080365

दर्द बे-अंदाज...

• शहरज़ाद

जब बाबा की जिंदगी का कोई भी निशान बाकी न बचा था, तब मां ने अफसाना को जन्म दिया था.

उस दिन भी सदा की तरह स्कूल से घर लौट रहा था और बाबा पाकेटी से 'किहान बच्चेहा' आधे पैसे पर इस शर्त पर किराये पर ली थी कि हर हालत में दूसरे दिन सुबह लौटा दूंगा. बाबा पाकेटी रद्दी वाला था, जो पुराने अखबार व पत्रिकाएं खरीदता था और फिर उससे लिफाफे बना दूकानदारों के हाथ बेच देता था. दरअसल, 'किहान बच्चेहा' की नयी प्रति पूरे पांच रुपये की मिलती थी, जो नसरीन के अलावा कोई खरीद नहीं पाता था. और वह पढ़ना तो दूर रहा किसी को हाथ तक लगाने नहीं देती थी. बाबा पाकेटी मेरे अनुरोध को मान गया था कि मैं रात भर यह बाल पत्रिका अपने पास रख अगली सुबह को उसे लौटा दूं.

सिंदबाद की चित्रकथा में डूबा हुआ मैं उत्सुकता से भरा हुआ था कि देखो आगे क्या होता है! उसी व्याकुलता में डूबा आसपास की हर चीज से बिल्कुल बेखबर हो गया था. आगे जाकर कासिम आगा से टकरा गया. कासिम मोहल्ले का अंधा फकीर था. देह से ऐसी बुरी बास उठती थी कि कोई दस फर्लांग दूर से गुजरना पसंद न करे और मैं पूरा का पूरा इस गंदगी की पोट से टकरा गया था. टूटी लाठी मेरी कमर पर मारकर बोला, "गलीज कुत्ते के बाप! मदद करना तो अलग रहा, ऊपर से अंधे को धक्के मार रहा है, कुत्ते के पिल्ले, रंडी की औलाद! अगर आंखें होतीं तो अभी मजा चखा देता!"

"कासिम आगा, मेरी गलती है! मैं नर्म पड़कर चिरौरी करते हुए बोला, "कासिम आगा, मैं भी क्या करूं, घर पहुंचते-पहुंचते देर हो जायेगी. फिर होम वर्क करते रात हो जायेगी. यह पत्रिका कब खत्म करूंगा, सुबह-सवेरे लौटानी भी है. इसी वायदे पर बाबा पाकेटी ने मुझे आधे पैसे पर लाने दी है."

"चुप रह! कैसी लंबी जबान पायी है! कम बोल कम! अगर सच बोल रहा है तो निकाल फटाफट कुछ अपनी जेब से और डाल मेरी झोली में."

▣

अभी आखिरी पन्ना पढ़ना बाकी रह गया था कि मैं घर की गली के नुक्कड़ पर पहुंच गया. बाकर की बीवी, मेरी सहपाठी सुरैया, अपने घर की खिड़की से झांक कर बोली, "तुम्हारे लिए टॉफी मैंने दरवाजे की आड़ में रख दी है, उठा लो और 'किहान बच्चेहा' ऊपर फेंक दो. मैं एक घंटे में पढ़कर वापस कर दूंगी. जल्दी करो वरना किसी ने देख लिया तो बाकर से कह देगा." सुरैया परसाल तक मेरे साथ पढ़ती थी. अब बाकर जिगर बेचने वाले के साथ उसका निकाह हो गया है. पहले टॉफी उठाकर जेब में रखी, फिर पत्रिका को मोड़कर खिड़की की तरफ उछाल दिया, "शाम तक लौटा देना. . .अभी नाहीद को भी देनी है."

पत्रिका लपक कर सुरैया बोली, "अब तुम जल्दी से घर भागो, युसुफ सुबह से खून उगल रहा है. तुम्हारी मां प्रसव पीड़ा से बेचैन है. तुम तो जानते हो, बाकर ने मेरे घर से निकलने पर पाबंदी लगा दी है वरना मैं जरूर जाती तुम्हारे घर . . .और ऐसे मौके पर मदद करती. . .मगर मजबूर हूं!"

युसुफ! युसुफ! खून. . .?

घर की गली, काली छींटदार चादरों से भरी हुई थी. मगर यह भीड़ तो मामूलन सुबह के वक्त होती थी, जब अहमद आगा ताजा सब्जी लेकर आता था. शाम को तो एकाध आंख ही नजर आती थी, मगर आज इस समय . . .? मेरा दिल युसुफ के लिए तड़प रहा था! बेचैनी से तेज-तेज कदम बढ़ाता घर के दरवाजे के पास पहुंचा. मोहल्ले की सारी औरतें मेरे घर पर जमा थीं. . .और सभी किसी न किसी काम में व्यस्त थीं. शमीम दादी सिर पर कुरान उठाये कभी आंगन में आती और कभी उसी तरह झुकी कमर के साथ कमरे में लौट जाती. वह हौले-हौले बुद-बुदा रही थी, "शैतान पर लानत! एक को देखो मर रहा है, दूसरे को देखो पैदा होना चाहता है. . .काहे के वास्ते भला? इसमें और उसमें फर्क क्या है? यह भी कोई बात हुई! यह रहे या वह रहे, कुत्ते का पिल्ला तो आखिर पिल्ला ही कह-लायेगा! उनमें फर्क ही क्या है? फिर वह जोर से चीखी, "सलवात भेजो! लानत है तुम सब पर, खामोश बैठी हो, सलवात भेजो, गंदे पैरों के साथ कमरे में मत जाना, पहले 'ला-इल्लाहा-इल्ललाह' कहना."

▣

मां की दर्द में डूबी चीखें, उस दिन की फरियादों से मिलती लग रही थीं जब बाबा की दूकान में घुसकर वे लोग उनकी सारी किताबें और कागज बाहर फेंक रहे थे. गली जले हुए कागजों से भरी हुई थी. मैं चकराया परेशान-सा खड़ा था. दिल चाह रहा था कि कैसे भी युसुफ के पास तुरंत पहुंचूं.

आखिरकार औरतों की भीड़ को चीरता, अपने लिए जगह बनाता किसी तरह मैं कमरे तक पहुंच ही गया.

मां कमरे के ठीक बीचों-बीच लेटी हुई थीं. उनके सिरहाने दादी बैठी कुरान पढ़ रही थीं. फातमा और संबर खानम पुरानी चादर से लंबी-लंबी पट्टियां फाड़ रही थीं और सामने बैठी रबाब को पकड़ा रही थीं, जो उन्हें तहाकर एक के ऊपर एक रख रही थीं. असगर की मां कैंची को मोम-बत्ती की लौ पर गर्म कर रही थीं. मेरी निगाहें युसुफ को ढूंढ रही थीं कि तभी उफाक की अम्मा की गोद में बेहाल युसुफ को देखा. वह रोती हुई, दुआ पढ़-पढ़कर पूरे कमरे में फूंकती फिर रही थीं. तभी खाला रिजवाना की निगाह मुझ पर पड़ी और वह क्रोध से बिलबिला उठी. हाथ में पकड़ी तांबे की थाली को मेरे सिर पर पूरे जोर से मार बैठी, "हर्राफा! छदमी! यहां खड़ा टुकुर-टुकुर किसे ताक रहा है? जा, अपने उसी कुत्ते के बाप की दूकान पर, उससे चलने को कह, कहना कि किसी गधे को भेज दे जिसके पास मोटर कार हो ताकि तेरी मां को डाक्टर के पास दिखा लाये, या हकीम को यहीं भेज दे!"

बरामदा मेरी आंखों के सामने घूमने लगा. बिना ध्यान दिये मेरी जबान मेरे दांतों के बीच आ गयी . दर्द के मारे जान निकल गयी. आंखें आंसुओं से भर उठीं. जाने क्यों एकाएक अपने आसपास के सारे लोग मुझे परियों और जिन्नात-से लगने लगे, काले-सफेद कपड़ों में लंबे-छोटे हाथों के साथ युसुफ को 'किहान बच्चेहा' की तरह किराये पर लिये, कोई इस गोद से उस गोद में दे रहा था, कोई उसकी कमीज हटा कर उसका पेट देख रहा था, कोई कह रहा था, "अरे, इसे तो बड़ी माता निकली थी. मेंहदी लगाने से उसकी सारी ठंडक सीने पर जमा हो गयी है. अब सीने पर बलगम जमा हो गया है. . .सांस घुट रही है!"

मां की चीखें अब पहले से ज्यादा बुलंद हो गयी थीं. उन्होंने अपने बाल नोंच-नोंचकर मुंह पर बिखरा लिये थे.

"या हजरत मासूमा! या जैनबे कुबरा! या खदीजा! या हिंदे जिगर खूर, आओ मेरी मदद को!" सलवात की आवाजों से भरे घर में शमीम दादी ने दालान से कमरे

जीना-मरना तो बेशक लगा ही रहता है. मगर किसी की मौत कब और कैसे हुई यह जानना भी बहुत जरूरी होता है. आप पूछ सकते हैं कि क्यों जरूरी होता है?. . . लीजिए पढ़िए—ईरानी क्रांति के दौर में एक किशोर को हालात और मौत से साक्षात्कार करवाती उस प्रमुख लेखक की कहानी जिसने बगावत का परचम फहराने में अपना सब कुछ होम कर दिया—

में झांकते हुए डांटा, "लानत है तुम पर! हिंदा को मत पुकारो, अब भी नहीं जानती हो कि कौन किसके साथ है. अरे, जैनबे कुबरा कहो! फातमा जहरा कहो, ला इल्ललाह इल्लल्लाह कहो ताकि यह तुल्मेनाबिसमिल्लाह बाहर निकले और हमारी जान छूटे!"

खून जो जबान से निकला था, मैंने वर्दी के कोने से पोंछा और तेजी से अफाक की अम्मा के पास पहुंचा. जबान हिल नहीं पा रही थी, फिर भी किसी तरह बोला, "दादी मां! दादी मां! युसुफ को मुझे दे दीजिए, इसे बाहर ले जाता हूं. ऊपर छत पर खुली हवा है और इतनी भीड़ भी नहीं है."

कमजोर आंखों को युसुफ ने खोला और मेरी तरफ लपका!

"दादी मां! यह बच्चा कमजोरी से दम तोड़ रहा है!"

युसुफ लड़खड़ाती जबान से कुछ बोला. उसे साफ बोलना अभी नहीं आता था, "चाहेता. . .आ, टा. . .बाबा. . . चाहेता. . ."

शमीम दादी की आवाज ने सबकी आवाज को दबा दिया, "अंधेर है, क्या बुरा वक्त लगा है. कयामत है! कोई समझाये तो जरा, यहां हो क्या रहा है? कोई क्यों नहीं आ रहा है. इस तुल्मेनाबिस्मिल्लाह को उठाने. . .माना कि अगर यह बियाबान में होता तो पत्थर पर जन्म देती. . . अगर पहाड़ पर होती तो सांपों और गिरगिटों को मदद के लिए पुकारती, वे इसकी अवाज सुनते. . .कयामत है कयामत!"

▣

औरतों के रोने और सलवात की आवाज ऊंची हो गयी थी. इन सबसे ऊपर उभरती मां की चीखें थीं. खाला रिजवान की निगाह मुझ पर पड़ी और मैं डर कर चूहा बन गया. खुद को किसी की ओट में छुपाना ही चाह रहा था कि चिंघाड़ सुनायी पड़ी, "तुम अभी तक यहीं खड़े हो, कहा नहीं था कि अपने बाप की दूकान पर जाओ! नहीं कहा था गधे तुमसे?"

रुकईया, मेरी छोटी बहन भीड़ में न जाने कैसे अफाक की अम्मा की टांगों के बीच से मेरे पास पहुंची. जमीन पर बैठे-बैठे मेरी उंगलियां खींचकर बोली, "शादी! शादी 'किहाने बच्चेहा' ले आये हो न?" उसकी भीगी आंखें मेरी छलकती आंखों में गड़ गयी थीं. युसुफ ने अपना हाथ खोला और मेरे बाल अपनी मुट्ठी में जकड़ लिये. उसकी जबान अभी साफ न थी, वह उसी में बोला, "चाहेता. . . आबामा टा. . .चाहेता. . ." उसके मुंह का भीतरी भाग और नन्हीं जबान लाल अंगारा हो रहे थे.

दादी मां ने मेरी ठुड्डी पर जोर से हाथ मारा, "यह बच्चा आखिर कह क्या रहा है? तुम तो उसकी जबान समझते हो. वह जो मांग रहा है, देते क्यों नहीं हो नासपीटे!"

दोबारा जवान घायल हो गयी, "दादी अम्मा! दादी अम्मा! इस बच्चे को मुझे दे दीजिए! यह घुटन से मरा जा रहा है, आप समझ नहीं रही हैं क्या? मुझे बिलावजह क्यों मार रही हैं? यहां . . . यह कोई जगह है जहां इसे लेकर खड़ी हूं?" कहकर बलपूर्वक मैंने युसुफ को उनकी गोद से छीना और दसियों आवाजों और औरतों के बीच से होता हुआ बरामदे में आया. भीड़ से निकलकर अभी आगे बढ़ने का रास्ता ढूंढ रहा था कि खाला रिजवाना की निगाह फिर मुझ पर पड़ी और फौरन ही एक जन्नाटेदार चांटा उन्होंने मेरे गाल पर जड़ दिया, "कुत्ते के बाप! बेहया! बेगैरत! तुझसे कितनी बार कहूं कि उस अपने बाप को सारे तामझाम के साथ यहां ले आ, कुत्ते के पिल्ले! अंगूठे बराबर छोकरा है, कितनी बार आदमी अपनी जबान खाली करे!" उन्होंने हाथ आगे बढ़ाया कि युसुफ को मेरी गोद से छीन लें.

सहसा मेरे सब्र का बांध टूट गया. मेरा पारा सातवें आसमान को छूने लगा. एक धाकड़ लात खाला रिजवाना के पैरों पर खींच मारी और चीखा, "आप खुद है कुत्ते की मां! आप खुद कुत्ते की पिल्ली! ... जो यह भी नहीं जानती कि मेरे बाबा की दूकान को उन जालिमों ने लूटकर सील कर दिया है. क्या आप नहीं जानतीं कि वे बाबा को गिरफ्तार करके ले गये हैं! आखिर बाबा हैं कहां जो जाकर उन्हें ले आऊं?...कहां जाऊं उनके पीछे?"

खाला रिजवाना दर्द के मारे अपने अंदर ही बल खाने लगीं, चेहरा काले जामुन जैसा नीला पड़ गया, आंखें छत पर टिक गयीं, मुंह खुला का खुला ही रह गया. आवाज हलक में फंस कर रह गयी.

अब मां की आवाजें कानों के पर्दे फाड़ने लगी थीं. तेजी से सीढ़ियां चढ़ता हुआ ऊपर छत पर पहुंचा. आंसू मेरी आंखों से बारिश की तरह झर रहे थे, मेरे पीछे आती रुकईया भी रो रही थी.

युसुफ ने अपनी कमजोर गर्दन मेरे कंधे पर टिका कर गर्म दहकते गालों को मेरे चेहरे से सटा लिया.

▣

सूरज डूबने वाला था. अलगनी से बाबा की लुंगी उतार वहीं छत पर डाल, उस पर मैं और रुकईया बैठ गये. कोई नर्म चीज बहती हुई नसीमे सहर की तरह सरसराती भीगे कपड़ों के बीच से आकर मेरे चेहरे से टकराई. रुकईया बोली, "शादी, सिंदबाद की बाकी यात्रा तुम मेरे लिए पढ़ दो".

मैं युसुफ के चेहरे पर छलक आये पसीने और मुंह से बहे खून को अभी पोंछ ही रहा था कि मां की चीखें एकदम से शांत हो गयीं और अफसाना के रोने का कर्कश स्वर उभरा! औरतों का शोर, सलवातों की आवाज और वह भी शमीम दादी के मुंह से निकली हुई जो सात मोहल्लों तक गूंजती थी, बुलंद हुई. रुकईया बोली, "यह रहा आधा पैसा, मेरा हिस्सा, आज रात को जरूर पढ़ोगे न शादी?"

युसुफ ने अपना छोटा-सा हाथ वर्दी की सिलाई उधड़े छेद से अंदर डाला. उसका हलवे की तरह नर्म हाथ जिस पर चांद जैसे पीले-पीले नाखून रुई के गोले की तरह मुलायम थे, मेरे सीने से टकराकर कुछ ढूंढ़ता-सा बोला!, "टॉ. . . टा. . . .चाहेता. . . .आ बाबा!" इतना कहते ही उसके मुंह से जमा हुआ खून का थक्का बाहर निकला और बाबा की सफेद लुंगी पर गिरकर फैल गया... और उसका सिर मेरे कंधे पर लुढ़क गया.

एकदम से टॉफी का ध्यान आया, जाने मैंने उस शोर-शराबे और धक्कामुक्की में उसे कहां गिरा दिया था.

बाबा और युसुफ की कब्रों का कोई अंदाजा नहीं था, तो भी मैं उन दोनों को बेअंदाजा चाहता था! □

गुनाह

▣ फरोग फरुख जाद

गुनाह किया, एक सुखद गुनाह,
कंपित मदहोश तन के समीप.
या खुदा! नहीं जानती क्या कर बैठी,
उस तनहा अंधेरे खामोश कोने में.

उस तनहा अंधेरे खामोश कोने में,
भेदभरी उन आंखों को देख,
दिल सीने में व्याकुल-सा तड़पा,
उसकी इच्छाओं को पढ़.

उस तनहा अंधेरे खामोश कोने में,
परेशान उसके समीप बैठी मैं,
उसकी हवस की ज्वाला से
तन-मन को जलाये-सी.

उसके कानों में गुनगुनायी,
तुम्हें चाहती हूं जानेमन मैं,
तुम्हें बाहों में चाहती हूं जानेबख्श मैं,
तुम्हें! ओ मेरे दीवाने आशिक!

हवस उसकी आंखों में शोले-सी लपकी,
लाल शराब प्यालों में नाची.
मेरा तन शैया के बीच,
उसके सीने पर मस्त-सा लहराया.

गुनाह किया, सुखद गुनाह,
गर्म सुलगते बाहुपाशों के बीच,
गुनाह किया उन बाहुपाशों के बीच, जो
कि धधकते, उग्र और फौलादी थीं.

ये जो बड़े-बड़े हैं, क्या सोचते खड़े हैं?

कभी लोग यह मानते थे कि शाह के साथ साथ ईरान से धन, सुख और ऐश्वर्य भी चले जायेंगे, मगर शाह का तख्ता पलटा और वे लोग आय जिनकी बदौलत ईरान आज कायम है. ये क्रांतिकारी सत्ताधारी आज अपनी जनता के बारे में क्या सोचते हैं और क्या करना चाहते हैं—कुछ बड़े लोगों से खुली बातचीत

हमने इस्लाम के लिए इन्कलाब किया है !

ईरान की वर्तमान स्थिति में प्रधानमंत्री श्री रजई का विशेष स्थान है. जहां उनके व्यक्तित्व में एक अध्यापक का ठहराव, धैर्य और ईमानदारी नजर आती है, वहीं उनके धार्मिक कट्टरपन का भी एहसास होता है.

श्री रजई पहले एक अध्यापक थे. कई बार जेल जा चुके हैं. इनके पढ़ाये हुए विद्यार्थियों से मिली तो सबका यही कहना है कि नंबर बड़ी कंजूसी से देते थे, मगर हिसाब और भूगोल पढ़ाने में माहिर थे. बुर्जुवा लोग श्री रजई को देखते ही नाक-भौं सिकोड़ने लगते थे, क्योंकि वह न तो टाई लगाते हैं और न ही सिगार होंठों के बीच दबा छड़ी घुमाकर किसी विदेशी स्टाइल में हवाई बातें करते हैं, जिसकी आदत शाह के प्रधानमंत्री हुवैदा को थी. मार्क्सवादी समुदाय तो इनसे बेहद दुखी था, क्योंकि हर मंत्रालय, हर कालेज, हर दफ्तर और हर संस्था से उनकी छटनी इस बात पर की जा रही थी कि उनके विचार इस्लामी नहीं.

उनके कार्यालय में गजब का अनुशासन देखकर ताज्जुब हुआ, क्योंकि जितनी अफवाहें सुन रखी थीं, उनसे मन पर बहुत अच्छा प्रभाव न था. उनसे मैंने पहला सवाल पूछा: **मैं आपको एक अच्छे अध्यापक की दृष्टि से देखती हूं. आपका व्यक्तित्व मुझे भारत के दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की याद दिलाता है, जिन्होंने हिंद-पाक युद्धविराम में अपना महत्वपूर्ण रोल अदा किया था. इराक-ईरान युद्धविराम के लिए आप क्या कर रहे हैं?**

● मोहम्मदअली रजई

युद्धविराम का मेकेनिकल अर्थ होगा कि गोलियां चलना कब बंद हो, मगर यह हमारे लिए महत्व की बात नहीं है. हमारे लिए महत्वपूर्ण यह है कि उनका हमारे ऊपर बलपूर्वक बोला गया धावा कब हटता है. इस्लामिक गणतंत्र हमें युद्ध करने के लिए नहीं उकसाता, मगर अपने प्रति किये गये अत्याचार से अपने को बचाने के लिए मुकाबले की बात कहता है. युद्ध तभी बंद होगा, जब सच्चाई खुलकर सामने आयेगी. हम पहले भी कह चुके हैं और अब भी उसे दोहरा रहे हैं कि हमें इराक से कुछ नहीं चाहिए. न धन, न दौलत, न उसकी जमीन पर कब्जा. आज दोनों देशों में जो लोग शहीद हो रहे हैं, उसका जिम्मेदार सद्दाम है. हमारा कोई भी झगड़ा वहां की जनता से नहीं है. हम दोनों ही मुसलमान धर्म भाई हैं. सद्दाम को यदि 1975 के अल्जियर्स समझौते पर आपत्ति थी तो वह इसको वार्तालाप से किसी भी राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय संस्था के द्वारा हल कर सकता था, मगर उसने अनुचित रूप से हमारे ऊपर हमला किया. इस्लाम में जेहाद का अर्थ है राह खोलना, न कि अपनी सीमा रेखा को बढ़ाना. हम सच्चाई पर हैं. एक उद्देश्य लेकर लड़ रहे हैं. हमने हमला नहीं किया है. इतिहास सद्दाम की इस जालिमाना हरकत की निंदा करेगा. **यह इन्कलाब जनता ने किया था, रोटी, कपड़े और मकान के लिए, मगर अब वही जनता इन्कलाब से दुखी है. ऐसा क्यों है?**

यह नारा मार्क्सवादियों का है. हमने रोटी, कपड़े और मकान के लिए यह इन्कलाब नहीं किया है, बल्कि इस्लाम के लिए किया है. हमारा विश्वास, इस्लाम, खुदा और खुमैनी में है. जब

इस्लामी गणराज्य जम जायेगा तो यह सारी परेशानियां भी हल हो जायेंगी. लोग इस्लामी राज्य चाहते हैं.

लेकिन आपको समाजवादी देश सहायता क्यों नहीं दे रहे हैं?

दुख की बात है कि समाजवादी देश अपनी विचारधारा और व्यवहार की कमजोरी दिखा रहे हैं. हम लोग मुसलमान हैं और अंतर्राष्ट्रीय इस्लाम पर विश्वास रखते हैं, लेकिन यह लोग अपने निजी लाभ पर नजर रखते हैं. अगर एक समाजवादी देश हमारा साथ देता है तो उसे अपने निजी लाभों को त्यागकर इंपीरियलिज्म के खिलाफ खड़ा होना पड़ेगा. जब अमरीका ने व्यापार बंद करने की धमकी दी तो सारे समाजवादी देश, जो अमरीका से किसी न किसी प्रकार से संबंध बनाये थे, खामोश रहे, और यही उनकी सबसे बड़ी कमजोरी है.

क्या आप सोचते हैं कि मुस्लिम देश आपकी मदद करेंगे? क्या उनकी अपनी कोई राजनैतिक विचारधारा नहीं है?

यहां पर आपके प्रश्न को मैं दो हिस्सों में बाटूंगा. पहला मुस्लिम जनता और दूसरा सरकार. सरकारें हमारी मदद नहीं करेंगी. मुस्लिम जनता हमारे साथ है. उसके पैगाम युद्ध में जाने के लिए हमें बराबर मिल रहे हैं.

कुर्दिस्तान की समस्या का क्या हल है आपकी दृष्टि में? भारतवर्ष एक संपूर्ण राष्ट्र है. वहां भी प्रादेशिक स्वतंत्रता है. फिर आप कुर्दिस्तान. . .

केवल कुर्द ही क्यों? हमारे ईरान में विभिन्न जबानें हैं. तुर्की हैं और अन्य नस्लें भी. कुर्दों की समस्या के पीछे विदेशी हाथ है. शाह से उनका जो टकराव था, वह हमसे नहीं है. हम तो अंतर्राष्ट्रीय इस्लाम पर विश्वास रखते हैं. हमारे लिए सीरिया, लीबिया, सऊदी अरब व अन्य अफ्रीकी देश सब एक हैं. हम कुर्दों के खिलाफ नहीं हैं. हम इस्लाम के अनुयाइयों का एक देश हैं. वहां मार्क्सवादी हैं, जो हमारे खिलाफ लड़ रहे हैं.

मार्क्सवादियों को, जिनकी विचारधारा भी आपके उद्देश्य से मिलती-जुलती है अर्थात् वर्गों की असामानता को तोड़ना, देश की उन्नति तथा अन्य चीजें, फिर उन्हें नौकरियों से निकाला क्यों जा रहा है?

कुछ मंत्रालयों में तो हमें इस्लामी विचारधारा के लोग चाहिए जैसे शिक्षा, संस्कृति और कला, आर्मी और डिफेंस. जज मुसलमान होगा तो फैसला इस्लामी कानून के मुताबिक देगा. फौजी मुसलमान होंगे तो इस्लाम के लिए लड़ेंगे. मार्क्सवादी तो इस्लाम के लिए नहीं लड़ेंगे? कला और संस्कृति मंत्रालय में कैसे इस्लामी तरानों और इस्लामी गीतों की रचना हो सकती है, जब तक उनका आधार इस्लाम नहीं होगा. यह इस्लामी गणराज्य है. जो लोग सावाक पुलिस में थे, कामचोर हैं, उन्हें भी निकाला जा रहा है.

क्या इस्लाम में विचार की आजादी है?

आजादी है.

यदि है तो फिर आज बावन समाचारपत्र बंद क्यों हैं?

आप मुसलमान हैं, मगर हिंदुस्तानी हैं, इसलिए हमारी समस्याओं को ठीक ढंग से नहीं समझ पायेंगी. हम इस इस्लामी गणतंत्र में बिना किसी आधार के स्वतंत्रता नहीं दे सकते. इस्लाम विभिन्न विचारों को स्वतंत्रता देता है, मगर प्रचार की स्वतंत्रता नहीं है.

आप एक अध्यापक के रूप में शाह की जालिम सरकार से लड़े. उसी के कारण आप कई बार जेल गये. ऐसी हालत में आप विश्वविद्यालय का बंद होना कैसे बर्दाश्त कर रहे हैं?

अध्यापक, आपको शायद पता नहीं, इन्हीं लोगों ने बाहर खड़ी जनता पर गोली चलायी थी. उस समय सरकार नहीं बनी थी. इन्कलाबी समिति ने फैसला किया कि विश्वविद्यालय बंद हो जायें. मैं आपके सामने इस सच्चाई को कबूल करता हूं कि ईरान न पूंजीवादी देश है और न ही इंडस्ट्रियल. हमें हर काम के लिए नये सिरे से सब कुछ आरंभ करना है. विश्वविद्यालय का भी यही हाल था. अच्छे टीचर न थे. पढ़ाई के नाम पर विद्यार्थी कुछ सीख न पाते थे. जहां पैसा अधिक मिलता, वह जाते थे. अब यहां पैसा कम मिलता है तो वह चले गये हैं. ▣

● अली हाशमी रफतसनजानी

औरतों ने इन्कलाब को आगे बढ़ाया था

रफतसनजानी साहब का पहला दीदार टेलीविजन पर हुआ. हर रात वहां संसद की कार्रवाई दिखायी जाती है. रफतसनजानी साहब बड़े आराम से किसी को बैठने, किसी को खड़े होने, किसी को न बोलने, किसी को बोलने की आज्ञा देते रहते हैं. पूरा माहौल संसद के साथ होता है. सबसे मजा तो तब आता, जबकि भूतपूर्व प्रधानमंत्री बजरगान कुछ कहने को खड़े होते और उन पर कटाक्ष किया जाता तो स्वयं बजरगान भी उस हंसी में शामिल रहते. पूरे कार्यक्रम में इतनी जिंदादिली रहती है कि सभी लोग संसद का कार्यक्रम अवश्य देखते हैं, जैसे कोई दिलचस्प ड्रामा चल रहा हो. रफतसनजानी मुजाहिदीन इस्लामी गोरिल्ला समुदाय से हैं. बहुत दिनों तक खुमैनी साहब के साथ रहे हैं. जेल गये, मगर संग्राम में जुटे रहे.

इनके बारे में बड़ी दिलचस्प बातें सुनने को मिलीं. रफतसनजानी बहुत दौलतमंद हैं, पिस्ते के कई बाग हैं. रफतसनजानी मुगल नस्ल के हैं, रफतसनजानी बेवकूफ हैं. कुछ भी नहीं समझते हैं. रफतसनजानी लेखक हैं. पहली बार फिलीस्तीनी इन्कलाब और उसकी कविताओं पर काम किया है. रफतसनजानी लेखक नहीं हैं, इधर उधर से दूसरों के लेख मारकर उन्होंने किताब छपवा दी है. एक दिन उन्होंने हमें बातचीत के लिए समय दिया.

शाहपोर बख्तियार (शाह के जाने के बाद पहला प्रधानमंत्री) के बारे में आपका क्या विचार है? कुर्दिस्तान, खुजिस्तान और ईरान इराक युद्ध में आपका कितना सहयोग है?

शाहपोर बख्तियार एक मुजरिम है, यह बात तय है. दो माह के अपने शासन काल में जब वह शाह द्वारा नियुक्त प्रधानमंत्री था, तो जो कत्ल उसने करवाये, उनका हिसाब नहीं है. फिर वह बड़ी चतुरता से भाग निकला. वह अमरीकी एजेंट था, जिसको यूरोपीय देशों की पूरी सहायता मिली हुई थी. वह ईरानी शाही फौज के द्वारा कूप करना चाहता था. अमरीका ने 'रेडियो आजाद' के नाम पर उसको ऐसा हथियार थमा दिया था, जिसके जरिये वह हर जगह ईरान के खिलाफ आवाज पहुंचा सकता था. बख्तियार के रणक्षेत्र का मैदान इराक में है. अमरीकी पैसा है और कुर्दिस्तान के कबीलों के सरदारों को भी वही सहायता दे रहा है. यह सारा हंगामा उसी की देन है.

ईरान-इराक युद्ध को आप किस रूप में लेते हैं?

एक समझौता शाह के समय में ईरान-इराक के बीच हुआ था. उसका विरोध शाह के समय में न करके अब हम पर हमला बोलकर किया गया है, जब हम इन्कलाब के बाद अपनी विभिन्न समस्याओं को सुलझाने में लगे हुए थे. हम इस अचानक हमले के लिए पहले से तैयार न थे. हम इस युद्ध के खिलाफ हैं. इराक में 60 प्रतिशत शिया हैं, जिन पर ईरान के इन्कलाब का अच्छा प्रभाव पड़ा था. इराक को डर था कि कहीं इमाम का प्रभाव उसकी जनता पर अधिक न पड़ जाये. सो, वह यह तरीका अपना रहा है. हमें अपने भाइयों को मारने में दिलचस्पी नहीं है. जब वे हमारे मिलटरी कैंप पर बम गिराते हैं, तो हम पलटकर जवाब दे देते हैं, क्योंकि ऐसा तो हमें मजबूरन करना पड़ रहा है.

युद्ध के इस तरह जारी रहने पर आप हथियारों और उनके खराब हिस्सों की जरूरत को कैसे हल करेंगे?

हमें ऐसी किसी समस्या का सामना नहीं करना, क्योंकि शाह ने अमरीका से हथियार खरीदने के अतिरिक्त पिछले वर्षों में किया ही क्या है? अगर जरूरत पड़ी भी तो जो देश हमारे हाथ बेचेगा, हम खरीद लेंगे. हमारे पास अपार खनिज धन है, पैसा है. बस, एक उचित कार्यक्रम की जरूरत है.

ईरान में हुए कत्लों के बारे में बड़ी अफवाहें हैं कि सुबह-सुबह खामोशी से लोग कत्ल कर दिये जाते हैं. ऐसा क्यों है? औरतों को पत्थरों से मारना कहां तक उचित है?

इस्लाम के मुताबिक सुबह ही सजा दी जाती है. जो लोग मारे गये हैं, उनका जुर्म सब के लिए रोशन था. मुकदमा चलाकर कत्ल करना क्या था. हम न करते तो जनता अपने हाथ में कानून लेती. रहा औरतों का मसला, उसमें हमारे कुछ जजों ने जल्दबाजी की है. उनको गलतियों का एहसास भी है.

आप इमाम के बड़े करीब हैं. आप क्या सोचते हैं कि इमाम 'जेहाद' का एलान कर दें, ताकि संसार के सारे मुसलमान एक हो जायें और इंपीरियलिज्म के दांत खट्टे कर दें?

मैं ऐसे हालात नहीं देख रहा हूं कि इमाम को इतना उग्र फैसला करके 'जेहाद' का ऐलान करना पड़े. हां, यह हो सकता है कि जेहाद विचारात्मक धरातल पर हो, न कि शारीरिक रूप से. हमें काम करना है. अपनी इस्लामी विचारधारा को संसार तक पहुंचाना है. कोई भी विचारधारा जबर्दस्ती लोगों पर लादी नहीं जा सकती.

इन्कलाब में औरतों का क्या स्थान रहा है? उनके भविष्य के बारे में आप क्या सोचते हैं?

औरतों ने इन्कलाब को आगे बढ़ाने में हमारी मदद की थी. वास्तव में जब औरतें बागी होकर सड़क पर निकली हैं तो अपने पीछे पूरे परिवार को उन्होंने घसीटा. उनका बहुत बड़ा सहयोग रहा है इस इन्कलाब में. रहा भविष्य का सवाल, वह उज्ज्वल है. उनकी शारीरिक बनावट के अनुसार जो काम उचित होंगे, वह उन्हें दिये जायेंगे. ▣

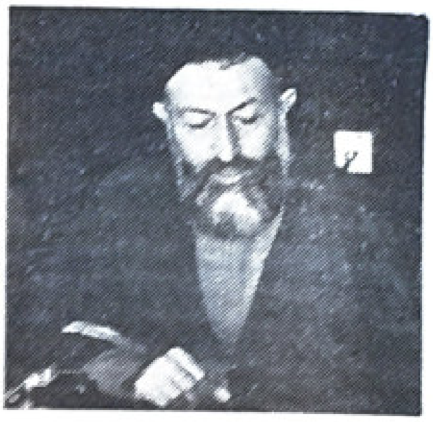

● आयतुल्लाह बेहिश्ती

वे वास्तव में इन्कलाब के दुश्मन हैं

डा. बेहिश्ती फ्रांसीसी यूनिवर्सिटी से अभिलेखशास्त्र में डाक्टेट हैं. बरसों जर्मनी में रहे हैं. वहां की मस्जिद के इमाम भी थे. इस इस्लामी आंदोलन में एकाएक ये बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति बन बैठे. लोग कहते हैं कि नाम को लोग यहां प्रधानमंत्री तथा राष्ट्रपति बने हैं, लेकिन बेहिश्ती के पास सबकी कुंजी है. ईरान के राजनैतिक संसार में डा. बेहिश्ती खुमैनी साहब से भी महत्वपूर्ण बताये जाते हैं. यह व्यक्ति एक समय में हजारों अफवाहों की सलीब पर था, जैसे कि यह पहले कम्युनिस्ट था, अब रेजीनिस्ट हो गया है. यह रास्पोटिन है. यह सावाक पुलिस का एजेंट है. अमरीका का दोस्त है. हजारों लाखों फ्रांक जर्मन बैंक में भरा है. पहले डांसर था, होटल में गाना गाता था. अब एजेंट और मुल्ला बन बैठा है या यह बड़ा खतरनाक आदमी है. आयतउल्लाह तालगानी को इसी ने मरवाया है. बंधकों को पकड़ने में सब इसी का किया धरा है. यह अमरीका को ईरान में लाकर रहेगा. यह बनीसद्र को भी गोली से उड़वा देगा. बहुत दक्ष राजनीतिज्ञ है. इस्लामी कोर्ट में जो चाहता है, करता है, वगैरह वगैरह. उनसे भेंट होने पर मैंने पूछा :

आप इस समय, विशेषकर इस्लामी पार्टी के अध्यक्ष होने के नाते बहुत महत्वपूर्ण हैं. आपका इस्लामी गणतंत्र पार्टी के बारे में क्या विचार है? खुमैनी साहब के विचार इस पार्टी के बारे में क्या हैं?

खुमैनी साहब हमारे इन्कलाब के नेता हैं. वह केवल देश में ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी माननीय हैं. उनका पूर्ण विश्वास है इस्लामी गणतंत्र पार्टी पर. वह चाहते हैं कि यह पार्टी लोगों का अधिक से अधिक विश्वास हासिल करे. उनके लिए काम करे और इस्लामी विचारधारा को सर्वप्रिय बनाये. देश की जो हालत है, वह इजाजत नहीं देती है कि किन्हीं दूसरे लोगों के विचारों पर टिप्पणी की जाये.

आपने जो कहा, वह दुरुस्त हो सकता है, मगर जब मैं आम लोगों के बीच में जाती हूं तो उनका कहना है कि यह पार्टी भी शाह की पार्टी जैसी हो गयी है?

मुझे आश्चर्य है. नहीं जानता कि किन लोगों से आप मिलती हैं. यह एक ऐसे ग्रुप का प्रचार है, जो इंपीरियलिज्म व जियोनिस्ट के पक्ष में है. नहीं कहता कि आपका शोध करने का तरीका गलत है, मगर मैं यह कह सकता हूं कि हम आम लोगों के समीप हैं.

ईरानी बैंक रुपयों से खाली हैं. पूरे ईरान में रुपया नजर नहीं आता है? यह सारी समस्याएं कैसे हल होंगी?

यह समस्या, जिसका नाम आपने लिया है, बहुत छोटी है. बैंक में पैसा है, नोट नहीं हैं. लोगों ने बंबारी के डर से रुपये बैंकों से निकाल लिये हैं.

इन सारी समस्याओं को हल करने का कोई कार्यक्रम नहीं है आपके सामने?

क्यों नहीं है. हम प्रत्येक उस देश से, जो हमारे इन्कलाब का आदर करेगा, व्यापारिक संबंध बनायेंगे.

भारतवर्ष से?

भारतवर्ष से हमारे व्यापारिक संबंध प्रगाढ़ हैं.

संसार में इस्लामी कोर्ट की गतिविधियों को लेकर बड़ी चर्चा है कि गोरिल्ला अखबार 'कार' बेचने पर लड़के-लड़कियां जेल में डाल दिये जाते हैं.

कुछ लोग ऐसे हैं, जो इन मासूम बच्चों को गलत काम के लिए उकसाते हैं. वे वास्तव में इन्कलाब के शत्रु हैं. यह हमारी ड्यूटी है कि हम इन्कलाब के शत्रुओं का नाश करें और बच्चों को तबाह होने से बचायें. ▣

● मौसवी तबरीजी

इस्लामी गणतंत्र में औरतें जज क्यों नहीं हो सकतीं ?

मौसवी तबरीजी ईरान में लोगों के बीच अजीब घृणा से याद किये जाते हैं. वह अन्य मौलवियों की तरह ही भीषण धर्मपंथी और उसूलों के कट्टर अनुयायी हैं. अपने आप में यह भले ही एक खूबी हो, परंतु ईरानी, विशेषकर तबरीजी जनता उनसे बड़ी दुखी है. तबरीज में टैक्सी ड्राइवर तथा दूकानदार बड़ी ही घृणा से कहते हैं कि यदि मौसवी हमारे हाथ लग जाये तो उसके टुकड़े टुकड़े करके चील-कौवों को खिला दें. मौसवी तबरीजी से मिलने का अवसर तेहरान में मिला.

विभिन्न समुदायों का ईरानी इन्कलाब में क्या योगदान रहा है, आरंभ से लेकर अब तक?

कुछ ही लोग थे, जिन्होंने इस संग्राम में हिस्सा लिया है. उग्रपंथी कम्युनिस्ट हथियारों से लड़ना चाहते थे. हम लोगों ने गोरिल्ला युद्ध कभी पसंद नहीं किया. हमारा उद्देश्य था कि सब मिलकर संग्राम में हिस्सा लें, मगर वे डरते थे. छोटे-छोटे ग्रुपों में वे आते और मारे जाते थे. उनके अनुसार लोगों को अपने साथ लाना इतने कम समय में मुश्किल था. उनका विश्वास आक्रमण पर अधिक था. हमने एक असीमित जनता का विश्वास अपने साथ ले लिया है.

ईरान में होने वाले कत्ल अजीब तरह से देखे जा रहे हैं. आपको इसके बारे में कुछ कहना है?

ईरान में दी गयी सजाओं के विभिन्न कारण रहे हैं. विदेशी प्रेस ने अधिकतर सियासी कत्लों पर टिप्पणी की है, मगर उन्होंने तस्करों और कातिलों के बारे में कुछ नहीं लिखा है? उनका दुख केवल बड़े-बड़े इन्कलाब के दुश्मन फौजी अफसरों की मौत से है, जो पहलवी काल में बड़े बड़े ओहदों पर थे. 'शरह' के मुताबिक उनको कत्ल करवाना जरूरी था. कुछ लोग शाह को दोबारा वापस लाना चाहते थे, जैसे प्रधानमंत्री हुवैदा. उसको कत्ल करना जरूरी था, क्योंकि वह सारी बुराइयों की जड़ था. कुछ कूप करके अमरीका का शासन स्थापित करना चाहते थे.

उन्हें इस इन्कलाब को बरबाद करने के लिए क्यों जिंदा रखा जाता?

मगर यह कहां तक सही है कि तस्करी के इल्जाम में कम्युनिस्ट मारे जा रहे हैं.

यह सही नहीं है कि कम्युनिस्ट यूं मारे जा रहे हैं. सच्चाई तो यह है कि अभी तक किसी भी तस्कर को फांसी की सजा नहीं मिली है. आप मुझसे अच्छी तरह जानती हैं कि हशीश और नशे की चीजों ने ब्रिटिश साम्राज्य में हिंदुस्तान को बरबाद किया. चीन को देखिए. हम तस्करी से उतनी ही नफरत करते हैं, जितनी की फौजी षड्यंत्रों से.

औरतों की स्वतंत्रता और उनका ईरान में भविष्य क्या है? इस्लाम में उनका क्या महत्व है?

इस्लाम में औरत मर्द को बोलने की आजादी बराबर की है. अपनी नौकरी के लिए व दूसरी चीजों के बारे में फैसले की आजादी है, मगर इस्लाम औरत मर्द को सड़क पर नंगा घूमने की इजाजत नहीं देता है. औरत प्रधानमंत्री से लेकर अध्यापक तक सारे ओहदों को संभाल सकती है, सिवाय जज के. उसकी भावनाओं की नर्मी व हमदर्दी उससे कड़े फैसले नहीं करवा सकती है, इसलिए इस्लामी गनतंत्र में औरतें जज नहीं हो सकतीं. □

इराक और ईरान रेडियो की सच्ची-झूठी खबरें. . .

समझेगा कौन यहां?

खुमैनी जल्लाद जादूगर हिंदीजाद कब तक इस्लाम के नाम पर ईरानी जनता को बेवकूफ बनायेगा. ईरानी भाइयो, आओ आप हममें मिल जाओ! हम तुम्हारे धर्म भाई हैं. यह मत भूलो कि तुम जाल में फंसे मजलूम परिंदे हो... उठो और खुमैनी के खिलाफ नारे बुलंद कर दो!

आज हमने ईरान की रिफाइनरी अपने कब्जे में कर ली है. . .50 ईरानी जहाजों को मार गिराया है. . .जल्द ही हम ईरान पर कब्जा कर लेंगे. . .

खबरें सुनकर कुछ के चेहरों पर हवाइयां उड़ने लगीं, कुछ को क्रोध आया, कुछ इस हिमाकत पर हंसे. कुछ वास्तव में खुश हुए कि ईरान हार रहा है. खुमैनी—हिंदुस्तान में जन्मा एक विदेशी! बंगाल के जादू और चंगेजखां जैसे जल्लाद की सारी खूबियों का मालिक! अच्छा है, इसका तख्ता पलटे! जब सारे हथियार समाप्त हो जायें, फिर हम बख्तियार को लायेंगे, शाह का बेटा आयेगा!

▣

सद्दाम! बाजारी मजदूर इंपीरियलिस्ट अब समझ गया है कि हम पर उसका जोर नहीं चल सकता. वह खरीदा हुआ मजदूर है. रूस और अमरीका का हर तरफ से पैसा खाकर उनकी नौकरी बजा रहा है. हमारे पास तो एक उद्देश्य है, वह किसको उद्देश्य बनाकर लड़ रहे हैं? हमारी फौजों ने उनको वही जवाब दिया है, जो मुनासिब था. उनके सात सौ आदमी हमारे बंदी हैं. सौ जहाज हमने मार गिराये. उनकी फौजी छावनियां हमने तबाह कर दी हैं. 40 टैंक उड़ा दिये हैं.

एक अन्य प्रसारण —सिर्फ आपकी इत्तला के लिए अर्ज है कि ईरान में केवल 200 राजनीतिक समुदाय हैं. सौ के लगभग मार्क्सवादी व अन्य सौ इस्लामी, माओ गुट व स्वतंत्र दल. यह सब गुंडों के रूप में अपने-अपने सिर पकड़े बैठे हैं?

खबर सुनने वालों में से कुछ पुलकित हो 'अल्लाह हो अकबर, खुमैनी रहबर' के नारे लगाये. कुछ चिंतित हो गये.

इस सारे हंगामे को देखकर राष्ट्रपति बनीसद्र ने कहा कि इराकी हमारे भाई हैं. उनकी सरकार जो भी कर रही है, उसकी गलतियों के बावजूद हमें उसे गाली देने का अधिकार नहीं है. सद्दाम हुसैन का नाम ठीक से लिया जाये. खबरों में किसी भी आदमी का अपमान करना बहुत बड़ा काम नहीं है.

सद्दाम न बाजारी रहा, न मजदूर, मगर कुछ लोग बनीसद्र के इस भाषण से नाराज . . . कि बनीसद्र के पीछे अंग्रेजों का हाथ है, बनीसद्र अमरीकी है तभी तो ऐसा कह रहा है, बनी सद्र लिबरल है. . .वह आया तो पूंजीवाद आयेगा. कुछ लोग बनीसद्र पर सदके कुर्बान हो रहे थे—बेचारा मौलवियों के बीच फंस गया! खुदा इसे अपनी पनाह में रखे!

उसका यों चकरा जाना देखकर किसी समुदाय के सदस्य ने कहा, "बिना विचारधारा के आदमी यों ही चकराता है. किसी समुदाय, गुट, दल में शामिल हो जाओ, सब समझ में आ जायेगा.

फिर आप बताइये. . .आखिर जायें तो जायें कहां? □

ER RAKESH
9716080365

● जी हां, हम समझ रहे हैं

हम थके तो नहीं मगर. . .

ईरान के इन्कलाब को जहां एक निर्धन वर्ग खून से सींच रहा है, वहीं धनाढ्य वर्ग अपनी दौलत से मस्त इन सारी बातों को रद्द करता हुआ चीख रहा है कि यह 'ईरान' नहीं, 'वीरान' हो गया है. न नाच, न गाना, न होटल, न कैबरे, न पिकनिक, न घुमक्कड़ी. आखिर आदमी जिये तो कैसे?

ऐसे ही एक घर में दोपहर के खाने पर अतिथि आये हुए थे. खानों के टीले सजे थे. तभी टी. वी. पर 'परिचर्चा' कार्यक्रम में एक देहाती बुढ़िया ने कहा, "हम युद्ध से थके नहीं हैं. दो जवान बेटे शहीद हुए. बहुएं युद्ध क्षेत्र में नर्स का काम कर रही हैं. मुझे फख्र है कि हम. . ."

"कैसा फख्र? बच्चे क्या इसलिए जवान किये जाते हैं कि दूसरों की जिद पर कुर्बान कर दिये जायें?"

इसके बाद गरीब देहातियों की भीड़, रणक्षेत्र पर भेजने के लिए रोटी पकाती बदसूरत औरतें, थके मजदूर मर्द!

"उफ! कहां से आये हैं ये लोग? खुदा की कसम! ये ईरानी नहीं हैं."

"इनकी हालत देखकर मुझे परेशानी हो रही है. मैंने सोच लिया है, मैं अपनी यह अंगूठी बेचकर रुपये भेजूंगी." वह चारों उंगलियों में बड़े-बड़े रंगीन पत्थरों और हीरों की अंगूठी पहने थी. एक अधुनातन जवान औरत घृणा से बोली, "कटोरा थमाकर भीख मांगना सिखा रहे हैं लोगों को. यही ईरान था, जो गरीब मुल्कों को कर्ज देता था, सस्ता तेल देता था. जहां हर मामूली औरत के पास 20 तोला सोना, चार बिस्तर, 20 जोड़ी कपड़े हों, वहां इस गरीबी के प्रचार का क्या अर्थ? शाह ने जिस गौरव का मुकुट ईरान के सिर पर रखा था, उसे जाहिल रौंद रहे हैं गधे!" □

लाश नाश

•दारिवेश कारगर

ER RAKESH
9716080365

डूबते सूरज की किरणें ऊपर पहाड़ पर खून के आंसू रो रही थीं. नीचे दो आदमी एक ट्रक से धरती पर कूदे और दूसरे ही पल बड़ी फुर्ती से खड़े हो गये. उनके चेहरे चारखाने के लंबे चौड़े रूमाल से इस तरह बंधे हुए थे कि उनमें से केवल उनकी आंखें ही झांक रही थीं. भावहीन और सपाट, जिनसे कुछ भी पढ़ पाना कठिन था. उनमें से एक ने हाथ आगे बढ़ाया, ताकि माहरुखसार को ट्रक की ऊंचाई से नीचे उतरने में आसानी हो. माहरुखसार ने घृणा से उस आदमी को देखा, फिर मन ही मन कुछ बड़बड़ाती ट्रक की दीवार के सहारे नीचे उतर आयी.

माहरुखसार के नीचे उतरते ही वे दोनों मर्द सावधान होकर खामोशी से उसके दोनों ओर खड़े हो गये. अब वे माहरुखसार को मैदान की ओर लेकर चलने लगे.

वास्तव में यह मैदान शहर के गरीब इलाके की कुर्बानगाह थी. यहां पर कस्साब भेड़ें लाता था. भेड़ें गर्दन झुकाये कस्साब के पीछे-पीछे चलती यहां तक आती थीं. यह सुनसान मैदान इसी काम के लिए इस्तेमाल किया जाता था . . . और इसीलिए वातावरण में एक जहरीली मुस्कान फैली हुई थी.

माहरुखसार पहली ही नजर में सब कुछ समझ गयी थी, मगर वह भेड़ तो न थी, जो सिर झुकाये खामोशी से बिना कुछ समझे-बूझे अपनी कत्लगाह तक अपने ही पैरों से चलती चली जाये! एक शोला-सा चमका. उसने अपने साथ चलते हुए उन दोनों आदमियों पर निगाह डाली, फिर बिजली की-सी तेजी से अपना भरपूर हाथ उनमें से एक के सीने के बायीं ओर मारा तथा भागती हुई दूसरी तरफ दौड़ने लगी. अचानक हुए हमले के लिए दोनों तैयार न थे. ठगे-से एक दूसरे को देखने लगे, मगर दूसरे ही पल जैसे वे होश में आ गये, "ऐ! रुको, ठहरो!" कहते हुए उसके पीछे दौड़े. ड्राइवर आश्चर्यचकित-सा दो पल सामने देखता रहा, फिर तेजी से इंजन चालू कर गोलाई से घूमते हुए ठीक माहरुखसार के सामने पहुंचकर ब्रेक लगायी. माहरुखसार ने चुंधयायी आंखों से ट्रक के शीशे को देखा. वहशतजदा चमकीली आंखें पूरी खुलकर फड़फड़ायीं और वह वहीं जम गयीं. पीछे से दौड़ते हुए वे दोनों भी पहुंच गये और झपटकर माहरुखसार के हाथ पीछे से पकड़ लिये.

तभी एकदम उसे काकउमर की आंखें याद आ गयीं. लगा, मन को मुट्ठी में पकड़कर किसी ने निचोड़ दिया है. दर्द की बेशुमार टीसें उठ-उठकर उसे व्याकुल करने लगीं. कानों में उसकी आवाज गूंजने लगी. ये बातें कुछ दिन पहले ही तो उनके बीच हुई थीं. . . .

"काकउमर, तुम्हें बेटा ही क्यों पसंद है?"

"कुर्दिस्तान के लिए. . ."

"यानी. . ."

"ताकि कुर्द ज्यादा हों. . ."

काकउमर की आवाज में भरपूर इच्छा का ऐसा गौरवपूर्ण

"समझ लो कि मैं नहीं रहा तो तुम हाथ पर हाथ धर कर न बैठना. यह मेरी बंदूक है, इसे उठाकर सीधे वहां उस पहाड़ी की ओर गोली दाग देना. . . .!" ——यह जानते हुए भी कि आगे सिर्फ मौत है, सरजमीं के वास्ते कुर्बान हो जाने वाले शहीदों की तरफ से आने वालों के लिए मार्मिक वसीयत लिखती हुई जांबाज कहानी——

रंग था कि माहरुखसार की सारी देह उसी रंग में भीगी याद से झनझना उठी. काकउमर की आवाज की गर्मी, उसका गुरूर, उसकी धमनियों में बहने लगा. उसकी प्रेम से भीगी आंखों का उतावलापन उसके होंठों में फंसकर रह गया. . . कि काश! . . . काकउमर की यह इच्छा उसके तन से जन्म ले.

"उनका जन्म उनकी मौत की संख्या से अधिक हो . . . पीशमंग : (**कुर्दिस्तान के एक गुट का नाम है. इनका विश्वास है कि देश के मरने से पहले वे कुर्बान होंगे. इसीलिए उन्होंने अपने गुट का नाम पोश अर्थात पहले मर्ग अर्थात मौत रखा है**) ज्यादा होंगे माहरुखसार! इतने ज्यादा. . .इतने ज्यादा हों कि फिर हम पर अपनी मर्जी से कोई भी जोर न चला पाये." काकउमर की आंखें आसपास फैली नंगी उजाड़ धरती पर फिसलने लगीं. विचारों ने उसके मस्तिष्क को एक नयी दिशा दी. इस बार माहरुखसार के कानों में जो आवाज टकरायी, वह पहले से कहीं अधिक अभिलाषा और गौरव से भरी थी.

"इन्हीं लोगों के हाथों. . .इन्हीं अपने कुर्दों के हाथों. . . अपने पीशमर्गों का हक हम लेंगे. . .उन्हीं के हाथों से, यह सूखी धरती गेहूं की बालियों से भर उठेगी. . .उन्हीं का पसीना हमें अनाज देगा. . .और उन्हीं के हाथों देश की भूख मिटेगी."

▣

पीछे से भारी हाथों ने माहरुखसार को आगे धक्का दिया. काकउमर की गूंजती आवाज माहरुखसार के कानों से गायब हुई और फिर उसके साथ कदम मिलाकर चलने लगी.

"माहरुखसार ! मान लो, अगर मैं एक वक्त न रहा. . ."

"नहीं नहीं, काकउमर , ऐसा मत कहो! "

काकउमर के होंठों पर उदास मुस्कान खेल रही थी. गम में डूबी उसकी आंखें माहरुखसार के चेहरे को जी भर कर देखना चाहती थीं. एकाएक काकउमर के कंधे दुख से झुक गये, "शायद ऐसा हो जाये माहरुखसार. . .समझ लो कि मैं नहीं रहा तो तुम हाथ पर हाथ धरकर न बैठना! यह मेरी बंदूक है. इसे उठाकर सीधे वहां. .. उस पहाड़ी की ओर गोली दाग देना. . .वहां मेरे भाई हैं, मेरे दोस्त हैं. . .वे जमा हो जायेंगे, तुम्हारी मदद करेंगे, वे तुम्हारा पूरा खयाल रखेंगे. तुम्हें अकेला नहीं छोड़ेंगे."

माहरुखसार की आंखों में सावन-भादों की झड़ी लग गयी. वह बार-बार आंखों को पोंछती, मगर लंबे-लंबे आंसू आंखों से ढलक-ढलककर बराबर गालों पर बह रहे थे. उसका मन चाह रहा था कि दुश्मनों की नजरों से दूर, काकउमर को खोने से पहले उस दर्द को जी भरकर देख ले.

वे मैदान के बीच में पहुंच गये थे. एक आदमी आगे दौड़ा और इन दोनों के सामने आकर खड़ा हो गया. दूसरे ने माहरुखसार के हाथों को पीछे करके उन्हें कसकर बांध दिया. माहरुखसार ने देह की सारी ताकत लगाकर हाथ को छुड़ाना चाहा. मगर हाथ बिल्कुल नहीं हिले. आजाद होना तो बहुत मुश्किल था. एकाएक उसका दिल धड़कने लगा. शरीर कांपा और मस्तिष्क में सवाल उभरे—'मैं कौन-सी हूं?' उन दोनों आदमियों से ध्यान हटाकर वह सोचने लगी. . .'मैं कौन-सी कुर्द हूं, जो यहां लायी गयी हूं? मैं मरने वालों की संख्या में कौन-सा नंबर हूंगी?' उसकी आंखें धरती पर टिक गयीं. उसके पैरों के पास की जमीन की मिट्टी बिखरी हुई थी. . . उसके मस्तिष्क में दूसरा विचार कौंधा—'माहरुखसार, अपने-आप से पूछो कि तुम कौन-सी पीशमर्ग हो? शायद आज सुबह, शायद दोपहर को या दोपहर से पहले, हो सकता है घंटे भर पहले ही कोई कुर्द यहां मारा गया हो! कोई क्या जाने!' एक कटाक्ष भरी जहरीली मुस्कान उसके होंठों पर उभरी और मुख पर फैल गयी. एकाएक उसकी आंखों में चमक-सी आयी, फिर स्वयं से बोली—पहली हूं या दूसरी या सौवीं, क्या फर्क पड़ता है! लेकिन इतना जानती हूं कि जिस तरह से पहली नहीं हूं, निश्चित है कि आखिरी भी नहीं हूं.

इस विश्वास के बावजूद एक इच्छा उभरी—काश, मैं मरने वालों में आखिरी होती! काश, मैं आखिरी बलि होती. मेरे इस बलिदान के बाद कुर्दिस्तान आजाद हो जाता. काश. . .!"

एक आगे बढ़ा. माहरुखसार की सोच का सिलसिला बिखर गया. अपनी जेब से काला रूमाल निकालकर वह माहरुखसार की आंखों पर बांधना चाहता था. यह देखकर माहरुखसार ने बचाखुचा भय भी मन में से दूर भगा दिया और कड़कती आवाज से उसे ऐसा करने से मना किया, "नहीं, मेरी आंखों को मत छूना! " फिर होंठों के बीच से छलकती हंसी के साथ बोली, "ठहरो! मुझे आखिरी बार जी भरकर कुर्दिस्तान तो देख लेने दो! इन आंखों से अपनी धरती का नजारा तो कर लेने दो! "

"ठीक है, छोड़ दो इसे, पट्टी मत बांधो." ट्रक से आवाज आयी.! "

मुस्कान की पर्त, संतोष का रंग माहरुखसार के मुख पर गहरा होता गया. उसका लावण्य निखरने लगा.

सहसा पीछे से किसी के चीखते हुए स्वर ने माहरुखसार का ध्यान अपनी ओर खींचा.

"जोखे तैयार हो न!"

वह सात लोग इस आवाज के साथ ही बिजली की-सी तेजी के साथ घुटनो के बल जमीन पर बैठ गये और बंदूक की नली माहरुखसार की ओर करके निशाना साधने लगे.

माहरुखसार ने अपनी तरफ लगीं उन भयावह आंखों में कुछ ढूंढना चाहा. मगर वहां कोई कुछ भी न था, जिसे देखती या पढ़ती. सब कुछ सपाट देखकर उसे अफसोस हुआ. माहरुखसार की जिंदगी का यह सबसे बड़ा और आखिरी दुख था. उनकी ओर से उसने नजरें हटायीं. जबान निकालकर होंटों को तर किया. उनकी उंगलियां ट्रिगर पर टिकी हुक्म की मुंतजिर थीं. माहरुखसार ने लंबी सांसें खींचीं. खून धमनियों में दुगने वेग से बहने लगा था. अपनी सारी तमन्नाओ को उसने बलपूर्वक जमा किया और पूरी ताकत से चिल्लायी—"कुर्दिस्तान या मौत!"

माहरुखसार की चीख मैदान के जर्रे-जर्रे में पहुंची. बरसों पुराने जख्म को फिर से हरा देखकर वे व्याकुल हो अपने में बल खाकर रह गये. पेड़ जो सारा माजरा समझ चुके थे, इस आवाज को उन्होंने पूरे वजूद के साथ महसूस किया मीलों तक सूखी मिट्टी, चश्मों, सूखे खेतों, कटीली झाड़ियों और पर्वत की शृंखलाओं ने एक-दूसरे के कान में फुसफुसाकर दुखभरी खबर दी. उनके लिए माहरुखसार की आवाज नयी नहीं थी. बहुत पुरानी थी, इतनी पुरानी जितना पुराना कुर्दिस्तान का इतिहास था. इसी तरह की अनेक आवाजें इस बार की तरह पहले हजारों बार कुर्दिस्तान के मैदानों और पहाड़ों का दिल हिला चुकी थीं.

माहरुखसार की आवाज नारा थी. दहाड़ थी, फरियाद थी और ऐसी तीव्र गुर्राहट थी, जिसने उन सातों जोखों के पैरों में झुरझुरी ला दी थी. उनके हाथ थर्रा गये थे. जोखों के सरदार की भी यही हालत थी, मानो हुक्म देने के लिए शब्द मुंह में ही जम गये. महारुखसार द्वारा कहे गये शब्दों को वह मन ही मन में दोहराने लगा. . . "या कुर्दिस्तान या मौत. . . या कुर्दिस्तान या मौत. . .या मौत? यानी. . .यानी क्या. . .?

एकाएक वह शब्दों के जाल में फंस गया. मस्तिष्क में खिंचाव बढ़ा. कई रंग-बिरंगे प्रश्न उभरे. उसका मन चाहा कि इन शब्दों का अर्थ समझे. इसी जिज्ञासा के कारण उसके मन-मस्तिष्क में व्याकुलता-सी उभरी.

'यानी क्या. . .?!'

उसका पूरा व्यक्तित्व प्रश्न बन गया था.

'क्या होगा जो ऐसा कहा इसने?'

उसकी दृष्टि जोखों पर पड़ी और थोड़ी देर के लिए वह सब कुछ भूल गया.

क्या यह लोग सब जानते-समझते हैं! मुमकिन है जानते हों?! नहीं! लेकिन यह खुद तो जानती है. . .चलूं उसी से पूछ लेता हूं. — नहीं बेवकूफी मत करो! अगर इन्हीं में से जाकर किसी ने कुछ कह दिया और उन्हें भनक लग गयी तो...जरा आदमी खुद इसी जगह खड़ा होकर देखे तो. . .मगर किसलिए? कुर्दिस्तान? मौत?

अब प्रश्न की जगह प्रशंसा ने उसका स्थान ले लिया. अजीब दिल वाली है. . .इस उम्र में भी क्या हौसला है. . .

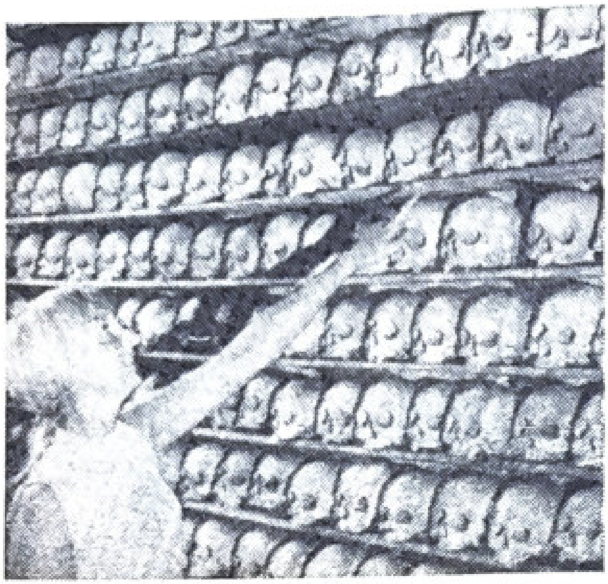

▣ **शाही पुस्तकालय** (एक व्यंग्य फोटो)

शाह के समय में जो लोग 'किताब' पढ़ने के जुर्म में गायब हुए, कुचले गये, जेल में डाले गये.

निर्भीक. मौत के खौफ से निडर?! हो सकता है इसे यकीन ही न आ रहा हो कि यह शूट कर दी जायेगी!

माहरुखसार की शेरनी जैसी मगरूर आंखें सबके दिल पर असर कर गयीं.

'. . .नहीं! यह जरूर जानती है. . .अच्छी तरह से जानती है. . .माथे पर बल पड़ गये. सब कुछ बदल गया...नहीं गधे नहीं! अपने को संभालो उल्लू के पट्ठे!'

उसकी निगाह माहरुखसार की हंसी पर फिसल गयी. ठंडा पसीना कमर पर बहने-सा लगा! एकदम से माहरुखसार के इस बहादुरी से भरे व्यवहार से उसे ईर्ष्या हुई, और जो प्रशंसा का भाव उभरा था, लुप्त हो गया. उसकी जगह द्वेष व क्रोध ने ले ली. अपने-आप पर अब उसने पूरा काबू पा लिया था. सारी चिंताओं और विचारों को एक ही पल में मस्तिष्क से झटककर वह जोर से चीखा, "फायर!"

▣

सात जलते अंगारे, सात पिघले उड़ते टुकड़े एक साथ निकले जो माहरुखसार के जख्मी सीने पर लगे और उसकी देह को छलनी कर गये. गोलियों की ध्वनियों का संदेश उस सुनसान मैदान में गूंजा और दूसरे ही पल वही मौत का सन्नाटा पहाड़ी मैदानों पर फैल गया. बूंद-बूंद खून, माहरुखसार की मुर्दा देह पर उबलती धमनियों के सूराखों से छलकने लगा, उसके लिबास के लंबे दामन पर लाल ताल बनाता, कुर्दिस्तान की सूखी जमीन को भिगोने लगा. □

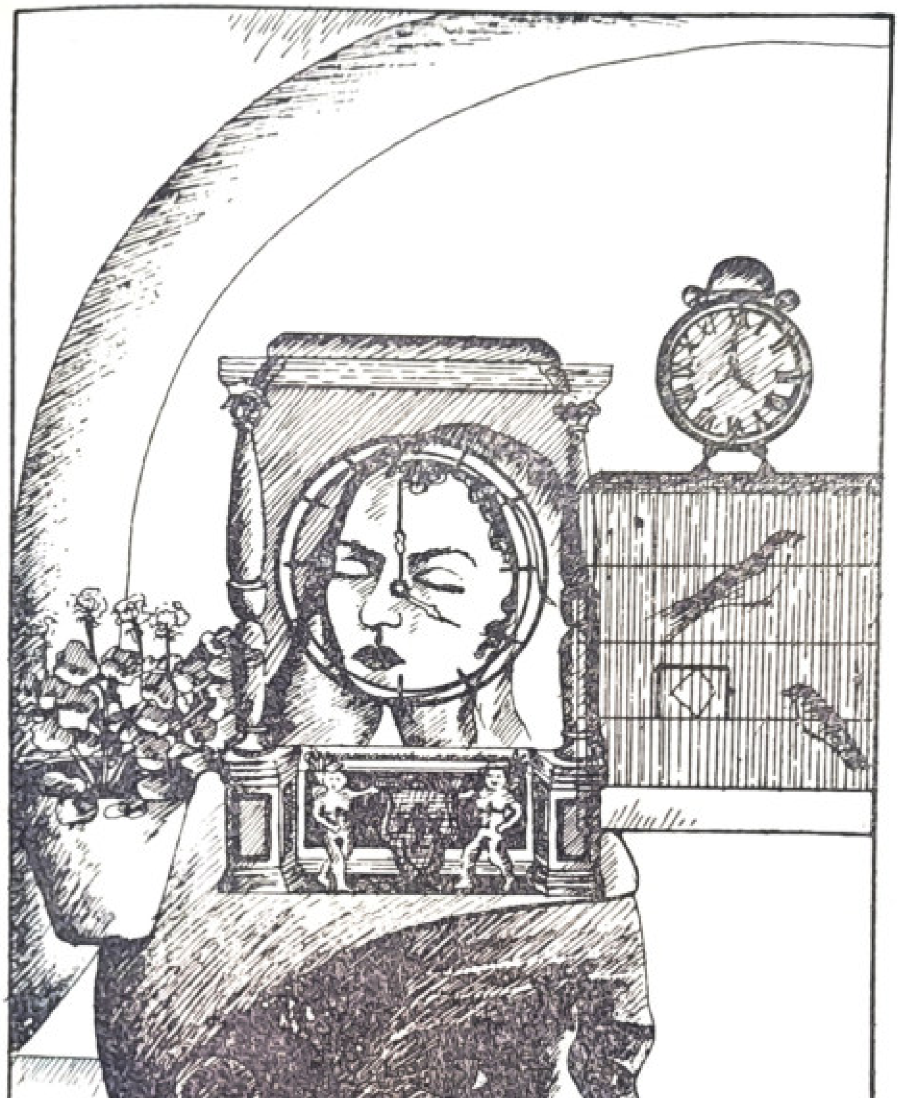

ER RAKESH
9716080365

कातिल

• जमाल मीर सादकी

कोई सरकार अपनी पुलिस और जासूसों के जरिये नागरिक जीवन को कितना आतंकित कर सकती है और उस आतंक के रहते जीवन कितना अस्त-व्यस्त हो जाता है? इस रहस्य पर से पर्दा उठाती उन लोगों की कहानी, जो जेल और आजादी की जिजीविषा से लगातार जूझ रहे हैं.

सबूती आगा एक अजीब सुख और प्रसन्नता से भरकर पत्नी से कह रहे थे कि आज मैं किताबों की दूकान पर बहुत ही दिलचस्प आदमी से मिला. हम लोगों ने साथ चाय पी. साथ घूमे. वह तो ऐसी गजब की बातें कर रहा था कि कुछ पूछो ही मत. डर और झिझक का तो साया भी न था. मुझे लगता है कि वह किसी खास काम से आया है, वरना यूं छिपाता नहीं. उसके हाव-भाव और रहन-सहन विदेशियों जैसे हैं, मगर व्यवहार मेरे जैसा. यहां तक कि बोलने के बीच जिस तकियाकलाम का इस्तेमाल वह करता है, हूबहू मेरा है. देखने में एकदम मेरे जैसा. वही उम्र, वही कद, वही काठी. लापरवाह-सा, जल्दी-जल्दी बोलता हुआ, जैसे उसके पास कहने को इतना कुछ है कि मुंह खुलते ही शब्दों का आबशार गिरने लगता है. भीड़भाड़ को देखकर बोला, "कैसे रह लेते हो तुम? यहां की हवा जहरीली है. आत्मा को दूषित करती है. यदि मैं तुम्हारी जगह होता तो कब का यह स्थान छोड़ चुका होता." मेरा मन कर रहा था कि पूछूं कि कहां से आया है. उसमें इतनी हिम्मत थी कि वह सही-सही बता भी देता, मगर पूछना अटपटा-सा लगा. एक तो इतनी बेतकल्लुफी न थी. दूसरी उसकी बातें इतनी मजेदार और अर्थपूर्ण थीं कि उनको काटकर यह मामूली-सा सवाल करना हिमाकत लगी. मंत्रमुग्ध-सा मैं उसकी बातों में डूबा रहा, जो मुझे उत्तेजित कर रही थीं. जब मुझसे रहा न गया तो मैं बोला, "आप वह बातें कर रहे हैं, जिन्हें कहने की मुझमें हिम्मत नहीं है."

इस पर वह हंसकर बोला, "अगर इन बातों पर तुम्हारा विश्वास है तो उसे कहने की हिम्मत भी है तुममें."

जब वह विदा होने लगा तो व्याकुलता से मैंने उससे दोबारा मिलने की बेचैनी का इजहार किया. इस पर उसने मुझे अपने होटल का नंबर और पता दिया. तब मैंने भी उसे अपना फोन नंबर दे दिया.

सूबती आगा बेचैनी से बोले, "तुम यह मत समझना कि वह किन्हीं नये विषयों पर बोल रहा था, बल्कि मुझे आश्चर्य तो यह है कि जो मैं कहना चाहता हूं, वही बातें वह कर रहा था. ठीक मेरी तरह शब्दों का तेजी से उच्चारण और खुली हुई बातें. मैं तो घबराकर पीछे मुड़कर देख भी रहा था कि कोई हमारी बातें सुन तो नहीं रहा है. कभी-कभी तो कमाल हो जाता था. हमारे मुंह से एक ही समय एक ही बात निकलती थी, जिसे सुनकर हमें हंसी आ जाती थी. सच मानो, वह मेरा डिटो था."

▣

तीन दिन बाद फोन की घंटी बजी. कल उस आदमी ने बारह बजे खाने पर बुलाया है. सूबती आगा ने चहकते हुए पत्नी को खबर दी और बोले, "कह रहा था कि आओ तो तुम्हें रास्ता चलना बताऊं. हां, सचमुच कह रहा था. आओ तुम्हें रास्ता दिखाऊं, जैसे उसे एहसास हो गया कि मैं अंधे चूहे की तरह बिल में घुसा हूं. पक्का हरामखोर हो गया हूं. हाथ-पैर हिलाना नहीं जानता. बेकार, काहिल-सा हूं." पत्नी ने थोड़ी नाराजगी से कहा, "आखिर आप बोल क्या रहे हैं? अंधा चूहा, क्या मतलब? हरामखोर से क्या मुराद है आपकी? अजीब बात है. मेरे खयाल से बिलावजह की बातें कर रहे हैं आप. मुसीबत को दावत देना चाहते हैं ऐसी बातें करके."

दोपहर के समय गिरती बर्फ मे सूबती आगा उस आदमी के होटल पहुंचे. रेसेप्शनिस्ट ने झुककर उन्हें सलाम किया. उन्हे ऐसा लगा कि वह उन्हें पहचानता है. फिर हाथ मलते हुए बोला, "जनाब! कैसी खूबसूरत बर्फ गिर रही है."

सबूती आगा खामोशी से सीढ़ियां चढ़ते हुए कमरे तक पहुंचे. कमरे का दरवाजा आधा खुला था. दो तीन बार खटखटाने पर भी वह न तो खुला और न ही कोई आया. सबूती आगा सोचने लगे कि जरूर वह कहीं किसी काम से गया है. चंद मिनट में लौट आने का इरादा होगा, तभी तो दरवाजा खोल रखा है. चलकर तब तक बैठता हूं.

छोटा-सा कमरा. अंधेरे में उन्होंने आंखें फाड़कर देखा. कमरा बड़े सलीके से सजा था. खिड़की के पर्दे गिरे हुए थे. जब आखें अंधेरे की आदी हुईं तो उन्हें सामने बिस्तर पर कोई लेटा दिखा. उनके पुकारने पर उन्हें न तो कोई उत्तर मिला और न ही वह अपनी जगह से हिला. पास गये तो देखा कि उसके हाथ में चाकू है, जिससे उसने अपनी गर्दन की रग काट दी है और खून बह-बहकर चादर पर जमा हुआ है और वह मर चुका है. उसकी खुली-फटी आंखें उन्हें अपने चेहरे पर जमी ऐसी लगीं, जैसे उनका उपहास कर रही हों.

खामोशी से सबूती आगा बाहर निकले. सीढ़ियां तय कर नीचे आये तो रेसेप्शनिस्ट को व्यस्त पाया. किसी ने उनकी ओर ध्यान न दिया तो वे होटल से निकलकर गिरती बर्फ में घर की ओर लौट आये.

सारी दास्तान सुनकर उनकी पत्नी ने सिर पीट लिया. उनकी अक्ल पर आंसू बहाती हुई बोली, "क्यों वह चोरों की तरह वहां से आये? जब सब तुम्हें पहचानते थे तो तुमने उन्हें बताया क्यों नहीं. आपसे मैंने पहले ही कहा था कि बैठे बिठाये आप मुसीबत को दावत दे रहे हैं. तब आपने कंधे उचकाये थे. अगर कत्ल के जुर्म में पकड़े गये तो क्या जवाब देंगे? आपका फोन नंबर भी वहां मौजूद है."

बर्फ तेजी से गिर रही थी. इस तूफानी मौसम में लौटकर दोबारा होटल जाना नामुमकिन था. सबूती आगा पूरी तरह टूटकर दीवान पर पड़ गये. परेशानी के कारण बुखार भी आ गया. बुखार की तेजी और गर्मी में वह बड़बड़ा रहे थे, "बुजदिल! बेशर्म! नीच! कमीने! बेहया कहीं के! इससे तो अच्छा है कि तुम मर जाओ!" पसीने से तर गफलत से चौंकते हैं. व्याकुल-उत्तेजित हो अपने को बुरा-भला कहते हैं.

जिंदगी का आराम जैसे उनसे किसी ने छीन लिया है. वह अब किसी से न तो मिलते हैं, न ही बाहर निकलते हैं. यदि कोई कुंडी खटखटाता है, तो उन्हें लगता है कि कोई उन्हें पकड़ने आ रहा है और फोन की घंटी बजती है, तो दहशत से चौंक उठते हैं.

▣

इस तरह से बहुत दिन गुजर गये, मगर हुआ कुछ नहीं. न तो कोई आया और न ही गया. अब तो उनकी पत्नी को भी संदेह होने लगा था कि वास्तव में वह होटल गये भी थे या नहीं? वह तो यहां तक भी सोचने लगी कि वैसे किसी मर्द का वजूद है भी या नहीं.

सबूती आगा भूलने की बीमारी में मुब्तला हो गये. अब उन्हें होटल का सही पता भी याद नहीं है. रात को भय और उत्तेजना से पागल हो वह सपने में चौंक-चौंक उठते हैं. उनके दिमाग पर उस आदमी के कत्ल वाली बात अजीब तरह से जम गयी है, जो किसी तरह निकलती ही नहीं है. उन्हें जाने क्यों विश्वास-सा हो गया कि एक दिन कुछ लोग उन्हें ढूंढते हुए आयेंगे और कत्ल के जुर्म में उन्हें गिरफ्तार कर हथकड़ियां पहनायेंगे. □

लघुकथा

चचा ने कहा था

▣ अब्बास हकीम

संगतराश जवान था. सब कुछ होने के बाद भी वह तन्हा था और रात इस तन्हाई को चौगुना कर देती थी. सुबह उठकर वह झील के किनारे घूमने जाता और पानी में अपनी शक्ल देखता. एक रात तन्हाई से घबराया हुआ सोचने लगा कि कल वह चश्मे के पानी से बैताल को ले आयेगा. सोचकर वह खुश हुआ. सुबह मुस्कराहट का जाल पानी में फेंका तो बैताल फंस गया, मगर जैसे ही उसने उसे पकड़ना चाहा, पानी की लहरों ने उससे उसे छीन लिया. दुखी हो उसने छेनी-हथौड़ी उठायी और पत्थर से एक सुन्दरी रच डाली, लेकिन वह बेजान और ठंडी थी. यह देखकर वह क्रोधित हो उठा. फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी. छेनी-हथौड़ी फेंक प्रेम द्वारा उस पत्थर की मूर्ति में जान डालने का इरादा किया. उसे गले से लगाया, उसकी कमर में अपना हाथ डाला, उसके पथरीले सीने में गर्मी पहुंचाकर अपनी आंखों से उसकी आंखों में जिंदगी लाया. फिर वे दोनों हाथों में हाथ डाले इधर से उधर जंगल में घूमने लगे.

एक दिन मूर्ति ने संगतराश से पूछा, "मुझे प्यार करते हो?"

"मैं तुम्हें पूजता हूं." यह प्रश्न मूर्ति ने कई बार पूछा. हर बार वही उत्तर मिला. उसने संगतराश की बात सुनकर कहा. "मुझे पुजना नहीं, प्यार चाहिए."

संगतराश ने कहा, "मैं तुम्हें प्यार करता हूं." बर्फ पिघल गयी. चिड़ियां चहचहाने लगीं. बुलबुलें गाने लगीं और बसंत ऋतु आ गयी.

संगतराश ने मूर्ति से पूछा, "मुझे प्यार करती हो?"

उसने उत्तर दिया, "मैं तुम्हें प्यार करती हूं, मगर आशिक नहीं हूं."

यह सुनते ही संगतराश बूढ़ा हो गया. दुखी हो उसने चश्मे के पानी में अपने को देखा तो डर गया. उसकी

नाउम्मीदी को देखकर मूर्ति ने उसे दिलासा दी और फिर पूछा, "उन दिनों जब अकेले रहते थे तो क्या करते थे?"

"चश्मे के किनारे जाता था, उसके पानी में अपने को देखता था."

"तो फिर तुमने मुझे क्यों बनाया?"

"तुम भी तो पानी में हो."

"मैं पानी में नहीं, तुम्हारे पास हूं."

"तुम पानी में झांको." संगतराश की बात सुनकर उसने पानी में झांका और अपने को न पहचाना. थोड़ी देर बाद जाने लगी. उसको यों जाता देखकर संगतराश व्याकुल-सा आगे बढ़ा, मगर मूर्ति बोली, "अगर मेरे समीप आये तो मैं तुम्हें मार डालूंगी, क्यों तुमने दूसरी पर नजर डाली?"

यह सुनते ही संगतराश रोने लगा और बोला, "सिर्फ तुम मेरी हो, मगर मैं क्या करूं, जो तुम अपने को नहीं पहचानती हो. आओ, अपने को फिर से देखो. शायद खुद को पहचान लो."

"मैं जलन महसूस करती हूं. दोबारा उसे नहीं देख सकती. उससे बेजार हूं और तुमसे भी, जो उसे घूरते रहते हो. मैं बेजार हो गयी हूं."

संगतराश ने रोकर कहा, "मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकता."

मूर्ति ने हंसकर कहा, "और मैं तुम्हारे साथ नहीं रह सकती." और दूर मैदान में भाग गयी. संगतराश थका-सा ठगा रह गया. वह उसके पीछे न भाग सका... चश्मे के किनारे बैठ गया और फिर कभी न उठा.

चचा ने कहा: उस आदमी ने गलती की. उन सारी बातों की जगह अगर वह उसका चुंबन ले लेता तो शायद बात इतनी अधिक आगे न बढ़ती. □

म. अहमदी ओस्कोई

लहर

मैं नदिया
उज्ज्वल, संकरी, ठंडी
बहती जंगलों, पहाड़ों और दर्रों में.

जानती हूं ठहरा पानी
स्वयं ही मृत्यु है.
जानती हूं समुद्र की लहरों के तन में
छोटी-छोटी नदियों के लिए सदा
नये-नये अस्तित्व जन्म लेते हैं.

न लंबी राह
न अंधेरे गढ़े
न पीछे छूट जाने का भय
कभी न रोक सके मुझे राह से अपनी.

इसलिए
मैं कभी
न समाप्त होने वाली लहरों में
बहती हूं.
मेरा अस्तित्व तलाश है
और आराम मेरी मृत्यु.

● मर्जियेह अहमदी ओस्कोई : 1945 में उस्कू नामक गांव में जन्मीं. बचपन खेतों में बाप का हाथ बटाने में गुजरा. बड़ी हुई तो पढ़-लिखकर गांव में अध्यापिका बनीं. देश की हालत, रुपये की बारिश, किसानों की दुर्दशा देखकर इनका मन बगावत करने को होता. 1970 में ये गोरिल्ला मूवमेंट में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने लगीं और 1973 में पुलिस से जंग करती हुई तेहरान विश्वविद्यालय के संग्राम में मारी गयीं. इनका विश्वास था कि सही कहानी तो मेरी जिंदगी लिखेगी. तभी तो गोलियों से छलनी बदन के बावजूद सावाक पुलिस के लोग बड़ी देर तक दूर से इनके बदन को देखते रहे. उन्हें डर था कि कहीं यह उठकर फिर से हमला न कर दे. □

साक्षात्कार

नीमा योशीज की आधुनिक कविता के बारे में आपका क्या खयाल है?

नीमा की आधुनिक कविता से ही फारसी की आधुनिक कविता का आरंभ माना जाता है, वरना आठवीं शताब्दी तक, जब हाफिज जैसे कवि का आगमन होता है, फारसी कविता पूर्णरूप से रूढ़िगत काव्य परंपराओं और नियमबद्धता में बंधी हुई थी. छंद और अलंकारों में उलझी, जीवन, चेतना और गतिशीलता से कोसों दूर, बाहरी लक्षणों से प्रभावित थी. उसकी उपलब्धियां भूगोल, इतिहास, यात्रा संस्मरण तक ही थीं. . . .जैसे नेजामी आदि.

नेजामी को मैंने जितना पढ़ा है, उससे यही जाना है कि वह एक ऐसा कवि था, जिसमें सामाजिक चेतना के कीटाणु प्रचुर मात्रा विद्यमान थे और 'शीरीन', उसका खंडकाव्य, जहां प्रेम का वर्णन करता है, वहीं पर वर्गों की असमानता की चर्चा भी करता है. क्या यह बहुत बड़ी बात नहीं है, एक पांचवीं-छठी शताब्दी के कवि के लिए?

मुझे इससे इन्कार नहीं है, मगर जहां तक शेर के रूप और फार्म की बात है, उसे मैं केवल एक उपन्यासकार मानता हूं. अब जैसे फिरदौसी है. 'शाहनामा' महाकाव्य रचकर उसने ईरान के इतिहास को काव्यबद्ध किया है. उसके यहां ध्वन्यात्मक बिंबों का बड़ा सुंदर प्रयोग है, जैसे धनुष चलाने के दृश्य में धनुष की डोरी खींचने से लकड़ी से निकलने वाली चिट-चिट की आवाज को शब्दों का कैसा जीवंत लिबास पहनाया गया है. जहां पर खुदा से राज व न्याय की बात आती है, वहां पर नून व मीम अक्षरों का प्रयोग फिरदौसी ने किया है. उच्चारण के समय उनसे ध्वनि तालू में गूंजती है और मन पर इबादत का प्रभाव छोड़ती है. इन सारी खूबियों को फिरदौसी बहुत गहराई से जानता था, मगर शेर तो अपना तर्क चाहता है, न कि नियमबद्धता. हो सकता है, कोई संगीतकार नियम के अनुसार साज को छेड़ना और तारों से आवाज निकालना जानता हो, मगर जरूरत तो हमें 'बेथोवेन' जैसे मेधावी की है, जिसकी कला में मनीषा हो, विवेक हो, जो संगीत में छिपे अर्थ को समझे. इन्सानी जज्बातों की गहराई बख्श, जब उसे एक सुर में बयान किया जायेगा तो वह अर्थपूर्ण व महत्वपूर्ण होगा. दिल की गहराई तक पहुंचेगा. वास्तव में संगीत का प्रभाव ही दूसरा होगा.

यह तो रही आठवीं सदी तक की बात. इसके बाद हमें हाफिज जैसा महान

अहमद शामलू के साथ नासिरा शर्मा की लंबी बातचीत.

"कपड़े टांगने की रस्सी पर एक गिद्ध आकर बैठ जाये तो आवाज नहीं होती, पर अगर किसी साज के तार पर मक्खी भी आकर बैठ जाये तो आवाज होगी. . ." विरोध की इसी आवाज को जेल की घुटन और जलावतनी ने और भी तीखा किया था. उनकी कलम से निकली इन्कलाबी कविताएं ईरान के जन-जन की जबान पर रही हैं, चाहे वह शाह का जमाना रहा हो और चाहे अब इस नयी व्यवस्था का. पहली सत्ता की नजरों में उनकी पत्रिका 'किताबे हफ्ते' खटकती रही थी और इस दूसरी सत्ता में उनकी नयी पत्रिका 'किताबे जुमे' छत्तीस अंक निकालकर दम तोड़ गयी.

'सारिका' के लिए अहमद शामलू से बात की है प्रख्यात हिंदी कथाकार श्रीमती नासिरा शर्मा ने.

चित्रों में: अहमद शामलू के साथ इस पृष्ठ पर हैं नासिरा शर्मा और अगले पृष्ठ पर श्रीमती शामलू.

क्रांति आखिर कहां से शुरू होगी?

•अहमद शामलू

कवि मिलता है, जिसने सब कुछ कह डाला, दूसरों के लिए कुछ छोड़ा ही नहीं. हाफिज के बाद छह शताब्दी तक फारसी शायरी में पूर्ण सन्नाटा है. लोग आये, शेर कहे और चले गये. कुछ महत्वपूर्ण न दे सके. इसी के बाद नीमा योशीज का आगमन होता है. आते ही नीमा ने रदीफ-काफिये के बड़े बड़े तुलानी मिसरों को तोड़ा. उन्हें उनका कुदरती रूप अता किया. इसी रूप में उसने अपने समय के बेहतरीन शेर कहे, जो आज भी सर्वमान्य हैं. यही वह दो खूबियां हैं जिनका एक जगह मिलना बड़ा मुश्किल है, क्योंकि जब कोई किसी चीज का आविष्कार करता है तो दूसरे उसे पूर्णता तक पहुंचाते हैं, मगर यहां तो नीमा ने फारसी को आधुनिक कविता का रूप भी दिया और उसे पराकाष्ठा तक भी पहुंचाया. यह अपने में अजीब बात है कि नीमा को मरे 20-25 वर्ष होने को आये, मगर आज नीमा के दिये हुए उसी

काव्यरूप में लोग कविता रच रहे हैं.

हर कृति समय की जरूरत और मांग के अनुसार ढलती और बनती है. नीमा के प्रारंभिक काल में कहे गये क्लासिक रंग के शेरों के बारे में आप क्या कहेंगे?

नीमा के क्लासिक शेर मुझे पसंद नहीं हैं, शायद उसकी असफलता का एक कारण यह भी हो कि नीमा को फारसी काव्य के एक नये रूप की तलाश थी, इसलिए उसके यहां क्लासिकल रंग फीके रहे. केवल उस दौर की एक कविता को हम कह सकते हैं कि बेहतर है–'अफसाना'. मगर अफसाना इतनी अच्छी भी न थी कि लोग उसका अनुसरण करते.

नीमा ने अपनी जिंदगी के आखिरी दस सालों में जो शेर कहे हैं, वह आधुनिक फारसी काव्य का अनमोल खजाना है, क्या आप ऐसा मानते हैं?

इसमें कोई शक नहीं, मगर आखिरी का नाम न देकर इसकी अवधि उसके बीच के जीवन यानि, जब 'माओख्ला' नामक संग्रह वजूद में आता है, कह सकते हैं.

नीमा फारसी काव्य में इन्कलाब लाया, उसे नया रूप दिया, नयी जिंदगी बख्शी. नयी शब्द-रचना का आविष्कार व प्रयोग किया. मगर वास्तव में स्वयं नीमा और उसका सामाजिक दृष्टिकोण क्या इन्कलाबी थे?

देखिये खानम, मैं यहां पर इन दोनों मसलों को एक दूसरे से जुदा करूंगा क्योंकि इनका एक दूसरे से कोई संबंध नहीं है. यहां पर किसी रचनाकार का इन्कलाबी होना उतना महत्वपूर्ण नहीं जितना उसका कवि होना, अर्थात वह किस हद तक लेखक है, किस हद तक कवि है, किस हद तक चित्रकार है या किसी दूसरे हुनर में कितना दक्ष है. वह इन्कलाबी है या नहीं, यह एक अलग बहस है, जो उसकी कला से नहीं, उसके व्यक्ति से संबंधित है. एक बेहतरीन शायर या संगीतकार सामाजिक चेतना और विचार के खुलेपन में एकदम शून्य भी हो सकता है.

इसका अर्थ यह निकाला जा सकता है कि नीमा में सियासी समझ की कमी थी. और ईरान में फैली घुटन की ओर न उनका ध्यान था न रुचि. वह आसपास होने वाली घटनाओं से अनभिज्ञ थे?

एकदम नहीं. नीमा को वक्त का एहसास था. उस दर्द की परछाइयां उसकी शायरी में हर कदम पर नजर आती हैं. उसकी कविता 'कांग्स्वे पा' से अधिक सामाजिक चेतना और गूढ़ता का एहसास हमें और कहां मिलेगा! इसके बाद उसकी अन्य कविताएं जैसे 'मुर्गान' इत्यादि में उस जबरदस्त घुटन का एहसास है जो मुहम्मद रजा शाह कबीर (शाह के पिता) के समय में ईरान में छायी हुई थी. 1953 में हुई प्रतिक्रांति के बाद नीमा केवल 2-3 वर्ष ही जिंदा रहा.

बिलिस्ट के यहां नारी भाव की सुंदरता अपनी चरम सीमा पर पहुंची दिखती है, विशेषकर उसके बाल्यकाल की भावनाएं. आपको फरोग की शायरी बिलिस्ट के समीप नहीं लगती?

हर रचनाकार में एक बच्चा होता है. रचना की शर्त यही है कि वह सात-आठ वर्ष का एक मासूम बच्चा ही बना रहे. भावनाओं के छल में न आये. उसकी ईमानदारी ही हुनर की आब है. मैंने एक बार किसी महिला से कहा था, वह बातचीत भी 'बामदाद' समाचार पत्र में छपी थी कि अगर एक गिद्ध कपड़े टांगने की अलगनी पर आकर बैठ जाता है तो उसके बैठने से रस्सी से कोई आवाज नहीं निकलेगी.

ER RAKESH
9716080365

मगर एक साज कमरे के किनारे दीवार से लगा रखा है, उस पर मक्खी के बैठने से भी एक सुर निकलेगा, एक सदा बुलंद होगी, एक आवाज उभरेगी. बाहरी हर झटके पर, चाहे वह जितना भी हल्का हो, साज की प्रतिक्रिया होगी. इस एहसास को हम रस्सी में पैदा नहीं कर सकते. मेरे खयाल से आज का साहित्य समाज में अपना महत्वपूर्ण प्रभाव और स्थान रखता है. उसकी एक महत्वपूर्ण भूमिका है. हीगेल कहता है कि सुंदर चीजें अवश्य ही कारामद होती हैं, मगर मेरा कहना है कि कारामद चीजें, हो सकता है, अपने में अधिक सुंदरता रखती हों.

यह दृष्टिकोण सौंदर्यबोध रखता हो या नहीं, मगर व्यावहारिक तो है ही. यहां मैं एक प्रश्न पूछूंगी, मशरूतियत (संविधान) से पहले का फारसी काव्य कैसा था? उस पर विदेशी साहित्य का क्या असर रहा?

जैसा मैंने पहले अर्ज किया है कि हाफिज के बाद मुझे दूर-दूर तक कोई नजर नहीं आता... मिसाल के तौर पर मशरूतियत से 20 साल पहले पद्य ही नहीं, गद्य का भी बुरा हाल था. सामाजिक समस्या शायरी पर इस कदर हावी हो गयी थी कि शायरी ने घुटकर अपना नियम, रूप, उद्देश्य, चेतना, सांस्कृतिक भाव, सब कुछ खो दिया. अशरफउद्दीन हुसैनी का अखबार 'नसीमे शुमाल' हॉट केक की तरह बिकता था. उनके शेर उसमें छपते थे, छापाखाना न था, रात भर में 1000 कापियां, वह भी बड़ी बुरी छपी हुई, लोगों तक पहुंचती थीं. मगर उनके शेर समय के साथ ही खत्म हो गये.

मशरूतियत के बाद क्या बदलाव आये?

इसके फौरन बाद ही हमें नीमा मिलते हैं. नीमा के साथ एक और ग्रुप जिसने नीमा के आधुनिक काव्य के रूप को अपनाया और नीमा के इस आविष्कार को आगे बढ़ाया है.

इस इन्कलाब के बाद आधुनिक फारसी कविता में क्या तबदीलियां आयी हैं?

तबदीलियां कैसी? जो लिखा गया है, सब बकवास है.

आपको ऐसा नहीं लगता कि पिछले दो वर्षों में कहे सारे शेर, शेर कम नारे अधिक लगते हैं?

नारों से भी गये गुजरे हैं. वे नारों का भी महत्व नहीं रखते हैं. इन्कलाब के बाद का साहित्य एकदम कूड़ा-करकट है. इसका कारण है, जब हम लिखते थे आधा अपना होता था और बाकी आधा सैंसरबोर्ड को नजर में रखकर पर्दे-दर-पर्दे लिखते थे, ताकि पकड़े न जायें, दूसरे शब्दों में सैंसर एक तरह से हमारी मदद करता था.

इससे आपकी मुराद यह है कि उस समय का साहित्य अधिक अर्थपूर्ण, गूढ़ व साहित्यिक सौंदर्य से परिपूर्ण होता था?

एकदम! मैंने बड़ी से बड़ी गाली शाह को दी है, सैंसर बिना समझे छपने की स्वीकृति दे देता था. यही किताबें आठ-दस बार छपती थीं. मिसाल के तौर पर मैंने शाह के 'इन्कलाब सफीद' का मजाक उड़ाया था कि 'आधीरात को सूरज निकल आया, लोगों ने यकीन भी कर लिया. उनको किसी ने कहा, अरे अहमको, यह कौन-सा सूरज है. घड़ी देखो, अजान सुनो, दोनों ही इस सूरज को झूठ बता रहे हैं.' हमारे पाठक इन गहरे नश्तरों को खूब समझते थे, (एक बेहद गहरी, खुशी से भरी हंसी) मगर सैंसर मेरे इस स्टाइल को समझ न पाया.

यह भी तो हो सकता है कि सैंसर बोर्ड के सदस्य अधिक शिक्षित न हों?

हां, यह भी एक हकीकत थी. क्योंकि जिस चीज को दुनिया समझ रही थी, उन्हें भी समझना चाहिए था. सैंसर बोर्ड का कहना था कि हमारे इस्तेमाल के लिए शब्दों का भंडार खुला है, मगर एक शब्द वर्जित है, वह है 'आजादी'

इन्कलाब के बाद काव्य की स्थिति...?

हां, लोगों ने आजादी जबर्दस्ती ली और शाह को बाहर निकाल दिया. एकदम

शामलू की तीन कविताएं

घुटन

नया चांद देखने, मैं
अकीक, सब्जी व आईने के संग
छत पर गया.

एक ठंडा हंसिया
आसमान पर उभरा
"कबूतरों की उड़ान मना है!"

सनोबर के दरख्तों ने
गुनगुनाकर कुछ कहा,
और—
इस शोर को सुन,
पहरेदारों ने तलवारें
परिंदों के गर्दन पर रख दीं.

और चांद
नहीं उगा

डर

मैं सचमुच मौत से
डरा हुआ नहीं हूं.
चाहे उसके बढ़ते हाथ
अधिक, और अधिक,
तंग हो जायें.

मेरा डर, हां मेरा डर इस
धरती पर मरने वालों से है
क्योंकि
यहां दफनाने वाले की मजदूरी
आदमी की स्वतंत्रता से अधिक है.

ढूंढ़ना, पाना,
पसंद का अधिकार,
आत्मदर्शन से
सीमा को ढूंढ़ना,
यदि मौत इन सबसे महान है
तो मैं हरगिज
मौत से नहीं डरता!

अंधेरे का गान

धरती पर
घटाओं भरी भोर
और शांत खड़ा एक सवार
घोड़े की गर्दन के
लंबे-लंबे बाल
हवा से परेशान!

खुदाया, खुदाया
यह सवार
हरगिज न ठहरे
जब कोई घटना
घटने वाली हो.

धान के जले खेत के किनारे
शांत खड़ी बाला
हवा से हिलते
उसके महीन कपड़े

खुदाया, खुदाया,
ये लड़कियां
हरगिज खामोश न हों
जब उनके मर्द
थकन और निराशा से
बूढ़े हो रहे हों.

से महसूस हुआ कि इस दौर के लिए पहली वाली भाषा-शैली अर्थहीन-सी होकर रह गयी है. उस समय काव्य संग्रह को ढूंढ़ने व खरीदने वाले आम आदमी न थे, बल्कि बुद्धिजीवी, विद्यार्थी व शिक्षित लोग थे. इस समय आवश्यकता थी कि कवि आम जनता की जबान में कुछ लिखे, इसलिए पाठक बदल गये. यह नये पाठक पहले वाले न थे. वह शहरों में हुए हादसों को भी कविताओं के द्वारा पढ़ना व जानना चाहते थे कि कहां पर कितने लोग शहीद हुए. शाह ने क्या किया वगैरह वगैरह. हमारे लिए यह सब लिखना एकाएक नामुमकिन-सा हो गया. जैसे मैं 55 वर्ष का हूं. 17 वर्ष की उम्र से मैंने शायरी करना शुरू किया था. मुझसे कैसे हो सकता है कि रातों रात मैं अपनी जबान बदल डालूं या नयी भाषा-शैली बाजार से खरीद लूं या उधार मांग लूं.

तभी आज ईरान में मुझे कई बार सुनने को मिला है कि फलां कवि या लेखक ने इन्कलाब के बाद लिखना आरंभ किया है क्योंकि वह आज की अखबारी भाषा को जानता है.

मैं नहीं समझ पाता कि लिखना एक वर्ष की अवधि में. . . कोई कितना कामयाब होगा? सफल तो आदमी तब होता है जब बरसों एक विषय पर काम करे और काम आरंभ से शुरू करे. तुम मुझसे मेरी भाषा उधार नहीं मांग सकतीं, बल्कि तुम्हें भाषा को मांजने और निखारने के लिए चालीस-पचास वर्ष रियाज करना पड़ेगा. फिर भी भाषा का सिरा ही पकड़ में आयेगा. एक दूसरी बात मेरी समझ में नहीं आती, आम आदमी के लिए लेखन का क्या अर्थ है? आम आदमी की सांस्कृतिक रुचि, पसंद के दृष्टिकोण से उनका वर्गीकरण करना पड़ेगा.

मुझे महसूस हो रहा है कि आज से दो वर्ष बाद फिर हमें फारसी का बढ़िया काव्य साहित्य पढ़ने को मिलेगा जो आज नहीं छप पा रहा है.

क्यों नहीं, दुनिया का अंत आज तो होने जा नहीं रहा है कि फैसला करना आसान होता, कौन कैसा है. मगर अभी तो अच्छे शायर आयेंगे. तब बेहतरीन साहित्य वजूद में आयेगा. अभी चंद दिन पहले एक नौजवान कवि अपने शेर दिखाने मेरे पास आया था. मैंने उससे कहा, "जब अच्छे शायर की बात चलती है तो हम हाफिज का नाम लेते हैं! क्या फारसी जबान मर गयी है जो उसका बेहतरीन शायर छह सौ वर्ष पहले का हो?" मगर भविष्य के बारे में कुछ कहना बड़ा मुश्किल काम है.

इस्माईल खुई के बारे में आपका क्या खयाल है? एक तबके विशेष में वह बहुत मान्य हैं?

उसमें दो खराबियां हैं, पहली, दर्शन का प्रोफेसर होने की वजह से शायरी में दार्शनिकता बहुत झाड़ता है, दूसरा, बोलता बहुत है. तुम खुद सोचो, 19 पन्नों की कविता किस काम की है?

यह तो मैंने कई शायरों में देखा है. शायद कहने को बहुत कुछ है, दर्द, पीड़ा पिछले पचास वर्षों का लेखा-जोखा, मगर पाठक थक जाता है, वह सोचता है कि इससे अच्छा कहानी ही पढ़ लेते.

मेरा ध्यान दूसरे कवियों की ओर इस दृष्टि से कम गया है, इसलिए यह बात मैंने अभी तक नोट नहीं की. फिर हम लोग पाठकों से सीधा संबंध भी नहीं रखते. जो था, वह भी टूट गया है. मैं एक पत्रिका 'किताबे जुमे' के नाम से निकालता था, जो 36 अंकों के बाद बंद हो गयी है. वाकई हमारा पाठकों से कोई संबंध नहीं है. जब था, तो भी लंबी कविताओं को मैंने देखा नहीं, मगर शाह के समय हम जो कुछ भी रचते थे, उसमें किसी घटना विशेष की ओर इशारा होता था, क्योंकि हम इतिहास लिख रहे थे और हमारे शेर गवाहीपत्र थे हमारी कौम की सहनशीलता के.

ताकि तारीखी सनद रहे!

वाकई हमारे सर पर बला थी.

फ्रेंच साहित्यिक इन्कलाब का फारसी काव्य पर कैसा प्रभाव पड़ा? यहां पर तो दूसरी भाषा एक जमाने में फ्रेंच ही थी. मेरे खयाल से इसका प्रभाव नीमा पर भी पड़ा था.

मगर एक साज कमरे के किनारे दीवार से लगा रखा है, उस पर मक्खी के बैठने से भी एक सुर निकलेगा, एक सदा बुलंद होगी, एक आवाज उभरेगी. बाहरी हर झटके पर, चाहे वह जितना भी हल्का हो, साज की प्रतिक्रिया होगी. इस एहसास को हम रस्सी में पैदा नहीं कर सकते. मेरे खयाल से आज का साहित्य समाज में अपना महत्वपूर्ण प्रभाव और स्थान रखता है. उसकी एक महत्वपूर्ण भूमिका है. हीगेल कहता है कि सुंदर चीजें अवश्य ही कारामद होती हैं, मगर मेरा कहना है कि कारामद चीजें, हो सकता है, अपने में अधिक सुंदरता रखती हों.

यह दृष्टिकोण सौंदर्यबोध रखता हो या नहीं, मगर व्यावहारिक तो है ही. यहां मैं एक प्रश्न पूछूंगी, मशरूतियत (संविधान) से पहले का फारसी काव्य कैसा था? उस पर विदेशी साहित्य का क्या असर रहा?

जैसा मैंने पहले अर्ज किया है कि हाफिज के बाद मुझे दूर-दूर तक कोई नजर नहीं आता... मिसाल के तौर पर मशरूतियत से 20 साल पहले पद्य ही नहीं, गद्य का भी बुरा हाल था. सामाजिक समस्या शायरी पर इस कदर हावी हो गयी थी कि शायरी ने घुटकर अपना नियम, रूप, उद्देश्य, चेतना, सांस्कृतिक भाव, सब कुछ खो दिया. अशरफउद्दीन हुसैनी का अखबार 'नसीमे शुमाल' हॉट केक की तरह बिकता था. उनके शेर उसमें छपते थे, छापाखाना न था, रात भर में 1000 कापियां, वह भी बड़ी बुरी छपी हुई, लोगों तक पहुंचती थीं. मगर उनके शेर समय के साथ ही खत्म हो गये.

मशरूतियत के बाद क्या बदलाव आये?

इसके फौरन बाद ही हमें नीमा मिलते हैं. नीमा के साथ एक और ग्रुप जिसने नीमा के आधुनिक काव्य के रूप को अपनाया और नीमा के इस आविष्कार को आगे बढ़ाया है.

इस इन्कलाब के बाद आधुनिक फारसी कविता में क्या तबदीलियां आयी हैं?

तबदीलियां कैसी? जो लिखा गया है, सब बकवास है.

आपको ऐसा नहीं लगता कि पिछले दो वर्षों में कहे सारे शेर, शेर कम नारे अधिक लगते हैं?

नारों से भी गये गुजरे हैं. वे नारों का भी महत्व नहीं रखते हैं. इन्कलाब के बाद का साहित्य एकदम कूड़ा-करकट है. इसका कारण है, जब हम लिखते थे आधा अपना होता था और बाकी आधा सैंसरबोर्ड को नजर में रखकर पर्दे-दर-पर्दे लिखते थे, ताकि पकड़े न जायें, दूसरे शब्दों में सैंसर एक तरह से हमारी मदद करता था.

इससे आपकी मुराद यह है कि उस समय का साहित्य अधिक अर्थपूर्ण, गूढ़ व साहित्यिक सौंदर्य से परिपूर्ण होता था?

एकदम! मैंने बड़ी से बड़ी गाली शाह को दी है, सैंसर बिना समझे छपने की स्वीकृति दे देता था. यही किताबें आठ-दस बार छपती थीं. मिसाल के तौर पर मैंने शाह के 'इन्कलाब सफीद' का मजाक उड़ाया था कि 'आधीरात को सूरज निकल आया, लोगों ने यकीन भी कर लिया. उनको किसी ने कहा, अरे अहमको, यह कौन-सा सूरज है. घड़ी देखो, अजान सुनो, दोनों ही इस सूरज को झूट बता रहे हैं.' हमारे पाठक इन गहरे नश्तरों को खूब समझते थे, (एक बेहद गहरी, खुशी से भरी हंसी) मगर सैंसर मेरे इस स्टाइल को समझ न पाया.

यह भी तो हो सकता है कि सैंसर बोर्ड के सदस्य अधिक शिक्षित न हों?

हां, यह भी एक हकीकत थी. क्योंकि जिस चीज को दुनिया समझ रही थी, उन्हें भी समझना चाहिए था. सैंसर बोर्ड का कहना था कि हमारे इस्तेमाल के लिए शब्दों का भंडार खुला है, मगर एक शब्द वर्जित है, वह है 'आजादी'

इन्कलाब के बाद काव्य की स्थिति...?

हां, लोगों ने आजादी जबर्दस्ती ली और शाह को बाहर निकाल दिया. एकदम

शामलू की तीन कविताएं

घुटन

नया चांद देखने, मैं
अकीक, सब्जी व आईने के संग
छत पर गया.

एक ठंडा हंसिया
आसमान पर उभरा
"कबूतरों की उड़ान मना है!"

सनोबर के दरख्तों ने
गुनगुनाकर कुछ कहा,
और—
इस शोर को सुन,
पहरेदारों ने तलवारें
परिंदों के गर्दन पर रख दीं.

और चांद
नहीं उगा

डर

मैं सचमुच मौत से
डरा हुआ नहीं हूं.
चाहे उसके बढ़ते हाथ
अधिक, और अधिक,
तंग हो जायें.

मेरा डर, हां मेरा डर इस
धरती पर मरने वालों से है
क्योंकि
यहां दफनाने वाले की मजदूरी
आदमी की स्वतंत्रता से अधिक है.

ढूंढ़ना, पाना,
पसंद का अधिकार,
आत्मदर्शन से
सीमा को ढूंढ़ना,
यदि मौत इन सबसे महान है
तो मैं हरगिज
मौत से नहीं डरता!

अंधेरे का गान

धरती पर
घटाओं भरी भोर
और शांत खड़ा एक सवार
घोड़े की गर्दन के
लंबे-लंबे बाल
हवा से परेशान!

खुदाया, खुदाया
यह सवार
हरगिज न ठहरे
जब कोई घटना
घटने वाली हो.

धान के जले खेत के किनारे
शांत खड़ी बाला
हवा से हिलते
उसके महीन कपड़े

खुदाया, खुदाया,
ये लड़कियां
हरगिज खामोश न हों
जब उनके मर्द
थकन और निराशा से
बूढ़े हो रहे हों.

से महसूस हुआ कि इस दौर के लिए पहली वाली भाषा-शैली अर्थहीन-सी होकर रह गयी है. उस समय काव्य संग्रह को ढूंढ़ने व खरीदने वाले आम आदमी न थे, बल्कि बुद्धिजीवी, विद्यार्थी व शिक्षित लोग थे. इस समय आवश्यकता थी कि कवि आम जनता की जबान में कुछ लिखे, इसलिए पाठक बदल गये. यह नये पाठक पहले वाले न थे. वह शहरों में हुए हादसों को भी कविताओं के द्वारा पढ़ना व जानना चाहते थे कि कहां पर कितने लोग शहीद हुए. शाह ने क्या किया वगैरह वगैरह. हमारे लिए यह सब लिखना एकाएक नामुमकिन-सा हो गया. जैसे मैं 55 वर्ष का हूं. 17 वर्ष की उम्र से मैंने शायरी करना शुरू किया था. मुझसे कैसे हो सकता है कि रातों रात मैं अपनी जबान बदल डालूं या नयी भाषा-शैली बाजार से खरीद लूं या उधार मांग लूं.

तभी आज ईरान में मुझे कई बार सुनने को मिला है कि फलां कवि या लेखक ने इन्कलाब के बाद लिखना आरंभ किया है क्योंकि वह आज की अखबारी भाषा को जानता है.

मैं नहीं समझ पाता कि लिखना एक वर्ष की अवधि में. . . कोई कितना कामयाब होगा? सफल तो आदमी तब होता है जब बरसों एक विषय पर काम करे और काम आरंभ से शुरू करे. तुम मुझसे मेरी भाषा उधार नहीं मांग सकतीं, बल्कि तुम्हें भाषा को मांजने और निखारने के लिए चालीस-पचास वर्ष रियाज करना पड़ेगा. फिर भी भाषा का सिरा ही पकड़ में आयेगा. एक दूसरी बात मेरी समझ में नहीं आती, आम आदमी के लिए लेखन का क्या अर्थ है? आम आदमी की सांस्कृतिक रुचि, पसंद के दृष्टिकोण से उनका वर्गीकरण करना पड़ेगा.

मुझे महसूस हो रहा है कि आज से दो वर्ष बाद फिर हमें फारसी का बढ़िया काव्य साहित्य पढ़ने को मिलेगा जो आज नहीं छप पा रहा है.

क्यों नहीं, दुनिया का अंत आज तो होने जा नहीं रहा है कि फैसला करना आसान होता, कौन कैसा है. मगर अभी तो अच्छे शायर आयेंगे. तब बेहतरीन साहित्य वजूद में आयेगा. अभी चंद दिन पहले एक नौजवान कवि अपने शेर दिखाने मेरे पास आया था. मैंने उससे कहा, "जब अच्छे शायर की बात चलती है तो हम हाफिज का नाम लेते हैं! क्या फारसी जबान मर गयी है जो उसका बेहतरीन शायर छह सौ वर्ष पहले का हो?" मगर भविष्य के बारे में कुछ कहना बड़ा मुश्किल काम है.

इस्माईल खुई के बारे में आपका क्या खयाल है? एक तबके विशेष में वह बहुत मान्य हैं?

उसमें दो खराबियां हैं, पहली, दर्शन का प्रोफेसर होने की वजह से शायरी में दार्शनिकता बहुत झाड़ता है, दूसरा, बोलता बहुत है. तुम खुद सोचो, 19 पन्नों की कविता किस काम की है?

यह तो मैंने कई शायरों में देखा है. शायद कहने को बहुत कुछ है, दर्द, पीड़ा पिछले पचास वर्षों का लेखा-जोखा, मगर पाठक थक जाता है, वह सोचता है कि इससे अच्छा कहानी ही पढ़ लेते.

मेरा ध्यान दूसरे कवियों की ओर इस दृष्टि से कम गया है, इसलिए यह बात मैंने अभी तक नोट नहीं की. फिर हम लोग पाठकों से सीधा संबंध भी नहीं रखते. जो था, वह भी टूट गया है. मैं एक पत्रिका 'किताबे जुमे' के नाम से निकालता था, जो 36 अंकों के बाद बंद हो गयी है. वाकई हमारा पाठकों से कोई संबंध नहीं है. जब था, तो भी लंबी कविताओं को मैंने देखा नहीं, मगर शाह के समय हम जो कुछ भी रचते थे, उसमें किसी घटना विशेष की ओर इशारा होता था, क्योंकि हम इतिहास लिख रहे थे और हमारे शेर गवाहीपत्र थे हमारी कौम की सहनशीलता के.

ताकि तारीखी सनद रहे!

वाकई हमारे सर पर बला थी.

फ्रेंच साहित्यिक इन्कलाब का फारसी काव्य पर कैसा प्रभाव पड़ा? यहां पर तो दूसरी भाषा एक जमाने में फ्रेंच ही थी. मेरे खयाल से इसका प्रभाव नीमा पर भी पड़ा था.

प्रभाव तो पड़ा था, मगर स्वयं नीमा पारनास स्कूल से प्रभावित था, न कि फ्रेंच इन्कलाबी कविताओं से. मैं नौजवानी में ही लोरका जैसे महान कवि से आशना था, लोरका स्पेनिश इन्कलाबी कवि था, जिसे 1956 में फ्रांको ने गोली से उड़ा दिया था, मगर नीमा लोरका को नहीं पहचानता था.

नीमा को छोड़कर फ्रेंच साहित्य का प्रभाव फारसी साहित्य पर किस हद तक देखते हैं?

क्यों नहीं, एक दौर था जब फारसी पत्र-पत्रिकाओं में फ्रेंच कविताओं के अनुवाद छपते थे. मगर आज फ्रांसीसी इन्कलाब को गुजरे दो सौ वर्ष हो रहे हैं. कम से कम डेढ़ वर्ष बाद तो कुछ असर उसका दिखता? इसलिए मैं कहूंगा कि फ्रेंच साहित्य का प्रभाव शून्य रहा है. नीमा के बाद बिखरे रूप में यदा-कदा ईरानी कवियों के काव्य पर फ्रांस का प्रभाव छलकता है, मगर विशेष रूप से आजरबाईजानी कवियों के लेखन में.

फारसी भाषा साहित्य अपनी मिठास, व्यापकता गहराई को लिये एशियाई भाषाओं में सबसे आगे है. इसको किसी परिभाषा की आवश्यकता नहीं है.

मेरा भी यही खयाल है.

वही स्थान फ्रेंच भाषा साहित्य का यूरोपीय भाषाओं के बीच है. आप फ्रेंच के पंडित भी हैं, उसके काव्य साहित्य के बारे में क्या खयाल है आपका?

मेरा एक फ्रेंच मित्र है, जो कवि है और 'अकस्यूनपोयत' पत्रिका का संपादक भी. उसने 'ले मांद' समाचारपत्र में एक लेख लिखा था, जिसमें एक बहस शुरू की थी—'अब फ्रांस में कविता कोई नहीं पढ़ता.' लेखक-कवि उसके बाद लिखते रहे. जबकि 1954 तक फ्रांस में यह हाल था कि कोई भी युवा, चाहे लड़का हो या लड़की, बिना काव्य संग्रह के नजर ही नहीं आता था. सबकी जेबों में एक छोटी-सी किताब हर समय पड़ी रहती थी. मगर अब यह हालत है कि काव्य संग्रह छापने वाला कोई प्रकाशक नहीं मिलेगा. अगर राजी हो भी गया तो छपाई की कीमत आपको अपनी जेब से अदा करनी पड़ेगी.

मगर क्यों?

पढ़ने के लिए कोई तैयार नहीं है.

पढ़ने के लिए तैयार न होने का अर्थ हुआ, किताब का बाजार न होना. मगर खरीदार क्यों नहीं हैं, इसका कारण?

बताता हूं. लान्स से इस समस्या को लेकर घंटों मैंने बात की थी. मेरे विचार से वास्तविकता यह है कि आज के फ्रांस में 'शान्सनाय' (तराने, गीत) ने कविता को बहुत नुकसान पहुंचाया है. इसमें शक नहीं है कि स्वयं 'शान्सनाय' अपने में एक उत्तम फ्रेंच काव्य का नमूना है. ये गीत शब्दों से नहीं, बल्कि साज से निकली धुनों, तारों के सुरों और आरकेस्ट्रा से बयान किये जाते हैं. जो पढ़ने से अधिक सुनने में लुत्फ देते हैं. इन्हीं के बीच एक बहुत ही बढ़िया आवाज भी उभरती है... □

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

हमारी कंपनी ने पूरे हिंदुस्तान में बहुत नाम कमाया है. पांच साल गारंटी का माल पहले पहल हमनें ही बनाया है. पंद्रह साल की कोशिश और तजुर्बे के बाद हमने यह माल बनाया है. हिंदुस्तान की तमाम कंपनियों में हमारी कंपनी एकदम बडी है. हमारी कंपनी के समस्त जेवरों की सूची तथा उनके मूल्य आप घर बैठे ही मुफ्त मंगा सकते हैं. हमारे बहुमूल्य केटलाग को देखकर आप अपनी मनपसंद चीज सिर्फ नंबर लिखकर वी.पी.पी द्वारा मंगा सकते हैं.

पूरे हिन्दुस्तान में हमें अनुभवी एजेंटों की जरूरत है।

MERI GOLD COVERING WORKS ESTD: 1963 TRADE MARK (346088)

P. B. NO–1405 14, RANGANATHAN STREET, T. NAGAR, MADRAS–600017. 'Ravi'

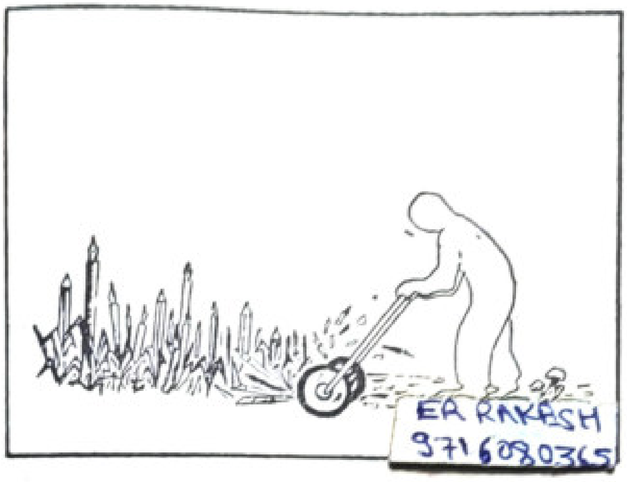
ER RAKESH
9716080365

कलम की खेती की सफाई

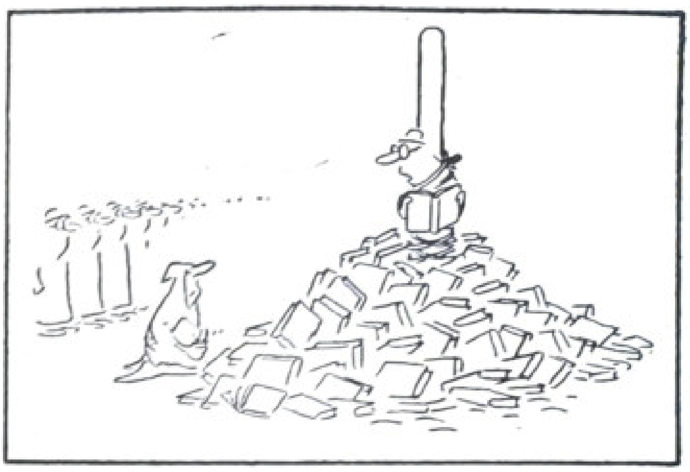

किताबों और पढ़नेवालों के लिए दोजख की आग

इसका ताल्लुक फ्रांस की मशीनी जिंदगी से भी तो हो सकता है. सुनने में समय की बचत भी होती है, तफरीह अलग हो जाती है.

नहीं, इसे तफरीह का सामान मत समझो. हां, इसे हम यूं कह सकते हैं कि फ्रेंच कविता साज के पैरों चलकर लोगों या पाठकों तक पहुंचती है.

वास्तव में फ्रेंच काव्य का कथ्य क्या है—रोमान्स, दर्शन, समाज?

हर तरह के विषयों पर कविताएं मौजूद हैं. इत्तेफाक है कि मैं जिन कवियों को जनता हूं, वे कम्युनिस्ट हैं (एक तंजभरी हल्की हंसी)

बदकिस्मती से...?

बदकिस्मती नहीं कहूंगा अपनी... (हंसी)

वहां पर मार्क्सवादी मूवमेंट कैसा है?

अन्य यूरोपीय देशों की तरह फैशन है.

सामाजिक चेतना?

मार्क्स का कहना था कि इन्कलाब अमरीका से आरंभ होगा. उसकी सारी गलतियों की लेनिन को व्याख्या देनी ग्नी. फ्रांस में आजादी है.

कैसी आजादी? क्योंकि यूरोप के देशों में फ्रांस आदर्श माना जाता है? कहीं दूर के ढोल सुहाने वाली बात तो नहीं है?

वहां वही यूरोपियन शैली की आजादी है. जो समाज को चेतना शून्य करती है, लोगों की नीम बेहोश संवेदनाओं से आदमी दूर चला जाता है, रोटी नहीं, कपड़ा, नहीं, शिकायत नहीं मगर अगर उसे कोई कम्युनिस्ट दिख जाता है तो उसे मारना वह अपना परम धर्म समझता है. वह उसे किसी भी हालत में बर्दाश्त नहीं कर पायेगा.

यूनानी भाषा साहित्य और विशेषकर उसके काव्य के बारे में आपका क्या खयाल है?

यूनानी काव्य से मेरा बहुत कम संपर्क रहा है तो भी मैंने दुनिया के बेहतरीन चार कवि, जो यूनानी हैं, उन्हें पढ़ा है. उन्हें सराहा है, जैसे जोससाफिल्स, मितिरसुस, पुल्से, इंतिस. इनमें से मैं जोससाफिल्स से बहुत प्रभावित हूं. इतना पढ़ने के बाद मैं अपने को इस योग्य नहीं पाता कि उसके भाषा-साहित्य पर टिप्पणी करूं. मेरा अध्ययन अधिक नहीं है.

अरबी कविता के बारे...

मैं एकदम कुछ नहीं जानता हूं. (शीघ्रता से बोले)

इसलिए कि...

(उसी तेजी से) नहीं, बल्कि वह नफरत जो मैं धर्म से रखता हूं, विशेषकर इस्लाम से, उसके कारण.

और ऐतिहासिक कारणों से भी... (मेरे इस तंज पर वह बहुत खुलकर हंसे) उर्दू शायरी के बारे में?

मैंने कुछ भी नहीं पढ़ा है.

मुझे अफसोस है, आपने फैज अहमद फैज को भी नहीं पढ़ा?

नाम सुना है पर दुख से मुझे कहना पड़ता है कि इस जमीन पर फारसी में कुछ काम ही नहीं हुआ है.

हिंदी कविता?

वह भी नहीं.

मुझे आश्चर्य है कि हमारा भूतकाल जितना नजदीक था, वर्तमान उतना ही दूर चला गया है. पहले पूरा बाजार यूरोपीय सेक्सी साहित्य की किताबों से भरा होता था, अब दो वर्ष से रूसी साहित्य से. मगर आप लोग भारतवर्ष को पसंद करते हैं, उसकी चर्चा करते हैं, उसको 'वफा की जमीन' कहते हैं, जहां पर माशूकों का आशिक रहता है. यहां तक कि मशहूर गीत है 'आशिक मिस्ले हिंदू'. वहां का साहित्य आपके यहां नहीं है? दुख की बात है जैसे जब मैक्सिम गोर्की को आप पढ़ते हैं तो फिर प्रेमचंद को क्यों नहीं पढ़ते. उनके लिए तो कहा जाता है कि जो कुछ आज रूसी लेखक लिख रहे हैं, प्रेमचंद ने पचास वर्ष पहले ही लिख दिया था.

अगर मुझे पता होता तो मैं स्वयं अनुवाद करता, मगर अभी देर नहीं हुई है. हम इस सिलसिले से तलाश करेंगे. □

क्या आप नये और आधुनिक बनकर जीना चाहते हैं? तो सोचिए, क्या होती है आधुनिकता!

कपड़े, फैशन पढ़ाई-लिखाई, रहन-सहन, दिमाग, शरीर, संस्कार, आदतें या मन?

नया बनकर जीना—वक्त से आगे जाकर जीना? या वक्त को मारकर जीना? या खुद को मारकर वक्त को जिंदा रखना?—ऐसे अनेक सवालों के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक तथ्यों में से आधुनिकता को रेखांकित कर रहे हैं—

सत्येंद्र शरत, हृदयेश, यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र', ऋता शुक्ल, महेंद्र मित्तल, रमाकांत श्रीवास्तव, क्रांति त्रिवेदी, प्रबोध कुमार गोविल, दीनानाथ वर्मा की सशक्त कहानियां.

पिटना एक मुख्यमंत्री का लखनऊ में

समकालीन जन-आक्रोश के संदर्भ में वाजिदअली शाह की अवध सरकार के मुख्यमंत्री की पिटाई का वो विद्रोही किस्सा....जब भरे बाजार में उसके सीने पर खंजर टिकाकर पचास हजार रुपये की फिरौती मांगी गयी!—'अनजानी इतिहास कथाएं' के अंतर्गत **बाला दुबे** की कलम से.

कम ही औरतें ऐसी होती हैं जो...

प्रेम, काम, औरत और अध्यात्म के बारे में स्वर्गीय **दिनकरजी** के विचार कि वे इनके बारे में क्या सोचते थे और क्या करना चाहते थे—**शिवसागर मिश्र** द्वारा प्रस्तुत 'दिनकरजी के संस्मरण' लेखमाला की तीसरी किस्त.

किस्से कचहरी के...

इंसाफ की आंखों पर बंधी पट्टी और हाथ का तराजू—ये सचमुच कानून का प्रतीक हैं या कहीं कोई अंधा मन-मर्जी का तोल-तोलकर कानून को टके भाव बेचे जा रहा है?—कचहरी में दिन-प्रतिदिन के क्रियाकलापों के माध्यम से देश की न्याय व्यवस्था की तस्वीर दिखा रहे हैं—**कचहरी के अड्डाधारी रघुनाथ प्यासा.**

मैं तो कहूंगा आज मॉरिशस की वेश्या भी वहां की वेश्या नहीं रह गयी!

कथाकार **अभिमन्यु अनत** से भारत और मॉरिशस की सामाजिक-राजनैतिक पृष्ठभूमि में साहित्य, भाषा, संस्कृति तथा जनजीवन के बारे में अनेक नये आयाम खोलती **अवधनारायण मुद्गल** की लंबी बातचीत.

तथा सभी स्थायी स्तंभों सहित-

सारिका

1 से 15 जून, 1981

घर और पुस्तकालय का स्थायी महत्व

अगला अंक

और जल्दी ही छप रहा है...

विशेषांकों की स्वस्थ और विकसित परंपरा में एक अनूठा तथा दस्तावेजी विशेषांक

ज़ब्तशुदा कहानी विशेषांक

देश-विदेश की वे रचनाएं जिन पर उगलियां उठीं... बिजलियां गिरीं...मगर

विस्तृत सूचना की प्रतीक्षा आपको अधिक नहीं करनी पड़ेगी...बेशक अपने एजेंट को आज ही सचेत कर दें, या हमें लिखें.

"मुझे चाहिए तो बस कॉम्प्लान® मेरे परिवार के लिए एक परिपूर्ण नियोजित आहार."

सिर्फ़ कॉम्प्लान® ही,
सबके लिए ज़रूरी २३ अत्यावश्यक पोषक तत्त्वों से परिपूर्ण है.

सिर्फ़ कॉम्प्लान में ही वैज्ञानिक अनुपात से नियोजित २३ अत्यावश्यक पोषक तत्त्व हैं, जिनकी शरीरको रोज़ाना ज़रूरत होती है... प्रोटीन्स, कार्बोहाइड्रेटस स्निग्ध-पदार्थ, विटामिन्स और खनिज-पदार्थ. यह एक ऐसा स्वास्थ्यवर्धक पेय है, जिसकी डॉक्टर अधिकतर सिफ़ारिश करते हैं

कॉम्प्लान चॉकलेट, इलायची-केसर और स्ट्रॉबेरी के स्वाद-भरे जायकों में तथा प्लेन भी मिलता है.

कॉम्प्लान®
-परिपूर्ण नियोजित आहार.

लिंटास—GLC. 10-1810 HI

सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

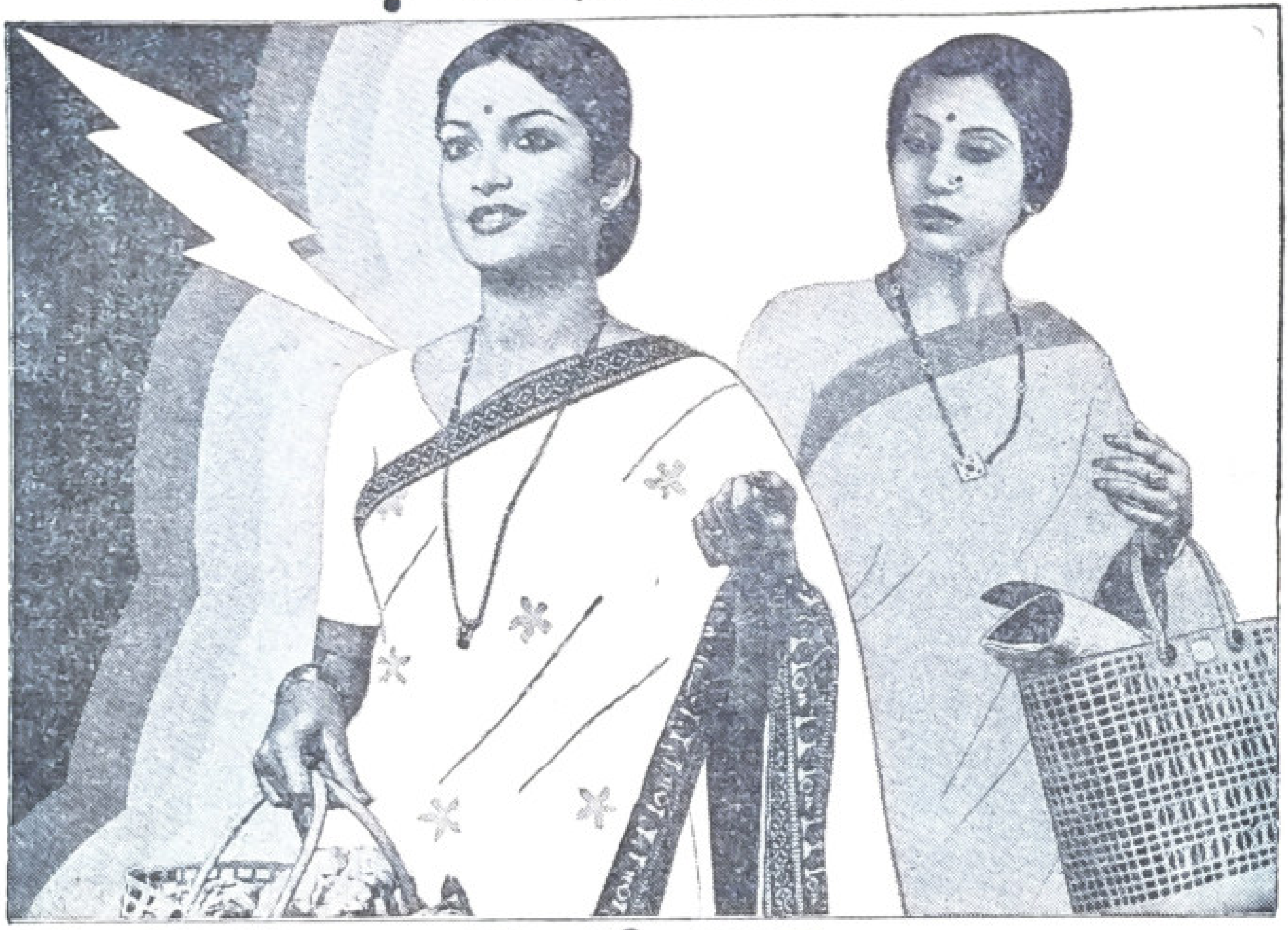

किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से ज़्यादा सफ़ेद.

सुपर रिन से नियमित धुलाई करने पर आपके कपड़ों में ऐसा फ़र्क आये कि दूर से दिखे. किसी दूसरी डिटर्जेंट टिकिया या बार के मुकाबले सुपर रिन कहीं अधिक सफ़ेदी लाता है, क्योंकि सुपर रिन में अधिक सफ़ेदी की शक्ति है.

आज़माइए और सबूत पाइए:

किसी अन्य डिटर्जेंट बार से धोया हुआ

सुपर रिन से धोया हुआ

सुपर रिन — अधिक सफ़ेदी की शक्ति से भरपूर

लिंटास-RIN.40-2519 H

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन.

साफ़, ताज़ा सांस मज़बूत, स्वस्थ दांत

कोलगेट
डेन्टल क्रीम से

हर भोजन के बाद अपने दांत कोलगेट से साफ़ कीजिए. यह ठीक उसी तरह दांतों की रक्षा करता है, जैसे दुनियाभर के दांतों के डाक्टर कहते हैं.

दांतों में छुपे हुए अन्नकणों में कीटाणु बढ़ते हैं. इनसे सांस में बदबू पैदा होती है, और दांतों में सड़न भी.

इसीलिए, हमेशा भोजन के फ़ौरन बाद कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ कीजिए. यह सांस को ताज़ा, दांतों को सफ़ेद और दांतों की सड़न रोकने में असरदार साबित हो चुका है.

देखिए, कोलगेट के भरोसेमंद फ़ार्मूले का काम :

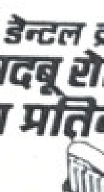

दांतों में छिपे हुए अन्नकणों में, सांस में बदबू और दांत में सड़न पैदा करनेवाले कीटाणु बढ़ते हैं.

कोलगेट का अनोखा, असरदार झाग दांतों के कोने में छिपे हुए अन्नकणों को और कीटाणुओं को निकाल देता है.

नतीजा : आपके दांत आकर्षक सफ़ेद, आपकी सांस तरोताज़ा और दंतक्षय की रोकथाम.

कोलगेट का ताज़ा पेपरमिंट जैसा स्वाद मन में बस जाता है.

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की बदबू रोकिए- दंतक्षय का प्रतिकार कीजिए...

DC. G-74 HN

बैनेट, कोलमैन एंड कं. लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए रमेशचन्द्र द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स. 10 दरियागंज, नयी दिल्ली-110002 से मुद्रित व प्रकाशित. पंजी. कार्यालय : डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड, बंबई-400001. शाखाएँ : 7, बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली-2; 139, आश्रम रोड, अहमदाबाद-9; 105/7 ए, एस. एन. बनर्जी रोड, कलकत्ता-700014. कार्यालय : 13/1, गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट, कलकत्ता-700069; 63, मोंटियथ रोड, इग्मोर, मद्रास-8; 407-1, तीरथ भवन, क्वार्टर गेट, पुणे-411002; 26, स्टेशन एप्रोच, सडबरी, वेंबले, मिडिलसेक्स, लंदन, यू. के., लंदन टेलीफोन : 01-903-9696.

पंजीयत सं. D-(C)-779
पूर्व शुल्क के बिना डाक में डालने
की अनुमति-लाइसेंस सं. U-89

MADRAS
Regn. No. G6/TN/MS(C)/4